CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला
३०३

कादम्बरी-परिशीलन

(बाणभट्ट का गद्यकाव्य : एक सरल अध्ययन)

लेखक

डॉ० त्रिभुवन मिश्र

साहित्याचार्य, एम० ए० (हिन्दी), पी-एच्० डी
श्री नेपाली संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के० ३७/११७, गोपालमन्दिर लेन

पो० बा० नं० ११२९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : { ३३३३७१
३३५२६३

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण १९९९ ई०

मूल्य ३०–००

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

३८ यू. ए., बंगलो रोड, जवाहरनगर

पो० बा० नं० २११३

दिल्ली ११०००७

दूरभाष : ३९५६३९१

*

प्रधान वितरक

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे)

पो० बा० नं० १०६९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : ३२०४०४

मुद्रक

फूल प्रिण्टर्स

वाराणसी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निवेदन

आधुनिक भौतिकवादी स्वार्थपरायण युग में कादम्बरी जैसे बहु-आयामी गद्यकाव्य ग्रन्थ के अध्ययन की महती आवश्यकता है। स्वार्थ के भयंकर विनाशकारी ताण्डव से बचने में प्राचीन भारतीय वाङ्मय ही आश्रय बन सकता है। इसीलिये आज विश्व की सभी समृद्ध भाषाओं में भारतीय प्राचीन साहित्य का अन्वेषण हो रहा है। विश्व के सामाजिक ढाँचे में बदलाव आ रहा है। प्राचीन और नवीन को एक साथ मिलाकर नये युग की रचना का श्रीगणेश हो चुका है। ऐसी परिस्थिति में साहित्यकारों का दायित्व कुछ अधिक बढ़ जाता है। उन्हें नयी दिशा का मार्गदर्शन करना है। कादम्बरी के अनेक संस्करण व अध्ययन अब तक प्रकाश में आ चुके हैं, जिनमें भारतीय व पाश्चात्य दोनों ही प्रकार के सांस्कृतिक दृष्टिकोण परिलक्षित हैं।

आजकल समीक्षा की एक नयी प्रश्नोत्तरात्मक विधा का विकास हुआ है। बहुत-से विद्वान् इसे छात्रोपयोगी एवं परीक्षोपयोगी तथा अनुचित साधन के रूप में मान्यता देते हुए हेय दृष्टि से देखते हैं। मेरा उनसे निवेदन है कि यह अध्ययन की एक समर्थ एवं बहु-आयामी विधा है। परीक्षा को दृष्टि में रखकर किया गया समीक्षात्मक अध्ययन एकाङ्गी व सीमित होता है जब कि सम्पूर्ण ग्रन्थ के विविध पक्षों को शंका-समाधान की प्राचीन पद्धति से देखना प्राचीन भारतीय पद्धति है। इसी का विकसित रूप प्रश्नोत्तरात्मक अध्ययन है। 'कादम्बरी-परिशीलन' में इसी उद्देश्य की पूर्ति का प्रयास किया गया है। परीक्षोपयोगी होना काकतालीय न्याय पर निर्भर है। अतः विद्वान् पाठकों से निवेदन है कि उसका अवलोकन समग्र दृष्टि से करें, केवल परीक्षोपयोगी करण के रूप में न लें।

प्रस्तुत संस्करण चौखम्बा सुरभारती के सौजन्य से आपकी सेवा में प्रस्तुत है। प्रश्नोत्तर तैयार करते समय संक्षिप्तता पर विशेष बल देते हुए अनावश्यक विस्तार से बचने का प्रयास किया गया है। साथ ही गद्यकाव्य के शास्त्रीय पक्ष एवं वैज्ञानिक पक्ष को समायोजित किया गया है। अब तक मेरे द्वारा अनेक प्रश्नोत्तरात्मक अध्ययन विविध साहित्यिक ग्रन्थों पर प्रस्तुत किये जा चुके हैं। उनका विद्वानों द्वारा किये गये स्वागत से उत्साहित हो यह नया

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पुष्प समर्पण कर रहा हूँ। इसके प्रकाशन में चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन परिवार का जो सक्रिय सहयोग प्राप्त हुआ है उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

अन्त में संस्कृत के विद्वान् पाठक-समुदाय से मेरा अनुरोध है कि हंस-न्याय का आश्रय ग्रहण कर अपना अमूल्य सुझाव प्रेषित करें, जिससे आगे का लेखन कार्य और उपयोगी सिद्ध हो सके।

विदुषां वशंवद

त्रिभुवन मिश्र

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भूमिका

महाकवि बाणभट्ट संस्कृत साहित्य के अमर गद्यकवि हैं। उनकी कृति कादम्बरी भारतीय स्वर्णयुग की अनुपम कृति है। जिस प्रकार कालिदास की रचना 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' सम्पूर्ण नाट्य साहित्य में अद्वितीय है वैसे ही बाणभट्ट की कृति कादम्बरी भी गद्यकाव्य में अद्वितीय है। इस ग्रन्थ में कवि ने कल्पनाओं और विविध पदावलियों द्वारा अभिनव अर्थों तथा अद्भुत रसवत्ता को साकार किया है। कादम्बरी के कथा-विधान में सप्तम शती की भारतीय संस्कृति मुखरित हो उठी है। उज्जयिनी-वर्णन, राजकुल-वर्णन, जाबालि आश्रम-वर्णन आदि गुप्तकालीन संस्कृति के प्रतीक हैं। इन वर्णनों में उस युग की स्थापत्य कला और आभ्यन्तरिक जीवन मुखर हो उठा है।

कादम्बरी में अध्यात्म तत्त्व भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान है, जिसका उल्लेख डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने ग्रन्थ 'कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन' के परिशिष्ट भाग में विस्तार के साथ किया है। बाण और कालिदास दोनों ही शिव तत्त्व के परम आराधक भक्तकवि थे। दोनों ही अपने युग को 'यद् भद्रं तन्न आसुव' का सन्देश देना चाहते थे। भारतीय परम्परा में काव्य, नाटक, कथा आदि मोक्ष और जीवन, निर्गुण और सगुण, व्यक्त और अव्यक्त, प्रेम और वासना की अति प्राचीन परिभाषाओं को अभिनव अर्थों में ढालकर नित्य तत्त्व की अभिनव व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। अर्थवती भाषा में जीव की सबसे बड़ी समस्या कामवासना और शुद्ध प्रेम के तारतम्य की पहचान की अभिव्यक्ति हुई है। जब मानव अपनी वासना के कारण सृष्टि के ब्रह्मसूत्र से विचलित हो नित्य-विधान च्युत हो जाता है तो वह अभिशप्त हो जाता है। वह शाप तपश्चर्या द्वारा ही समाप्त होता है। पुण्डरीक-महाश्वेता तथा कादम्बरी और चन्द्रापीड के प्रेमाख्यान का मूलाधार यह शाश्वत अध्यात्म ही है। वासना अनित्य है, प्रेम नित्य है। शूद्रक, वैशम्पायन, इन्द्रायुध, पत्रलेखा, चाण्डालकन्या आदि के चरित्र आध्यात्मिक अध्ययन के लिए पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत करते हैं।

काव्य और अध्यात्म का नित्य सम्बन्ध है। एक बाह्यस्वरूप है तो दूसरा आभ्यन्तरिक स्वरूप। दोनों का सम्यक् ज्ञान हुए बिना किसी कवि-हृदय का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पूर्ण परिचय नहीं मिलता। काव्यरूप जहाँ मानवी धरातल का चित्र प्रस्तु करता है, वहीं उसका अध्यात्म रूप उसके आभ्यन्तरिक देवतत्त्व की लीला का व्याख्यान करता है। मानवी रूप के घटनाक्रम अनित्य होते हैं, जबकि उसके दैवी रूप के घटनाक्रम नित्य दैवी लीला के प्रतीक हैं। कादम्बरी में दोनों क्षेत्र चरितार्थ होते हैं। भारतीय साहित्य में इन दो धरातलों को पहचाने बिना पूर्व अध्ययन सम्भव नहीं है।

कादम्बरी का कथानक—बाणभट्ट ने कादम्बरी का कथानक गुणाढ्य की 'वृहत्कथा' से लिया है। इस प्राचीन कथानक को महाकवि ने अपने अद्भुत शिल्पविज्ञान से एक देवप्रासाद का स्वरूप दे दिया है। देवप्रासादों की भाँति इस कथा में मुख्य चार भाग विद्यमान हैं। शूद्रक सभा से लेकर जाबालि आश्रम तक की कथा मुखमण्डप है जिसमें चन्द्रापीड के जन्मान्तरीय प्रतीक राजा शूद्रक विद्यमान हैं। उज्जयिनी-वर्णन से लेकर चन्द्रापीड की दिग्विजय-यात्रा तक की कथा देवप्रासाद का मुख्य भाग रंगमण्डप है। रंगमण्डप में पहुँच कर देवदर्शन की सम्भावना दृष्टिपथ में आती है। उसके आगे अच्छोद सरोवर का वृत्तान्त अन्तराल मण्डप है। यहाँ से गर्भगृह में प्रवेश होता है। अच्छोद सरोवर पर पहुँच कर पहली बार चन्द्रापीड को महाश्वेता द्वारा कादम्बरी के अस्तित्व का पता चलता है। हेमकूट का वृत्तान्त देवप्रासाद का गर्भगृह है। यहाँ कादम्बरी रूपी दिव्य ज्योति नित्य निवास करती है। इस प्रकार कादम्बरी का कथानक उस एकाश्मक देवभवन के तुल्य है, जिसका संघटन किसी विचित्र शिल्पी ने पर्वत को उकेर कर किया है। कादम्बरी के कथा-शिल्प को राजप्रासाद के शिल्प-विधान से भी मिलाकर देखा जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि महाकवि बाणभट्ट एक महान् शिल्पशास्त्री थे। कवि ने स्वर्णयुग के शोभासम्पन्न राजप्रासादों का मानों साक्षात् दर्शन सदा के लिए अपनी कादम्बरी में प्रस्तुत कर दिया है। स्थूल रूपों के निर्माण से ऊपर उठकर कवि का मूल उद्देश्य उसमें निवास करने वाले राजा-रानी, मन्त्री, राजकुमार, राजकुमारी, प्रिय सखियाँ, प्रतिहार, प्रतीहारी आदि के बाह्य व्यक्तित्व और अलंकृत रूपों का परिचय देना है। इन वर्णनों के द्वारा उस युग की मानवी सृष्टि का अन्तरंग परिचय मिलता है। किन्तु इस उ धरातल से भी ऊपर कवि का वह लोक है जिसमें इन पात्रों की पूर्ण अभिव्यक्ति उनके मानस के भावनाओं द्वारा की जाती है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कादम्बरी बाणभट्ट के परिपक्व मानस की देन है। बाण अपने सरस जीवनानुभव एवं तत्त्वावलोकन से उस आदर्श भारतीय मानव के स्वरूप थे जो जीवन-रस का आनन्द उठाने में पूर्ण विदग्ध थे। उन्होंने लोकव्यवहार की सामग्री से कथा का ठाट निर्मित करके साहित्यकार की रसानुभूति एवं कलाकार के रचनाकौशल का परिचय दिया है। कादम्बरी की कथा में प्रमुख पात्रों के चरित्र को तीन जन्मों के समय तक उठाते जाना, सारे कथानक को एक विशिष्ट केन्द्र से प्रारम्भ करके पूर्ण सन्तुलन के साथ आगे बढ़ाना और पुनः उसी विन्दु पर ले आना तथा रोचकता एवं नवीन उत्कण्ठा को सुस्थिर रखना उन्हीं जैसे विदग्ध मानव की लेखनी में सम्भव था। उस युग की कथा कहने की विशेषता का आलम्बन अथवा उपाख्यान शैली के सब रूपों का प्रयोग करते हुए उनकी अलग-अलग धारा बहाकर एक में ही सबकी व्याप्ति कर देना कादम्बरी के कथानक की महती विशेषता है।

कादम्बरी के वर्णनों का रस भी असाधारण है। इन वर्णनों के लालित्य में शिल्प-विधान का अनुपम सौन्दर्य भरा है, रसतृप्त कवि की अनुभूति और प्रत्येक धरातल पर सत्यानुसन्धान की महती शक्ति का मृद्वीका पाक है। बाणभट्ट ने समाधिजन्य तन्मयता से लालित्य के सागर में डूब कर कादम्बरी के वर्णनों की लहरें उठाई हैं। पाठकों के समक्ष उन्होंने अजन्ता आदि गुफाओं की असामान्य रूपाकृतियों का शब्दचित्र प्रस्तुत किया है। बाण के मानस का सौगन्धिक पुष्प मूलभूत भारतीय वैदिक सुरभि से ही सुरभित था। कादम्बरी की कथा में वैदिक रससत्त्व की अनुपम निधि को ही बाणभट्ट ने सुरक्षित रखने का प्रयास किया है।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपने ग्रन्थ 'कादम्बरी : एक सांस्कृतिक अध्ययन' में भूमिका भाग में कादम्बरी के समग्र अध्ययन हेतु सात आधार प्रस्तुत किये हैं जो औचित्यपूर्ण हैं। वे इस प्रकार हैं—

१. कादम्बरी का प्रामाणिक संस्करण जिसमें हस्तलिखित प्रतियों एवं प्राचीन टीकाओं की सहायता से पाठ का संशोधन किया जाय।
२. कादम्बरी का हिन्दी भाष्य जिसमें पूर्व टीकाओं की छानबीन करके श्लेषों में छिपे हुए अर्थों को पूरी तरह प्रकट किया जाय।
३. हर्षचरित की संख्या एक की भांति तैयार किया गया कादम्बरी का प्रामाणिक संस्करण।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

४. हर्षचरित की भाँति कादम्बरी की विस्तृत टीका जिसमें शब्दों
श्लिष्ट अर्थों पर भलीभाँति विचार किया जाय।

५. कादम्बरी और हर्षचरित का सम्मिलित कोश जो बाणभट्ट के शब्दा
नुक्रम कोश का काम दे सके।

६. हर्षचरित और कादम्बरी के आधार पर बाण की सम्पूर्ण सांस्कृति
निधि का ऐतिहासिक विवेचन।

७. बाण का साहित्यिक अध्ययन जिसमें रस, मनोभाव, अलंकार, वृत्ति
शैली, चरित्र-चित्रण आदि की दृष्टि से हर्षचरित और कादम्बरी
सर्वाङ्गपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया जाय।

डॉ० अग्रवाल ने इन सात उद्देश्यों में से केवल छठे उद्देश्य को के
मानकर अपना अध्ययन प्रस्तुत किया है। फिर भी अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जह
नये अनुसन्धान एवं अध्ययन की कमी रह ही जाती है। अतः कादम्बरी
अध्ययन की आवश्यकता बढ़ती ही जाती है। बाणभट्ट जैसे बहुमुखी प्रतिभ
के धनी के कोष का थाह किसी सीमित छोर से नहीं लगाया जा सकता ए
समग्र की अंजुली में भर लेना दुस्साहस ही सिद्ध होगा। इसलिए मैंने
इस कादम्बरी रूपी अथाह सागर से अपने 'कादम्बरी-परिशीलन' में अंजुल
भर जल-कण ही एकत्र किये हैं। कादम्बरी-परिशीलन में दो भाग हैं-
प्रश्नोत्तरात्मक समीक्षा भाग और मूल का व्याख्या भाग। प्रथम भाग
कादम्बरी का साहित्यिक दृष्टि से अध्ययन किया गया है जबकि द्वितीय भा
में कुछ महत्त्वपूर्ण श्लोकों एवं गद्यस्थलों की संस्कृत एवं हिन्दी में प्रचलि
परिपाटी के आधार पर व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। प्रथम भाग में शूद्रक
सभा से लेकर चन्द्रापीड और कादम्बरी के परिणय तक की कथा
आलोचना का विषय बनाया गया है जबकि व्याख्या भाग में महाश्वे
वृत्तान्त तक ही विवेचन किया गया है। इस प्रकार इस अध्ययन में सप्तम सू
की आंशिक पूर्ति का प्रयास किया गया है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ
१. संस्कृत गद्य साहित्य के उद्भव एवं विकास क्रम पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए।	१
२. बाणभट्ट के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हुए उनकी कृतियों पर संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।	८
३. संस्कृत के प्रमुख समसामयिक गद्यकारों में बाणभट्ट का स्थान निर्धारित करते हुए बाणभट्ट के गद्य की समीक्षा कीजिए।	१७
४. 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' इस कथन की तर्कसंगत पुष्टि करते हुए बाणभट्ट की काव्यशैली तथा उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण की समीक्षा कीजिए।	२८
५. कथा और आख्यायिका में भेद स्पष्ट करते हुए बाणभट्ट के दृष्टि-कोण पर प्रकाश डालिए।	३४
६. कादम्बरी के कथास्रोत की विवेचना कीजिए।	३८
७. कादम्बरी के कथाशिल्प की विवेचना कीजिए।	४४
८. बाणभट्ट के समय की सामाजिक दशा, रीति-रिवाज एवं धर्मदर्शन पर संक्षिप्त निबन्ध प्रस्तुत कीजिए।	५०
९. कादम्बरी के रस-योजना की विवेचना करते हुए अंगीरस की समीक्षा कीजिए।	५४
१०. कादम्बरी के पात्र-योजना की विवेचना करते हुए निम्न चरित्रों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए—१. शूद्रक, २. जाबालि, ३. तारापीड, ४. चन्द्रापीड, ५. शुकनास, ६. पुण्डरीक, ७. कपिञ्जल, ८. कादम्बरी, ९. महाश्वेता और १०. पत्रलेखा।	६१
११. कादम्बरी के आधार पर बाणभट्ट के प्रकृति-दर्शन की विवेचना कीजिए।	८२
१२ काव्य-कला की दृष्टि से बाणभट्ट के वर्णन-वैशिष्टय की विवेचना कीजिए।	८६

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय पृ

१३. बाणभट्ट के अलंकार-प्रयोग वैशिष्टय पर प्रकाश डालिए। ९

१४. कादम्बरी में चित्रित प्रेम-भावना की विवेचना प्रस्तुत कीजिए। ९

१५. बाणभट्ट के मानवीय सौन्दर्य-भावना की विवेचना कीजिए। ९

१६. कादम्बरी के आधार पर राजकीय शिक्षा-पद्धति पर प्रकाश डालिए। १०

१७. कादम्बरी के आधार पर अधोलिखित वर्णनों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए—१. विदिशा-वर्णन, २. विन्ध्याटवी-वर्णन, ३. पम्पा-वर्णन, ४. प्रातः-वर्णन, ५. सन्ध्या-वर्णन, ६. इन्द्रायुध-वर्णन, ७. राजकुल (अन्तःपुर) वर्णन, ८. लक्ष्मीदोष-वर्णन। १०

१. कादम्बरी-कथासारः (संस्कृत)। १२

२. कादम्बरी-कथासार (हिन्दी)। १२

प्रमुख पद्यखण्ड-व्याख्या

१. रजोजुषे जन्मनि १३

२. जयन्ति बाणासुर १३

३. अकारणाविष्कृत १३

४. कटु क्वणन्तो मल १३

५. सुभाषितं हारि विश १३

६. स्फुरत्कलालाप १३

७. हरन्ति कं नोज्ज्वल १३

८. उवास यस्य श्रुति १३

९. विवृण्वतो यस्य विसारि १३

१०. विधानसम्पादितदान १३

११. दिशामलीकालकभङ्गतां १४

१२. द्विजेन तेनाक्षतकण्ठ १४

प्रमुख गद्यखण्ड-व्याख्या

१. आसीदशेषनरपति······शूद्रको नाम। १४

२. नाम्नैव यो निर्भिन्ना······भगवतो नारायणस्य। १४

३. यस्मिंश्च राजनि······न प्रजानामासन्। १४

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विषय	पृष्ठ
४. सत्यपि रूपविलासो······निशामनैषीत् ।	१५०
५. एकदा तु नातिदूरोदिते······सविनयमब्रवीत् ।	१५३
६. अशेषजनभोग्यता······राजानमद्राक्षीत् ।	१५५
७. शरदमिव विकसित······अनिमिषलोचनो ददर्श ।	१५७
८. अस्ति पूर्वापर······पल्लवचयेन सञ्छादिता ।	१६०
९. प्रेताधिपनगरीव······मृगपतिसेविता च ।	१६१
१०. दुर्योधन इवोपलक्षित······शाल्मलीवृक्षः ।	१६४
११. निदाघदिवसमिव······सेनापतिमपश्यम् ।	१६६
१२. यत्र च मलिनता······न धनाभिमानेन ।	१७०

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

॥ श्रीः ॥

कादम्बरी-परिशीलन

(बाणभट्ट का गद्यकाव्य : एक सरल अध्ययन)

(१) प्रश्न—संस्कृत गद्य साहित्य के उद्भव एवं विकास क्रम पर ंक्षिप्त प्रकाश डालिए।

उत्तर—उद्भव एवं विकास—संस्कृत भाषा का गद्य साहित्य अपनी ॰शिष्टताओं के कारण अपनी अलग पहचान बनाये हुए है। देववाणी में द्य का अवतार वैदिक संहिताओं में सर्वप्रथम देखने को मिलता है। कृष्ण-जुर्वेद का कृष्णत्व गद्यमिश्रित होने के कारण ही माना जाता है। उस द की तैत्तिरीय संहिता में प्राचीनतम गद्य रूप का उदाहरण प्राप्त होता है। ाठक संहिता, मैत्रायणी संहिता आदि में भी गद्य की सत्ता उसी मात्रा में ॰द्यमान है। अथर्ववेद का छठा भाग गद्यात्मक ही है। इसके अतिरिक्त ा्ह्मणग्रन्थों, आरण्यकों एवं उपनिषदों में भी गद्य के प्राचीनतम रूप का ॰र्शन होता है। निरुक्त, महाभाष्य और महाभारत आदि ग्रन्थों ने संस्कृत ॰द्य को आगे बढ़ाया। आगे चलकर सैकड़ों टीकाओं, व्याख्याओं, कथाकाव्यों, ाख्यायिकाग्रन्थों और चम्पू-नाटकादि गद्य-भाषा का प्रौढ़ रूप सामने ाया। तत्त्वज्ञान सम्बन्धी दर्शनग्रन्थों, विज्ञान-विषयक ज्योतिष-ग्रन्थों ॰र भाषाशास्त्र सम्बन्धी व्याकरण के ग्रन्थों आदि में भी गद्य को विकसित ॰ने का पर्याप्त अवसर प्राप्त हुआ। यद्यपि दर्शन-ग्रन्थों में सिद्धान्त-विवेचन ॰ अवसर पर गद्य का प्रयोग मिलता है परन्तु ज्योतिष एवं वैद्यक आदि ॰ज्ञानिक ग्रन्थों में उचित अवसर प्राप्त होने पर भी गद्य दुर्लभ प्रायः ही है। ाहित्य-ग्रन्थों की भी यही दशा है। संस्कृत के लौकिक साहित्यकारों ने गद्य ॰ अपेक्षा पद्य को ही अधिक महत्त्व दिया है। अतः लौकिक साहित्य में गद्य ॰ विकास एवं प्रसार अपेक्षाकृत कम ही हो सका है।

इस प्रकार ब्राह्मणग्रन्थों से लेकर क्रमशः गद्य साहित्य विकसित होता ॰ा, उपनिषद् ग्रन्थों तक पुष्पित एवं पल्लवित होता हुआ, विकास की ओर ॰्रसर होता हुआ लौकिक साहित्य तक पहुँचा है। गद्य के स्वरूप को स्पष्ट

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करते हुए किसी लक्षणकार ने कहा है—'वृत्तगन्धोज्झितं गद्यम्' अर्थात् ऐसी रचना जिसमें वृत्त (छन्द) की गन्ध भी न हो। यह गद्यरचना क्रमशः (१) वृत्तगन्धि, (२) उत्कलिकाप्रायः, (३) चूर्णक और (४) मुक्तक के भेद से चार प्रकार की मानी गयी है। अनेक आलंकारिकों ने गद्य के दो ही भेद स्वीकार किये हैं—कथा और आख्यायिका। आख्यायिका की कथावस्तु इतिहास-प्रसिद्ध होती है जबकि कथा कविकल्पनाप्रसूत होती है। आख्यायिका का नायक स्वयं वक्ता होता है जबकि कथा का नायक स्वयं वक्ता अथवा कोई अन्य होता है। आख्यायिका का विभाजन उच्छ्वासों, तरङ्गों या अध्यायों में होता है जबकि कथा में इस प्रकार का विभाजन देखने को नहीं मिलता।

संस्कृत साहित्य में प्रारम्भिक रूप में गद्य का प्रयोग प्रायः टीका, व्याख्या और भाष्य के रूप में ही हुआ है। विशुद्ध रूप से साहित्यिक गद्य का पता शिलालेखों, अभिलेखों एवं दानपत्रों के गद्य से ही चलता है। कात्यायन (ई० पू० ३००) ने अपने वार्तिक 'आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यश्च' में कथा के लिए 'आख्यान' और 'आख्यायिका' का उल्लेख किया है। आख्यायिका का उदाहरण इतिहास को तथा आख्यान का उदाहरण पुराण को माना है। महाभाष्यकार पतञ्जलि ने (१) वासवदत्ता, (२) सुमनोत्तरा और (३) भैमरथी—इन तीन आख्यायिकाओं का उल्लेख किया है। यद्यपि इन ग्रन्थों का अब पता नहीं चलता फिर भी इनसे इतना तो पता चलता ही है कि प्राचीनकाल में गद्य का लौकिक साहित्य में प्रचलन था। बाणभट्ट ने अपने 'हर्षचरित' में किसी भट्टार हरिश्चन्द्र का गद्यकार के रूप में स्मरण किया है परन्तु इनकी कोई रचना उपलब्ध नहीं है। फिर भी कुछ प्राचीन शिलालेखों में उनकी गद्य-शैली का रूप देखने को मिलता है। १५० ई० में अंकित रुद्रदामन् के शिलालेखों की भाषा अलंकृत गद्यशैली का उदाहरण है। गुप्तकाल (४०० ई०) में अंकित एक शिलालेख बाणभट्ट की गद्यशैली से मिलती-जुलती है। वररुचि कृत 'चारुमति', रामिल-सौमिल्लकृत शूद्रककथा तथा श्रीमालिकृत तरङ्गवती प्रारम्भिक गद्य साहित्य की प्रतिनिधि रचनाएँ मानी जाती हैं। परन्तु खेद का विषय है कि इनका नामोल्लेख मात्र ही अब प्राप्य है। प्राप्त रचनाओं में दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट की रचनाएँ ही संस्कृत गद्य साहित्य की निधि हैं। इनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(१) दण्डी—संस्कृत गद्यकारों में दण्डी को सबसे प्राचीन माना जाता है। शार्ङ्गधरपद्धति में लिखित श्लोक से दण्डी की तीन रचनाओं का पता चलता है। उनमें से काव्यादर्श और दशकुमारचरित के विषय में सभी विद्वान् एकमत हैं परन्तु तीसरी रचना को लेकर विद्वानों में विवाद है। अनेक विद्वानों ने 'छन्दोविच्छिति' या 'कलापरिच्छेद' को दण्डी की तृतीय रचना माना है। डॉ० पिशेल ने 'मृच्छकटिक' को दण्डी की तृतीय रचना कहा है। कुछ विद्वान् 'मल्लिकामारुत' नाटक को दण्डी की तृतीय रचना मानते हैं परन्तु यह नाटक १५०० ई० का सिद्ध हो चुका है। भोजदेव ने 'द्विसन्धान काव्य' को दण्डी की रचना कहा है। इधर १९२४ ई० में 'अवन्तिसुन्दरी-कथा' नामक एक अपूर्ण गद्यकाव्य का प्रकाशन हुआ है जो दशकुमारचरित में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। अतः एम० आर० महोदय ने इसे ही दण्डी की तीसरी रचना माना है। जंघाल कवि की 'काव्यादर्श' की टीका में भी दण्डी की तृतीय रचना के रूप में 'अवन्तिसुन्दरीकथा' का उल्लेख मिलता है।

आचार्य दण्डी के देश-काल सम्बन्धी तथ्यों को खोज निकालने में विद्वानों के बीच बड़ा मतभेद उभर कर सामने आता है। उनके विषय में इतना सर्वसम्मत है कि वे दाक्षिणात्य और सम्भवतः विदर्भदेशीय (बरार-निवासी) थे। उनकी स्थितिकाल को लेकर बहुत विवाद है। कुछ विद्वान् उन्हें बाणभट्ट के पश्चात् आठवीं शती में मानते हैं तो कुछ सातवीं शती के उत्तरार्द्ध में। परन्तु 'दशकुमारचरित' के भौगोलिक चित्रण और राजनैतिक वातावरण के अध्ययन से पता चलता है कि यह सम्राट् हर्षवर्धन के शासनकाल से पहले के भारत का है। अतः अनेक पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वान् दण्डी का समय छठी शताब्दी मानने के पक्षधर हैं।

दण्डी सरस एवं मनोहर वैदर्भी रीति-प्रधान गद्यशैली के आचार्य माने जाते हैं। इनकी वर्णनशैली प्रभावोत्पादक, प्रसादगुणयुक्त तथा भाषा प्रवाह-पूर्ण, व्यावहारिक एवं परिमार्जित है। इनकी भाषा न तो सुबन्धु की तरह प्रत्यक्षरश्लेषमयी है, न बाण की भाँति दीर्घदीर्घतर समासबहुला एवं कृत्रिम अलंकारों के बोझ तले दबी हुई है। वाक्य छोटे-छोटे तथा ललित पदावली से सुशोभित हैं।

(२) सुबन्धु—आचार्य दण्डी के बाद कथाकाव्य (गद्यकाव्य) के

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

क्षेत्र में सुबन्धु तथा बाण में से कौन पहले हुआ, इस सम्बन्ध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद दीख पड़ता है। कुछ विद्वानों का कथन है कि सुबन्धु बाणभट्ट के परवर्ती थे। इसका आधार वासवदत्ता में इन्द्रायुध शब्द का प्रयोग तथा घटनाओं का साम्य माना है। यथा महाश्वेता तथा कादम्बरी अपने-अपने प्रेमियों के निधन पर प्राण परित्याग करने के लिए उद्यत हो जाती हैं किन्तु आकाशवाणी से सान्त्वना मिलने पर अपना इरादा बदल देती हैं। इसी प्रकार वासवदत्ता में भी अपनी प्रेयसी के खो जाने पर कन्दर्पकेतु भी प्राणोत्सर्ग की प्रतिज्ञा करता है। इससे कुछ विद्वानों का कहना है कि सुबन्धु बाणभट्ट के पश्चात् उत्पन्न हुए। परन्तु अनेक विद्वानों ने इस मत को स्वीकार नहीं किया है। म० म० काणे ने प्रमाण सहित यह सिद्ध कर दिया है कि सुबन्धु बाणभट्ट से प्रथम हुए थे तथा बाणभट्ट ने अपनी रचना हर्षचरित और कादम्बरी में जिस वासवदत्ता का उल्लेख किया है वह सुबन्धु कृत वासवदत्ता ही है। सुबन्धु ने स्वयं एक नायिका का वर्णन करते समय कहा है कि—

'न्यायस्थितिमिवोद्योतकरस्वरूपां बौद्धसङ्गतिमिवालङ्कारभूषिताम् ।'

राघवपाण्डवीय के कर्त्ता कविराज (१२वीं शताब्दी) ने 'सुबन्धुर्बाणभट्टश्च कविराज इति त्रयः। वक्रोक्तिमार्गनिपुणाश्चतुर्थो विद्यते न वा ॥' इस प्रकार कहकर वक्रोक्ति में सबसे पहले सुबन्धु का उल्लेख किया और बाणभट्ट का बाद में। डॉ० गैरोला के अनुसार उनका यह नामकरण सम्भवतः कालक्रम के अनुसार ही है। खीष्ट की आठवीं शताब्दी में वामन ने अपने काव्यालङ्कार-सूत्रवृत्ति में सुबन्धु के वासवदत्ता तथा बाणभट्ट के कादम्बरी से उदाहरण उद्धृत किया है। इसलिए इन दोनों का समय ७५० ई० के पूर्व होना चाहिए। प्राकृत काव्य 'गउडवहो' (७००–७२५) में भी सुबन्धु का उल्लेख मिलता है। बाणभट्ट ने अपनी कादम्बरी में अपनी रचना को 'अतिद्वयीकथा' अर्थात् दो कथाओं का अतिक्रमण करने वाली कथा कहा है। इसमें प्रथम कथा तो गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' जो पैशाची भाषा में रची गयी है तथा दूसरी कथा से उनका संकेत निश्चय ही सुबन्धु कृत वासवदत्ता से है। अतः सुबन्धु निश्चय ही बाणभट्ट से पूर्ववर्ती हैं।

सुबन्धु की एक मात्र रचना वासवदत्ता ही आख्यायिका अथवा कथा रूप में उपलब्ध है। इस ग्रन्थ के विषय में स्वयं उन्होंने कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चविन्यासवैदग्ध्यनिधिप्रबन्धम् ।
सरस्वतीदत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः ॥'

कवि ने श्लेष के रूप में अनेक शास्त्रीय पदार्थों का प्रदर्शन कर अपनी संस्कृत भाषा में असाधारण शक्ति दिखलायी है। उनके वाक्य भी छोटे-छोटे हैं, परन्तु कवि के प्रत्यक्षरश्लेष-प्रदर्शन की धुन के कारण रचना अत्यन्त दुरूह-सी हो गयी है। तथापि यह रचना सरस मनोहर वर्णन से परिपूर्ण और विद्वानों का मनोरञ्जन करने वाली है। सुबन्धु के स्थान के विषय में भी मतभेद है। कुछ विद्वान् उज्जैन के निवासी मानते हैं तो कुछ उन्हें काश्मीर का निवासी बताते हैं। इतना निश्चित है कि सुबन्धु अनेक विद्याओं, मीमांसा, न्याय, बौद्ध आदि दर्शनों में निष्णात थे।

(२) बाणभट्ट— संस्कृत गद्यकारों में सुबन्धु के पश्चात् बाणभट्ट का नाम आता है। श्रीहर्षवर्द्धन के सभापण्डित रूप में ख्यात दरबारी महाकवि का समय व जीवन-परिचय निश्चित व विवाद रहित है। इनकी रचना हर्षचरित के आरम्भिक उच्छ्वासों में बाण का आत्मवृत्त वर्णित है। हर्षवर्धन का समय खीष्ट ६०६ से ६४७ तक माना जाता है। अतः बाणभट्ट का यही समय है। 'हर्षचरित' के अनुसार बाणभट्ट के वंश के मूल पुरुष वत्स नामक विद्वान् ब्राह्मण थे। विन्ध्य प्रदेश के हिरण्यवाह (शोण नदी) के तीरस्थ प्रीतिकूट नामक ग्राम उनका निवासस्थान था। बाणभट्ट वात्स्यायन गोत्र में उत्पन्न कुबेर के प्रपौत्र थे। ये कुबेर गुप्त उपपद वाले राजाओं से पूजित थे। वे अर्थपति के पौत्र व चित्रभानु के पुत्र थे। उनकी माता का नाम राजदेवी था। उनके गुरु का नाम भत्सु था। बाणभट्ट एक समृद्ध परिवार में उत्पन्न हुए थे अतः बचपन में ही माता-पिता के देहान्त के पश्चात् विद्वान् बाणभट्ट बालसुलभ चपलता से देशान्तर देखने की इच्छा से पितृ-पितामहों के वैभव को भूलकर विद्याव्यासङ्ग की परवाह न कर मित्रों के साथ घर से निकलकर अनेक राजकुलों की सेवा कर बहुत समय बिताकर अपनी जन्मभूमि वापस आये और विवाह कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। बाणभट्ट की प्रसिद्धि सुनकर हर्षवर्द्धन के सहोदर भाई श्रीकृष्णवर्द्धन ने दूत भेजकर इन्हें दरबार में बुलाया, तब कान्यकुब्ज जाकर श्रीहर्ष की सभा में महाकवि पद प्राप्त किया। इन्होंने श्रीहर्ष के चरित्र का अवलम्बन कर आठ उच्छ्वासों वाली आख्यायिका हर्ष-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

चरित की रचना की। उसमें प्रथम उच्छ्वास में महाकवि के वंशवर्णन आदि कुछ विषयों का गुम्फन किया गया है।

बाणभट्ट की प्रमुख दो रचनाएँ ही प्राप्त होती हैं—हर्षचरित और कादम्बरी। इसके अतिरिक्त भोज के सरस्वतीकण्ठाभरण और शृङ्गार-प्रकाश तथा नलचम्पू के टीकाकार चण्डपाल और गुणविजयगणि द्वारा 'पद्य-कादम्बरी' और 'मुकुटताडितक' नामक नाटक इन दो रचनाओं को भी बाण द्वारा रचित कहा गया है। कादम्बरी बाणभट्ट की अधूरी रचना मानी जाती है जिसे इनके पुत्र भूषणभट्ट या पुलिन्द या पुलिन्ध्र ने पूर्ण की है। कादम्बरी का पूर्वार्द्धभाग ही बाण द्वारा रचित है। उत्तरभाग की रचना उनके पुत्र द्वारा की गयी है। इस प्रकार श्रीहर्ष के सभापण्डित होने के कारण बाणभट्ट का कवि समय ६२५ से ७०० ई० के मध्य माना जाता है। लगभग आठवीं शताब्दी तक तथा उसके बाद तक लिखे गये अनेक ग्रन्थों में बाण का और उनकी कृतियों का वर्णन मिलता है। ऐसे ग्रन्थों में रुय्यक (११५० ई०) का काव्यालङ्कारसर्वस्व, क्षेमेन्द्र की वृहत्कथामञ्जरी (१०३७ ई०), नमिसाधुकृत रुद्रट के काव्यालङ्कार की टीका (१०६९ ई०), भोजकृत सरस्वतीकण्ठाभरण (१००० ई०), धनञ्जय (१००० ई०) का दशरूपक, आनन्दवर्धन का ध्वन्यालोक (८५० ई०) और वामन (८०० ई०) का काव्यालङ्कारसूत्र उल्लेखनीय है।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार बाणभट्ट का समय सातवीं शती का पूर्वार्द्ध है। उस समय गुप्तकालीन संस्कृति पूर्ण रूप से विकसित हो अपनी सान्ध्य वेला में आ गयी थी। सातवीं शती में भी उसका बाह्य रूप भली-भाँति पुष्पित, फलित और प्रतिमण्डित था। कला, धर्म, दर्शन, राजनीति, आचार-विचार आदि की दृष्टि से बाण के अधिकांश उल्लेख गुप्तकालीन संस्कृति पर भी प्रकाश डालते हैं।

बाणभट्ट की प्रमुख गद्यकवि के रूप में प्रसिद्धि उनके कथाकाव्य कादम्बरी के कारण ही मानी जाती है। कादम्बरी एक काल्पनिक कथा है जिसमें लम्बे-लम्बे समासों के विपुल कानन हैं, तथापि यह सरस संस्कृत गद्य साहित्य का महाकाव्य ही नहीं अपितु उत्कृष्ट महाकाव्य माना जाता है। बाण की रचनाशैली, अलंकारों का चित्रण मनोरम व सतर्कतापूर्ण है। बाण के प्रकृतिचित्रण के चित्र सजीव एवं सूक्ष्म विवेचन शक्ति के परिचायक हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रमणीय अच्छोद सरोवर, हिमालय, भयावह विन्ध्याटवी, सन्ध्यावर्णन, प्रभात-वर्णन आदि प्रकृति-वर्णनों की श्लिष्टता के उदाहरण हैं। चन्द्रदेव का कहना है कि बाणभट्ट कवितारूपी विन्ध्याटवी में कविरूपी कुञ्जरों के मस्तकों को विदीर्ण करने वाले पञ्चानन (सिंह) हैं। यथा—

'श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-
ऽलङ्कारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आसर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरो बाणस्तु पञ्चाननः॥'

इस प्रकार निःसन्देह बाणभट्ट संस्कृत-गद्यसम्राट् थे जिनकी तुलना करने वाला 'न भूतो न भविष्यति' की उक्ति को चरितार्थ कर रहा है। यद्यपि बाणभट्ट के पश्चात् भी गद्य-रचना का विकास जारी रहा है परन्तु जो गद्य-साहित्य की चरमोन्नति दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट के समय हुई वह आगे नहीं हो सकी है। पं० अम्बिकादत्त व्यास और पण्डिता क्षमाराव आदि ने भी संस्कृत गद्यकाव्यों की रचना करके अपूर्व प्रतिष्ठा प्राप्त की है परन्तु वह सब बाण की शैली का अनुकरणमात्र ही कहा जा सकता है। अतः बाणभट्ट संस्कृत गद्य के सम्राट् एवं प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं।

उत्तरवर्ती गद्यकवि—उत्तरवर्ती गद्यकारों पर बाणभट्ट के प्रभाव को देखकर बाण के कृतित्व की परीक्षा सहज में निखर उठती है। इन अनुकृतियों में धनपाल (१००० ई०) की 'तिलकमञ्जरी', वादीभसिंह (११०० ई०) की 'गद्यचिन्तामणि', सोढल्ल (११०० ई०) की 'उदयसुन्दरीकथा', अगस्त्य (१४०० ई०) का 'कृष्णचरित' और वामनभट्ट बाण (१६०० ई०) का 'वेमभूपालचरित' आदि का नाम उल्लेखनीय हैं। आधुनिक युग में पण्डित हृषिकेश भट्टाचार्य (१८५०–१९१३ ई०) कृत 'प्रबन्धमञ्जरी', पण्डित अम्बिकादत्त व्यास कृत 'शिवराजविजय' के अतिरिक्त पण्डिता क्षमाराव, नासिक-निवासी पण्डित मेधाव्रत, श्रीमती राजम्मा, श्रीपादशास्त्री, श्रीनारायण खिस्ते, व्यासराय शास्त्री, महालिङ्ग शास्त्री, टी० के० गणपति शास्त्री, रामावतार शास्त्री, हंसराज अग्रवाल, मथुरादत्त दीक्षित, ब्रह्मानन्द शुक्ल आदि गद्यलेखक हुए हैं। इस प्रकार वर्तमान युग में भी संस्कृत गद्यकाव्यधारा अजस्र रूप से प्रवाहित हो रही है और भविष्य में भी उत्तरोत्तर विकास को प्राप्त करेगी।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(२) प्रश्न—बाणभट्ट के जीवन पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हुए उनकी कृतियों पर संक्षिप्त समीक्षा प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—बाणभट्ट—जीवन-परिचय—हर्षचरित के आरम्भिक उच्छ्वासों में बाण का आत्मवृत्त बड़े विस्तार के साथ दिया गया है। उसके आधार पर बाणभट्ट के असामान्य व्यक्तित्व का एक रमणीय चित्र हमारे सामने प्रस्तुत होता है। इस वंशावली के अनुसार बाणभट्ट के पूर्वज शोण नदी के तट पर रहते थे। इतिहासप्रसिद्ध च्यवन ऋषि इनके मूल पुरुष माने जाते हैं। इनके दो पुत्र भार्गव व दधीचि थे। भार्गव के पुत्र वत्स और उनके कुबेर हुए। वत्स को दधीचिपुत्र सारस्वत ने प्रीतिकूट नामक ग्राम में स्थापित कर स्वयं तपस्या का मार्ग अपनाया था। इन्हीं वत्स के अनेक वंशज हुए जिन्होंने दिगन्तव्यापी कीर्ति विद्या के द्वारा अर्जित की। वत्सकुल में उत्पन्न कुबेर नामक ब्राह्मण धन और ज्ञान में कुबेर (यक्षपति) नाम को चरितार्थ करने वाला था। कुबेर के चार पुत्र थे—अच्युत, ईशान, पाशुपत और हर। पाशुपत के अर्थपति नामक पुत्र हुआ जिसके ११ पुत्र हुए। इनमें से चित्रभानु के पुत्र बाणभट्ट थे। उनकी माता का नाम राजदेवी था। हर्षचरित में प्रस्तुत वंशावली में बाण के सगे भाइयों या बहनों का कोई परिचय नहीं है। दो पाराशव (शूद्रा माता से उत्पन्न) भाइयों मित्रसेन व चित्रसेन का अवश्य उल्लेख है। इसके अतिरिक्त चार चचेरे भाइयों गणपति, अधिपति, तारापति और श्यामल का भी प्रासङ्गिक उल्लेख मिलता है। हर्षचरित में बाण द्वारा वर्णित वंशावली इस प्रकार है—

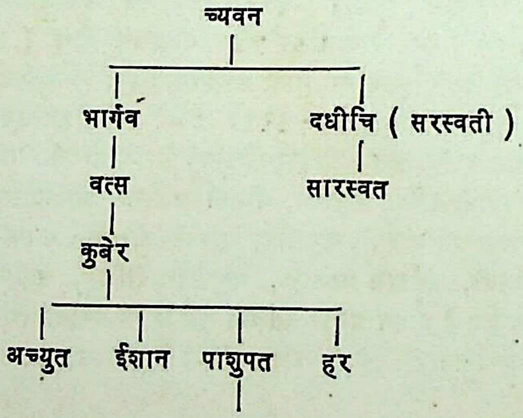

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अर्थपति

भृगु हंस शुचि कवि महीदत्त धर्म जातवेदस चित्रभानु लक्ष अहिदत्त विश्वरूप

(चित्रभानु) — बाण चित्रसेन मित्रसेन

वाणभट्ट की दूसरी रचना 'कादम्बरी' कथाकाव्य में भी बाणभट्ट के वंश का परिचय संक्षिप्त रूप में मिलता है। इसकी अनुक्रमणिका में अर्थपति को कुबेर का पौत्र न कहकर पुत्र कहा गया है। इसमें अर्थपति के अनेक पुत्रों का संकेत तो है परन्तु चित्रभानु के अतिरिक्त अन्य किसी का नाम नहीं गिनाया गया है। इन्हीं चित्रभानु के वाणभट्ट पुत्र हुए। इसमें बाण के पाराश्व भाइयों का भी उल्लेख नहीं है। इस प्रकार कादम्बरी में प्रस्तुत परिचय संक्षिप्त है।

कादम्बरी में प्रस्तुत कविवंश-प्रशंसा इस प्रकार है—

'बभूव वात्स्यायनवंशसम्भवो द्विजो जगद्गीतगुणोऽग्रणी सताम्।
अनेकगुप्तार्चितपादपङ्कजः कुबेरनामांश इव स्वयम्भुवः॥
उवास यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे सदा पुरोडाशपवित्रिताधरे।
सरस्वतीसोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे॥
जगुर्गृहेऽभ्यस्तसमस्तवाङ्मयैः ससारिकैः पञ्जरवर्तिभिः शुकैः।
निगृह्यमाणा बटवः पदे पदे यजूंषि सामानि च यस्य शङ्किताः॥
हिरण्यगर्भो भुवनाण्डकादिव क्षपाकरः क्षीरमहार्णवादिव।
अभूत् सुपर्णो विनतोदरादिव द्विजन्मनामर्थपतिः पतिस्ततः॥
विवृण्वतो यस्य विसारि वाङ्मयं दिने दिने शिष्यगणा नवा नवाः।
उषस्सु लग्नाः श्रवणेऽधिकां श्रियं प्रचक्रिरे चन्दनपल्लवा इव॥
विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्तिभिः।
मखैरसंख्यैरजयत् सुरालयं सुखेन यो यूपकरैर्गजैरिव॥
स चित्रभानुं तनयं महात्मनां सुतोत्तमानां श्रुतिशास्त्रशालिनाम्।
अवाप मध्ये स्फटिकोपलोपमं क्रमेण कैलासमिव क्षमाभृताम्॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महात्मनो यस्य सुदूरनिर्गताः कलङ्कमुक्तेन्दुकलामलत्विषः ।
द्विषन्मनः प्राविविशुः कृतान्तरा गुणा नृसिंहस्य नखाङ्कुरा इव ।।
दिशामलीकालकभङ्गतां गतस्त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः ।
चकार यस्याध्वरधूमसञ्चयो मलीमसः शुक्लतरं निजं यशः ।।
सरस्वतीपाणिसरोजसम्पुटः प्रमृष्टहोमश्रमशीकराम्भसः ।
यशोंऽशुशुक्लीकृतसप्तविष्टपात्ततः सुतो बाण इति व्यजायत ।।
द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठ्यया महामनोमोहमलीमसान्धया ।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा' ।।

ऐसा माना जाता है कि बाणभट्ट की माता का देहान्त असमय में बाल्यावस्था में ही हो गया । इन्हें माता का स्नेह भी पिता द्वारा ही मिला । किन्तु यह सुख भी अधिक दिनों तक स्थिर न रह सका और १४ वर्ष की अवस्था में ही अनाथ हो गये । बाणभट्ट के पास पैतृक सम्पत्ति बहुत थी । विद्या का भण्डार था ही । परिणामतः बाणभट्ट के साथी भी अनेक थे । इनकी मित्र-मण्डली में हर विद्याओं एवं कलाओं के निपुण लोग थे । किसी सुयोग्य अभिभावक के अभाव में बाणभट्ट ने यायावरवृत्ति अपना ली । बाण ने इस स्थान पर आत्मग्लानि प्रदर्शन हेतु 'इत्वर' शब्द का प्रयोग किया है । वस्तुतः इस इत्वरीय वृत्ति ने उन्हें देश-देशान्तर का भ्रमण कर, राजकुल से लेकर छोटे-से-छोटे वर्गों के साहचर्यों से अनेक नाटकमण्डलियों में सम्मिलित होकर ऐसे सूक्ष्म अनुभूतियों को सञ्चित करवाया कि यह सम्पत्ति उनकी कृतियों की प्राणसिद्ध हुई । बाण के दीर्घदीर्घतर वर्णनों में अनुभूति की तीव्रता एवं सम्प्रेषणशीलता रसधारा विच्छेद नहीं होने देती है । यद्यपि उस उच्चकुल के लिए बाण का यह भ्रमणशील, अस्थिर जीवन अपयश का ही कारण था, फिर भी यौवनजनित स्वच्छन्द विचार-प्रणाली ने, किसी कार्य को अतिसीमा तक कर जाने की मनोवृत्ति ने और विशाल एवं उदारहृदय ने बाण के कौलीन्य की अभेद्य दुर्गपरिखा का भी उल्लंघन करने में समर्थ बना दिया था । पितृ-पितामह द्वारा अर्जित विमल एवं अविच्छिन्न विद्या-प्रसङ्ग से वञ्चित होते हुए भी बाण ने अपने उसी भ्रमणशील जीवन में अनुभव के चार स्रोत जुटा लिये थे । उनके अनुभव के प्रथम स्रोत थे — राजकुल । उनमें घूम-घूम कर वह उनके प्रत्येक कर्मचारियों से मिलते और उनके उदार व्यवहारों से परिचित होते । दूसरा स्रोत उस समय के गुरुकुल थे जहाँ जा-जाकर उन्होंने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अध्ययन-अध्यापन की सम-सामयिक विधियों को आत्मसात् किया। तीसरा स्रोत गुणी एवं विद्वज्जनों की गोष्ठियाँ थी जहाँ शास्त्रों से लेकर तत्कालीन कर्मकाण्डप्रधान तान्त्रिक विश्वास से परिपूर्ण, बौद्धधर्म में आस्था से परिपूर्ण और अनेक सम्प्रदायों-धर्मों के विशिष्ट विश्वासों और रीतियों का ज्ञान उपलब्ध किया। चौथा स्रोत विदग्ध जनों की मण्डलियाँ, जिनमें शास्त्रचर्चा होती थीं, तर्क और विवाद होते थे, कला और काव्य का अनुशीलन किया जाता था। नाटकमण्डलियों में प्रविष्ट होकर और बाद में स्वयं नाटक सञ्चालन आदि करते हुए बाण ने सारी रसप्रक्रिया को, पाठक और कवि के सम्बन्ध को, काव्य की आत्मा को और काव्य की कला को परख लिया था—अतएव उनका गद्य कवियों की कसौटी बनकर निखरा। किसी ने बाण के गद्य का परिशीलन कर सच ही कहा—'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'।

इस प्रकार बाणभट्ट ने इत्वरीय वृत्ति द्वारा विद्याओं एवं कलाओं का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त किया। कुछ विद्वान् इस इत्वरीय वृत्ति के कारण उन पर आवारा एवं दुर्व्यसनी होने का आरोप भी लगाते हैं जो उचित नहीं प्रतीत होता। पैतृक सम्पत्ति के रूप में बाण को सरस्वती और लक्ष्मी दोनों का ही प्रचुर प्रसाद बचपन में ही सहजतया प्राप्त था। इनके पिता ने मातृहीन बालक को अपने सान्निध्य में ब्राह्मणोचित संस्कार सम्पादित कर वेद-वेदाङ्ग षड् शास्त्रों और साहित्य का अध्ययन व अनुशीलन कराकर इन्हें १४ वर्ष की अवस्था में ही गम्भीर धी, ग्राह्य और कुशाग्र बुद्धि प्रदान की थी। पिता के स्वर्गवास के पश्चात् देशान्तर भ्रमण कर आञ्चलिकों, विद्यापीठों और गुरुकुलों का अनुशीलन कर, अनेक प्रकार की गोष्ठियों में सम्मिलित होकर तथा विदग्धों की मण्डली में बैठकर बाण ने अपरिमित व्यावहारिक और सर्वाङ्गपूर्ण ज्ञान को सञ्चित किया था। दीर्घ पर्यटन के पश्चात् बाण अपने गाँव प्रीतिकूट वापस आये और विवाह कर चचेरे व सौतेले भाइयों के साथ सुखी जीवन व्यतीत करने लगे। इसी बीच महाराज श्रीहर्ष के छोटे भाई कृष्णवर्द्धन, जो इत्वरीय जीवन के मध्य इनके मित्र बन चुके थे, सम्राट् की सभा में बाण विषयक फैले दुर्वादों से क्षुब्ध हो अपना दूत भेजकर बाण को कान्यकुब्ज बुलवा लिया। बाण से प्रथम मुलाकात के समय सम्राट् श्रीहर्ष ने 'महानयं भुजङ्गः' कहकर सभा को परिचय कराया और इनका अपमान किया। इस अपमान ने बाणभट्ट के स्वाभिमान को गहरा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आघात दिया और उन्होंने प्रत्युत्तर में सम्राट् से निवेदन किया—

'देवाविज्ञाततत्त्व इवाश्रद्दधान इव नेय इवाविदितलोकवृत्तान्त इव च कस्मादेवमाज्ञापयसि, स्वैरिणो विचित्राश्च लोकस्य स्वभावाः प्रवादाश्च, महद्भिस्तु यथार्थदर्शिभिर्भवितव्यं, नार्हसि मामन्यथा सम्भावयितुमविशिष्टमिव।

ब्राह्मणोऽस्मि जातः सोमपायिनां वंशे वात्स्यायनानां यथाकालमुपनयनादयः कृताः संस्काराः सम्यक्पठितः साङ्गो वेदः श्रुतानि च यथाशक्ति शास्त्राणि दारपरिग्रहादभ्यागारिकोऽस्मि का मे भुजङ्गता।'

यह सुनकर हर्ष को वास्तविकता का ज्ञान हुआ और उसने क्षमा माँगते हुए उन्हें अपना सभापण्डित घोषित किया। सम्राट् हर्षवर्द्धन ने उन्हें 'वाग्वश्यकविचक्रवर्ती' की उपाधि से अलंकृत किया। स्वयं श्रीहर्ष भी विद्वान् एवं साहित्यमर्मज्ञ थे तथा विद्वानों का आदर करने वाले थे। बाणभट्ट बहुत दिनों तक कान्यकुब्ज में रहकर अपने गाँव प्रीतिकूट लौट आये और यहाँ आकर स्वान्तःसुखाय 'हर्षचरित' नामक आख्यायिका की रचना की। यह एक ऐतिहासिक काव्य है। ऐसी प्रसिद्धि है कि उन्होंने अपने रिश्तेदारों और मित्रों को प्रसन्न करने के लिए सर्वप्रथम अपने गाँव में ही इसका पाठ किया। उन सभी लोगों ने इस रचना को वायुपुराण के समान महान् और पवित्र रचना होने का गौरव दिया।

'हर्षचरित' की रचना ने जहाँ बाण को तुरन्त लोकप्रियता, सांसारिक वैभव और राजकीय सम्मान प्रदान किया, वहीं नायिकाप्रधान अमरकृति 'कादम्बरी' ने आने वाली पीढ़ियों के हृदय में उन्हें संस्कृत गद्य साहित्य का बिना मुकुट का सम्राट् बना दिया। बाणभट्ट कादम्बरी की रचना पूर्वार्द्ध तक ही कर सके थे कि असमय में ही उनकी मृत्यु हो गयी। उत्तरार्द्ध की रचना उनके पुत्र पुलिनभट्ट या पुलिन्द अथवा पुलिन्ध्र ने की है, जैसा कि कादम्बरी उत्तरार्द्ध के श्लोक से स्पष्ट है—

'याते दिवं पितरि तद्वचसैव सार्धं विच्छेदमाप भुवि यस्तु कथाप्रबन्धः।
दुःखं सतां तदसमाप्तिकृतं विलोक्य प्रारब्ध एष च मया न कवित्वदर्पात्॥
कादम्बरीरसभरेण समस्त एव मत्तो न किञ्चिदपि चेतयते जनोऽयम्।
भीतोऽस्मि यन्न रसवर्णविवर्जितेन तच्छेषमात्मवचसाप्यनुसन्दधानः'॥

ऐसे निःस्पृह पुत्र का साहित्य संसार नाम तक नहीं जानता। डॉ॰ बूलर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ने इनका नाम 'भूषण' या 'भूषणभट्ट' बताया है जबकि धनपाल कृत तिलक-मञ्जरी में पुलिन या पुलिन्ध्र उल्लेख मिलता है—

'केवलोऽपि स्फुरन् बाणः करोति विमदान् कवीन् ।
किं पुनः क्लृप्तसन्धानः पुलिन्ध्रकृतसन्निधिः' ।।

बाण का समय संस्कृत साहित्य के लिए बड़े महत्त्व का है। उस समय विद्वानों तथा कवियों का अच्छा जमघट था। सूर्यशतक के कर्त्ता मयूर कवि भी श्रीहर्ष के दरबार में थे। लोगों का कहना है कि बाण और मयूर के बीच श्वसुर-दामाद अथवा साले-बहनोई का रिश्ता था। मानतुङ्ग नामक भक्त जैनाचार्य भी इसी काल में थे। इनका भक्तामरस्तोत्र जैनधर्मावलम्बियों में अत्यन्त प्रसिद्ध है। थानेश्वर से दूर गुजरात की राजधानी वलभी में श्रीधरसेन के शासनकाल में भट्टिकाव्य के रचयिता भट्टिस्वामी का आविर्भाव भी इसी समय हुआ था। गौतमन्यायसूत्रों के भाष्य पर न्यायवार्तिक लिखने वाले उद्योतकर तथा दशकुमारचरित व काव्यादर्श के रचयिता कवि दण्डी भी लगभग इसी समय हुए थे। अतः स्पष्ट है कि बाण का युग संस्कृत साहित्य के इतिहास में महत्त्वपूर्ण है।

रचनाएँ—संस्कृत साहित्य में आदर्श गद्यकार व गद्यशैली को परिमार्जित रूप में प्रतिष्ठित करने वाले बाण की विश्वविश्रुत धवल कीर्ति अकेले उनके कादम्बरी के बल पर ही स्थापित थी। फिर भी कादम्बरी में जिस शाण पर तरासे हुए हीरकमणि की कान्ति, तप्तकाञ्चन की दीप्ति विद्यमान है वह निश्चय ही बिना पूर्वाभ्यास के सम्भव नहीं है। यद्यपि बाणभट्ट ने हर्षचरित और कादम्बरी इन दो ग्रन्थों का कर्त्ता ही अपनी रचनाओं में स्वीकारा है, फिर भी जनश्रुतियों एवं जिज्ञासुजनों के अनुसन्धानों से बाण के नाम से कुछ और ग्रन्थों के नाम प्रकाश में आये हैं। हर्षचरित और कादम्बरी तो निर्विवाद बाण की कृतियाँ हैं, यहाँ हम केवल बाण के नाम से प्रसिद्ध विवाद-ग्रस्त कृतियों की ही चर्चा करेंगे। बाणभट्ट के नाम से भक्तिपरक 'चण्डी-शतक', 'शिवशतक', 'पद्यकादम्बरी', 'मुकुटताडितक' और 'पार्वतीपरिणय' नामक ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है।

(१) **चण्डीशतक**—बाण को 'चण्डीशतक' का रचयिता मानने का आग्रह विशेष रूप से डॉ॰ बूलर का है, जिन्होंने चण्डीशतक की हस्तलिखित प्रति के आधार पर उसके रचयिता का नाम बाणभट्ट प्रमाणित किया है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसमें रचयिता का नाम श्रीबाणभट्ट लिखा है। भानुचन्द्र की चण्डीशतक की टीका में एक कथा भी कल्पित है कि जब मयूर भट्ट ने कुष्ठ रोग से मुक्ति पाने हेतु सूर्यशतक की रचना की और रोग से मुक्ति प्राप्त कर ली तो बाणभट्ट ने स्वयं ही अपने हाथ-पैर काट लिये और चण्डीशतक की रचना से पुनः हाथ-पाँव प्राप्त कर लिया। इन दो प्रमाणों के अतिरिक्त भी परवर्ती काव्यशास्त्र में चण्डीशतक के कई श्लोक बाणभट्ट के नाम से उद्धृत किये गये हैं। इनमें सरस्वतीकण्ठाभरण, काव्यप्रकाश, काव्यानुशासन, अमरुकशतक की अर्जुनदेव की टीका, श्रीधरदास की सयुक्तिकर्णामृत, शार्ङ्गधरपद्धति, हीर कवि की सुभाषितहारावली और सुभाषितरत्नभाण्डागारम् प्रमुख हैं। प्रो० सी० वी० काणे भी चण्डीशतक का रचयिता बाणभट्ट को ही मानते हैं। दुर्गा के प्रति बाण की भक्ति हर्षचरित और कादम्बरी दोनों में ही मिलती है, इसलिए यह स्वाभाविक है कि बाण ने पृथक् रूप से केवल चण्डी की आराधना में एक गीतिकाव्य की रचना की हो। दूसरी ओर चण्डीशतक की रचना के लिए किसी अन्य कवि ने अपने नाम का दावा भी नहीं किया है। चण्डीशतक में जिस ओजगुणप्रधान समासबहुला, श्लिष्टसम्पृक्त पदावली का प्रयोग हुआ है वह भी तत्कालीन गद्यकाव्य की विशेषता है जो परम्परा से गीतिकाव्यों में चल पड़ी थी तथा जो बाणभट्ट की दोनों कृतियों में अपनायी गयी है। अतः चण्डीशतक को निर्विवाद रूप से बाणभट्ट की रचना माना जा सकता है।

(२) **शिवशतक व शारदचन्द्रिका**—'शिवशतक' और 'शारदचन्द्रिका' नामक बाणभट्टकृत दो ग्रन्थों के उद्धरण शारदातनय के 'भावप्रकाश' और धनञ्जय के दशरूपक में मिलते हैं। शिवशतक भगवान् शिव की आराधना में लिखा गया स्तोत्र गीतिकाव्य है और शारदचन्द्रिका चन्द्रापीड को उद्देश्य कर लिखा नाटक प्रतीत होता है। सम्प्रति ये दोनों ग्रन्थ लुप्त हैं, अतः इनके विषय में कुछ अधिक नहीं कहा जा सकता। बाणभट्ट शैव थे, अतः शिव आराधना में पृथक् ग्रन्थ लिखना कोई बड़ी बात नहीं थी।

(३) **पद्यकादम्बरी**—पद्यकादम्बरी के रचयिता के रूप में बाणभट्ट का नामोल्लेख सर्वप्रथम क्षेमेन्द्र (११०० ई०) ने अपने 'औचित्यविचारचर्चा' नामक ग्रन्थ में किया है। उसके अनन्तर बाण के ही नाम से 'सुभाषितावली' में संगृहीत १०८७ वाँ पद्य वही है जो औचित्यविचारचर्चा में क्षेमेन्द्र

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ने बाण के नाम से उद्धृत किया है। पीटर्सन ने भी पद्यकादम्बरी की कुछ और पंक्तियों को भी सुभाषितावली में उद्धृत होने का प्रमाण देते हुए निष्कर्ष निकाला है कि पद्यकादम्बरी की रचना बाणभट्ट ने गद्यकादम्बरी से पहले की होगी। काव्यचमत्कार और वर्णन-निपुणता में गद्यकादम्बरी के उत्कृष्ट सिद्ध होने से पद्यकादम्बरी की ख्याति काल के गर्त में विलुप्त हो गयी और गद्यकादम्बरी ही कीर्तिशरीर से बाण की अमर रचना हो गयी। कुछ विद्वान् 'पद्यकादम्बरी' के अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न भी लगाते हैं और बाण के नाम से ऐसी किसी रचना से इनकार करते हैं। जो भी हो जब तक उसका पूर्ण रूप प्राप्त न हो, अन्तःसाक्ष्यों के आधार पर बाण की शैली के साथ उसकी एकात्मकता की समीक्षा नहीं की जा सकती।

(४) **मुकुटताडितक**—'मुकुटताडितक' नामक नाटक का एक श्लोक त्रिविक्रमभट्ट के नलचम्पू पर गुणविनयगणि की टीका में बाण के नाम से उद्धृत है। गुणविनयगणि और चण्डपाल की इस सूचना के अतिरिक्त इस नाटक के विषय में और किसी प्रकार का संकेत परवर्ती अलंकारशास्त्र के ग्रन्थों में नहीं मिलता है। नलचम्पू के प्रथम उच्छ्वास में त्रिविक्रम भट्ट ने बाण और गुणाढ्य का नाम आदरपूर्वक लिया है। अस्तु, प्रतिपक्ष में प्रमाणान्तर बाध होने से यह स्वीकार किया जा सकता है कि 'मुकुटताडितक' नाटक बाणभट्ट की ही रचना है जो सम्प्रति अनुपलब्ध है।

(५) **पार्वतीपरिणय**—'पार्वतीपरिणय' नाटक के लेखकत्व को लेकर विद्वानों में अत्यधिक विवाद है। प्रो० कीथ, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल, श्रीजयकिशोर नारायणसिंह साहित्यालंकार, श्री र० व० कृष्णमाचारी, श्री आर० स्मिट्, के० टी० तैलंग, श्रीमती नीता शर्मा और डॉ० विजयलक्ष्मी त्रिवेदी आदि सभी विद्वान् इसे १५वीं सदी की वामनभट्ट बाण की रचना मानते हैं। केवल पी० वी० काणे महोदय ने इसके बाणभट्ट की रचना होने की सम्भावना से इनकार नहीं किया है।

(६) **हर्षचरित**—सम्राट् हर्षवर्द्धन की प्रशंसा में लिखित हर्षचरित की रचना आठ उच्छ्वासों में विभक्त है। स्वयं बाणभट्ट ने अपनी रचना 'हर्षचरित' की आख्यायिका में कहा है—

'तथापि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लावनचापलम्' ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हर्षचरित का आरम्भ बाणभट्ट ने शिव की स्तुति करते हुए किया है। इसके पश्चात् इक्कीस श्लोकों में व्यास, भट्ट हरिश्चन्द्र, सातवाहन, प्रवरसेन, भास, कालिदास आदि की प्रशंसा की है। बृहत्कथा, वासवदत्ता आदि के सत्कवियों की प्रशंसा की और असत्कवियों की तीव्र भर्त्सना भी की है। प्रथम उच्छ्वास में बाणभट्ट ने अपने वंश की उत्पत्ति आदि का विस्तार से वर्णन किया है तथा अपना चरित प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय उच्छ्वास के पूर्वभाग तक बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया है। चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम उच्छ्वास में सम्राट् हर्षवर्द्धन के वंश-परिचय, शौर्य, औदार्य आदि गुणों की चर्चा की है। अष्टम उच्छ्वास में बहन राज्यश्री को खोजने के लिए स्वयं श्रीहर्ष ने विन्ध्याटवी में प्रवेश किया और राज्यश्री को खोजते हुए भिक्षु दिवाकर मित्र के आश्रम में गये। उसी समय एक भिक्षु ने प्रवेश करके कहा कि एक परम सुन्दरी रमणी शोक से अग्नि में प्रवेश होकर आत्महत्या करने के लिए उद्यत हो रही है। यह सुनकर श्रीहर्ष उस भिक्षु को साथ लेकर राज्यश्री के प्राणों की रक्षा करने में सफल हो गये। राज्यश्री को साथ लेकर सम्राट् हर्षवर्द्धन सेना में लौट आये। बाणभट्ट ने यहीं पर हर्षचरित को अधूरा छोड़ दिया है। बाणभट्ट को इतिहास की अपेक्षा काव्यकला से अधिक अनुराग था, इसीलिए उन्होंने इतिहास के समान समस्त घटनाओं का वर्णन न करके काव्योचित चरित्र को ही ग्रहण किया है।

(७) **कादम्बरी**—बाणभट्ट की यह असाधारण रचना 'कादम्बरी' संस्कृत साहित्य का सर्वश्रेष्ठ महागद्यकाव्य है। यदि गद्यकाव्यों के लक्षणों के आधार पर कादम्बरी की समीक्षा करें तो कादम्बरी में कथा का लक्षण पूर्ण रूप से घटित होता है। बाणभट्ट की प्रथम रचना हर्षचरित एक ऐतिहासिक रचना है किन्तु कादम्बरी पूर्णतया काल्पनिक साहित्यिक रचना है। कुछ विद्वानों का विचार है कि कादम्बरी बाणभट्ट की मौलिक रचना न होकर गुणाढ्य की बृहत्कथा से ली गयी है। इसमें पात्रों के नाम परिवर्तित कर दिये गये हैं। स्थान-परिवर्तन के अतिरिक्त घटना में साम्य है। बृहत्कथा में राजकुमारी मकरन्दिका को निषादकन्या होने का श्राप मिलता है जिसे सुनकर उसके पिता दुःखी हो प्राण त्याग कर देता है। अगले जन्म में वह शुक (तोता) होता है और अपने पूर्वजन्म की कथाओं तथा अनुभवों को सुनाता है। कादम्बरी में भी महाश्वेता अज्ञानतावश वैशम्पायन को शुक

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होने का श्राप देती है और वह शूद्रक के दरबार में तीन जन्मों की कथा का वर्णन करता है। इसी आधार पर कादम्बरी को वृहत्कथा का अनुकरण माना जाता है। यहाँ यह विचारणीय है कि बाणभट्ट ने भले ही कथा का आधार बृहत्कथा से लिया हो परन्तु बाणभट्ट की कादम्बरी संस्कृत गद्य साहित्य में एक मौलिक एवं उत्कृष्ट रचना है। यद्यपि आज बृहत्कथा का मूल रूप प्राप्त न होकर उसका रूपान्तर ही प्राप्त होता है फिर भी उस रूपान्तर को देखने से स्पष्ट हो जाता है कि जो मनोरंजन की कोमल शैली मानवीय भावों का, प्रकृति के मनोहर एवं उदात्त रूपों का, राजाओं की समृद्धि का, तपोवन की पवित्रता का एवं जीवनोपयोगी भावों का चित्रण करने के लिए बाणभट्ट के द्वारा अपनायी गयी है, उसका उसमें सर्वथा अभाव है। बाणभट्ट ने कादम्बरी में अपने समय तक प्रचलित सभी साहित्यिक विशेषताओं को अपनी शैली में समुचित आदर दिया है। कालिदास की उपमा, भारवि के अर्थगौरव, दण्डी के पदलालित्य, सुबन्धु के प्रत्यक्षरश्लेष, समासबहुत्व आदि को अपनी शैली में निखार दिया है। इन समस्त विशेषताओं को देखते हुए ही परवर्ती साहित्यशास्त्रियों ने 'वाणी वाणो बभूव ह' और 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' तथा 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' आदि उक्तियों में प्रशंसा की है। वास्तव में पद्यकाव्य रचना की अपेक्षा गद्यकाव्य में समस्त काव्योचित गुणों का समायोजन कर ब्रह्मानन्दसहोदररसास्वाद की अनुभूति कराना अत्यन्त दुष्कर है जिसे बाणभट्ट ने अपनी प्रतिभा से सुकर सिद्ध कर दिया है। अतः कादम्बरी संस्कृत साहित्य की अनुपम मौलिक कृति है।

(३) प्रश्न—संस्कृत के प्रमुख समसामयिक गद्यकारों में बाणभट्ट का स्थान निर्धारित करते हुए बाणभट्ट के गद्य की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—गद्य-रचना और रचनाकार—वैदिक काल से आरम्भ कर मध्यकाल तक गद्य के विकास का इतिहास बड़ा ही मनोरम है। इस काल में गद्य के दो रूप मिलते हैं—वैदिक काल का सीधा-सादा बोल-चाल का संवादात्मक गद्य तथा लौकिक साहित्य का प्रौढ़, समासबहुल गाढबन्ध वाला गद्य। दोनों प्रकार के गद्यों की अपनी विशिष्टता एवं मोहकता है। वैदिक गद्य में सीधेसादे छोटे-छोटे शब्दों के प्रयोग के साथ 'ह', 'उ', 'वै' आदि अव्यय वाक्यालंकार के रूप में प्रयुक्त दीख पड़ते हैं। इनके प्रयोग से वाक्य में रोचकता तथा सुन्दरता का समावेश हो जाता है। उदाहरणों का प्रयोगाधिक्य देखा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाता है। संस्कृत गद्य की प्रमुख विशेषता है—लाघव या लघुता। अन्य भाषा माध्यमों में पूरे वाक्य में अभिव्यक्त किये जाने वाले मनोभावों को संस्कृत गद्य के समासगुम्फित एक ही पद में व्यक्त किया जा सकता है। समास संस्कृत भाषा का प्राण है। उसने अधिक-से-अधिक अर्थ को कम-से-कम शब्दों में अभिव्यक्त करने की अद्भुत योग्यता प्रदान की है। ओजगुण के कारण संस्कृत गद्य में विचित्र प्रकार की भावाभिव्यक्ति, भावग्राहिता और गाढ़बन्धता का संचार होता है जिससे गद्य का सौन्दर्य खिल उठता है। संस्कृत गद्य की यह विशिष्टता अति प्राचीनकाल से चली आ रही है। इसका सद्भाव प्रथम तथा द्वितीय शताब्दी के शिलालेखों में प्रचुरता से पाया जाता है। पश्चिमी भारत के प्रसिद्ध क्षत्रप रुद्रदामन् के शिलालेख को पढ़ने पर यह जान पड़ता है कि हम बाणभट्ट की शैली से प्रभावित गद्य पढ़ रहे हैं, परन्तु यह शिलालेख बाणभट्ट के प्रादुर्भाव से लगभग पाँच सौ वर्ष पहले उट्टंकित किया गया था। हरिषेण की प्रयाग-प्रशस्ति का गद्य भी इसी प्रकार प्रौढ़ समासबहुल तथा उदात्त है। विजयस्तम्भ के वर्णन में कवि की यह उक्ति विदग्धों को सदा चमत्कृत करती रहेगी—

"सर्वपृथिवीविजयजनितोदयव्याप्तनिखिलावनितलां कीर्तिमितस्त्रिदशपति भवनगमनावाप्तललितसुखविचरणमाचक्षाण इव भुवो बाहुरयमुच्छ्रितः स्तम्भः।"

वैदिक तथा लौकिक गद्य साहित्य को मध्य में मिलाने का कार्य पौराणिक गद्य करता है। यह गद्य नितान्त आलंकारिक व प्रासादिक है। श्रीमद्भागवत तथा विष्णुपुराण का गद्य इसका स्पष्ट उदाहरण है। इसमें साहित्यिक गद्य का समग्र सौन्दर्य विद्यमान है। भागवत का गद्य नितान्त प्रौढ, अलंकृत तथा भावाभिव्यंजक है। विष्णुपुराण से प्राचीन गद्य का एक उदाहरण—

"यथैव व्योम्नि वह्निपिण्डोपमं त्वामहमपश्यं तथैवाद्याग्रतो गतमप्यत्र भगवता किञ्चिन्न प्रसादीकृतं विशेषमुपलक्ष्यामीत्युक्ते भगवता सूर्येण निजकण्ठा दुन्मुच्य स्यमयन्तकं नाम महामणिमवतार्य एकान्ते न्यस्तम्।" (४।१३।४)

शिलालेखों में रुद्रदामन् १५० ई० के शिलालेख का गद्य भी नितान्त प्रौढ़, आलंकारिक तथा हृदयाकर्षक गद्यकाव्य का चित्र प्रस्तुत करता है—

"प्रमाणमानोन्मान-स्वरगतिवर्ण-सारसत्त्वादिभिः परमलक्षणव्यञ्जनैरु

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तैकान्तमूर्तिना स्वयमधिगत-महाक्षत्रपनाम्ना नरेन्द्रकन्यास्वयं वरानेकमाल्य-प्राप्तदाम्ना महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना सेतु सुदर्शनतरं कारितम्'।

दर्शन-ग्रन्थों का गद्य यद्यपि अर्थ-प्रकटन योग्यता को लक्ष्य कर रचा गया है उनमें शब्दगत चारुत्व का अभाव है, फिर भी इन दार्शनिकों के बीच कुछ ऐसे भी दार्शनिक हुए हैं जिनका गद्य विशुद्ध साहित्यिक गद्य के समान रस-पेशल तथा सुन्दर बन पड़ा है। ऐसे शास्त्रकारों में पतञ्जलि, शबरस्वामी, शंकराचार्य और जयन्त भट्ट का नाम प्रमुख रूप से उल्लेख किया जाता है। पतञ्जलि की भाष्य लिखने की गद्यशैली विलक्षण है। उनकी भाषा बोल-चाल और शैली में कथोपकथन की रीति है। उनके गद्य की रमणीयता का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

'ये पुनः कार्याभावा निवृत्तौ तावत् तेषां यत्नः क्रियते। तद् यथा घटेन कार्यं करिष्यन् कुम्भकारकुलं गत्वाह—कुरु घटं कार्यमनेन करिष्यामीति। न तद्वच्छब्दान् प्रयुयुक्षमाणो वैयाकरणकुलं गत्वाह—कुरु शब्दान् प्रयोक्ष्य इति। तावत्येवार्थमुपादाय शब्दान् प्रयुज्यते।' (पस्पशाह्निक)

शबरस्वामी प्रौढ मीमांसक है जिन्होंने कर्ममीमांसा के सूत्रों पर अपना प्रसिद्ध भाष्य लिखा। उनकी शैली भी सीधी-सादी तथा रोचक है—

'इच्छयात्मानमुपलभामहे। कथमिति? उपलब्धपूर्वे ह्यभिप्रेते भवतीच्छा। यथा मेरुमुत्तरेण यान्यस्मज्जातीयैरनुपलब्धपूर्वाणि स्वादूनि वृक्षफलानि न तानि प्रत्यस्माकमिच्छा भवति।' (१।१।१५)

शंकराचार्य के गद्य की सुषमा सारगर्भित वाक्य, प्रौढ़ तथा प्राञ्जल अभिव्यक्ति के कारण विलक्षण है। वाचस्पति मिश्र ने उनके गद्य को प्रसन्न-गम्भीर की संज्ञा दी है। उनके गद्य में वीणा की मधुर झंकार सुनायी पड़ती है। साहित्यिक माधुर्य तथा प्रसाद से पेशल यह गद्य संस्कृत भारती का सौन्दर्य है। एक सारगर्भित वाक्य का उदाहरण—

'नहि पद्भ्यां पलायितुं पारयमाणो जानुभ्यां रंहितुमर्हति।'

अर्थात् पैरों के बल भागने में समर्थ व्यक्ति को घुटनों के बल रेंगना शोभा नहीं देता। ब्रह्मसूत्र, गीता और उपनिषदों पर लिखा गया भाष्य उनकी गद्य-रचनाचातुरी का परिचायक है। इस उदाहरण में आचार्य की गद्य-सुषमा की असामान्य हृदयग्राहिता नितरां अवलोकनीय है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'सर्वो हि पुरोऽवस्थिते विषये विषयान्तरमध्यवस्यति युष्मत्प्रत्ययापेतस्य च प्रत्यगात्मनोऽविषयत्वं ब्रवीषि। उच्यते—न तावदयमेकान्तनाविषयः, अस्मत्-प्रत्ययविषयत्वात्। न चायमस्ति नियमः पुरोऽवस्थित एव विषये विषयान्तर-मध्यवसितव्यमिति। अप्रत्यक्षेऽपि हि आकाशे बालास्तलमलिनताद्यध्यवस्यन्ति।'

जयन्तभट्ट न्यायशास्त्र के विख्यात आचार्य हैं। इनकी 'न्यायमञ्जरी' न्यायदर्शन का प्रामाणिक ग्रन्थ है। इनका गद्य बड़ा ही सुन्दर, सरल तथा प्राञ्जल है। इन्होंने अपनी रोचक तथा सरल मनोहारि शैली के द्वारा न्याय जैसे कठिन एवं नीरस विषय को भी सरस एवं सुबोध बना दिया है। इनके गद्य का एक उदाहरण—

"आः क्षुद्रतार्किक ! सवर्थानभिज्ञोऽसि, ब्रह्मैव जीवात्मनो नहि ततोऽन्ये। न हि दहनपिण्डाद् भेदेनापि भान्तः स्फुलिङ्गा अग्निस्वरूपा भवन्ति। तद् किं ब्राह्मण एवाविद्या ? न च ब्रह्मणोऽविद्या।"

गद्यकाव्य का उदय—संस्कृत में गद्यात्मक कथाओं का उदय विक्रम से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व ही हो चुका था। कात्यायन ने ४।२।६० सूत्र के अपने वार्तिक (आख्यानाख्यायिकेतिहासपुराणेभ्यश्च) में आख्यान और आख्यायिका का उल्लेख अलग-अलग किया है। इन दोनों में स्वरूपतः भिन्नता का कोई परिचय नहीं मिलता, परन्तु कोई भेद उस युग में अवश्यमेव था। पतञ्जलि ने 'यवक्रीत', प्रियंगु तथा ययाति का आख्यान के उदाहरण में तथा वासवदत्ता, सुमनोत्तरा और भैरवी का आख्यायिका के रूप में नामनिर्देश किया है। काशिका में भी इन्हीं नामों का उल्लेख इस सूत्र की व्याख्या में मिलता है। ये रचनाएँ लुप्त हो चुकी हैं, इसलिये इनकी प्रामाणिकता व विशेषताओं के विषय में कुछ भी पता नहीं चलता।

इस प्रकार यद्यपि दण्डी, सुबन्धु और बाणभट्ट से पूर्व ही संस्कृत में गद्य साहित्य का उदय हो चुका था, परन्तु कालगति के कारण उन गद्यकारों के नाम और उनकी कृतियाँ प्राप्त न होने के कारण प्रामाणिक तौर पर कुछ कहना अत्यन्त कठिन है। गद्यसम्राट् बाणभट्ट ने स्वयं अपने खण्डकाव्य 'हर्षचरित' में भट्टार हरिश्चन्द्र नामक गद्यकवि के नाम का उल्लेख किया है लेकिन उनकी कोई रचना प्राप्त नहीं है; फिर भी इतना तो निश्चित है कि बाणभट्ट से भी पूर्व अवश्य गद्यरचना का कोई क्रम था और गद्यरचना क्रम का परिमार्जित रूप इन गद्यकवियों की गद्यरचना में प्राप्त होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वस्तुतः कोई भी साहित्यिक रचना स्वयं स्वतन्त्र रूप से सहसा उत्पन्न नहीं होती। उसके पृष्ठभाग में पूर्ववर्ती रचना अथवा समकालीन रचना अथवा लोककथा एवं लोकप्रथा आदि के कारण अवश्य विद्यमान रहते हैं। गद्यरचना के मूल में भी ये कारण अवश्य रहे होंगे। अतः लोककथा एवं नीतिकथा आदि गद्य-साहित्य की पृष्ठभूमि का आधार ग्रहण करके संस्कृत गद्य-साहित्य धारा प्रवाहित हुई है। गद्य साहित्य के उन्नायकों में प्राप्त रचनाकारों दण्डी, सुबन्धु और वाणभट्ट का नाम मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं। इनमें दण्डी का समय विद्वानों ने वाणभट्ट के वाद निश्चित किया है। गद्य-विकास की दृष्टि से यह क्रम इस प्रकार है—

१. सुबन्धु—वासवदत्ता।
२. बाणभट्ट—हर्षचरित-कादम्बरी।
३. दण्डी—काव्यादर्श व दशकुमारचरित, अवन्तिसुन्दरीकथा।

सुबन्धु—गद्यकाव्यलेखकों में सुबन्धु की रचना वासवदत्ता ही सर्वप्रथम रचना प्रामाणिक रूप से प्राप्त होती है। प्राचीन समय में वासवदत्ता की प्रेमगाथा लोक में प्रसिद्ध थी। किन्तु इस गद्यकथा में कवि ने लोकविश्रुत वासवदत्ता की प्रेमकथा के साथ कोई सम्बन्ध न रखते हुए इस कथा को अपनी बुद्धि एवं प्रतिभा के बल पर अनेकानेक रूढ़ियों का आश्रय कर उत्पन्न किया है। इस रचना में सुबन्धु का काव्यसौष्ठव एवं वर्णन-शैली ही मुख्य है। कथा अत्यन्त लघु कलेवर वाली है परन्तु कवि ने सुन्दर वर्णनों से इस कथा में प्राण सञ्चार कर दिया है। सुबन्धु अपने वर्णन-चातुरी के लिए ही साहित्य में विख्यात हैं। इनकी रचना की प्रशस्ति में किसी विद्वान् ने कहा है—'प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चविन्यासवैदग्ध्यनिधि प्रवन्धम्।' इस प्रतिज्ञा का सुचारु रूप से सुबन्धु ने वासवदत्ता में पालन किया है। इनके गद्यशैली का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

'नन्दगोप इव यशोदयान्वितः, जरासन्ध इव घटितसन्धिविग्रहः, भार्गव इव सदानभोगः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः सुमन्त्राधिष्ठितश्च, दिलीप इव सुदक्षिणयान्वितः रक्षितगुश्च, राम इव जनितकुशलवयोरूपोच्छ्रायः।'

यह महाराज चिन्तामणि का यश-वर्णन है। इस ग्रन्थ (वासवदत्ता) में भले ही शब्दचमत्कार अत्यधिक मात्रा में विद्यमान हो परन्तु बुद्धितत्त्व, रागात्मक तत्त्व, कल्पनातत्त्व, विचारमार्मिकता और अर्थौचित्य का अनेक स्थलों

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पर स्खलन सहृदयों को खटकता है। अनेक स्थलों पर श्लेष की प्रसन्नता भी तिरोहित हो गयी है। कवि प्रकृतिचित्रण (वन, नदी, पर्वत, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि) में अपना पाण्डित्य-प्रदर्शन व नानाविध अलंकारों के प्रयोग के मोह में कथावस्तु की उपेक्षा कर बैठा है। नायक-नायिका के प्रेम-चित्रण आदि के प्रसङ्ग में श्लेष, विरोधाभास, परिसंख्या आदि अलंकारों का पर्याप्त निरूपण कथावस्तु के अन्य भावात्मक तत्त्वों को विस्मृत व उपेक्षित कर देता है। चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी वासवदत्ता एक सफल रचना नहीं मानी जा सकती। काव्य का प्राणतत्त्व रसोद्रेक माना गया है। सुबन्धु ने शब्द-चमत्कार और अलंकारप्रियता के कारण रसपरिपाक को भी उपेक्षित कर दिया है। वासवदत्ता में प्रेमाकुल वासवदत्ता की दशा-वर्णन का एक उदाहरण देखिए—

'हृदये विलिखितमिव, उत्कीर्णमिव, प्रसुप्तमिव, कीलितमिव, निगलितमिव, वज्रघटितमिव, अस्थिपञ्जरप्रविष्टमिव, मर्मान्तरस्थितमिव, मज्जारसगलितमिव, प्राणपरीतमिव, अन्तरात्मानमधिष्ठितमिव, रुधिराशये द्रवीभूतमिव, पललसविभक्तमिव, कन्दर्पकेतुं मन्यमाना उन्मत्तेव, अन्धेव, वधिरेव, मूकेव, शून्येव, निरस्तेन्द्रियग्रामेव, मूर्च्छागृहीतेव ग्रहग्रस्तेव·········वासवदत्ता सखीजनेन समं मुमूर्च्छं।'

इस स्थल पर सुबन्धु की काव्यकला श्रृंगार रस के परिपन्थि विभावादिकों एवं असंगत वर्णनों से ग्रस्त है तथा अनौचित्य दोष उपस्थित होता है। अलंकार-योजना प्रशंसनीय होते हुए भी पाण्डित्य-प्रदर्शन की छाप होने के कारण अर्थबोध में बाधा उत्पन्न करता है। सुबन्धु की रचना को समझने के लिए दर्शन, इतिहास, पुराण, काव्यशास्त्र आदि विविध शास्त्रों में सर्वप्रथम वैदुष्य प्राप्त करना होगा। वस्तुतः सुबन्धु की वासवदत्ता सहृदय कवियों के लिए न होकर शास्त्रपण्डितों के सम्मुख अपना पाण्डित्य-प्रदर्शन के लिए रची गयी जान पड़ती है। अलंकारों की झड़ी एवं उपमाओं के वैविध्य को प्रगट करने हेतु सुबन्धु ने प्रकृतिचित्रण को भी कृत्रिम स्वरूप दे दिया है। यथा—

'अथ वासरताताम्रचूडचूडाचक्राकारः, चक्रवाक-हृदय-संक्रामितसन्तापतयेव मन्दिमानमुद्वहन् अन्तर्गिरिमन्दारस्तवकसुन्दर·········कनकदर्पण इव प्रतीचीविलासिन्या·········भगवान् दिनमणिः·········ममज्ज।'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उपर्युक्त सूर्यास्त-वर्णन के प्रसङ्ग में वर्णित प्रकृति के शोभन व अशोभन दोनों पक्षों का एकत्र वर्णन मात्र पाण्डित्य-प्रदर्शन के लिए ही है। वस्तुतः सुबन्धु ने अपनी प्रत्यक्षरश्लेषमयी वर्णनाशक्ति के द्वारा अलंकारजन्य चमत्कार-चित्रण में पूर्ण सफलता प्राप्त की है।

परन्तु जहाँ सुबन्धु ने अपने श्लेष-प्रेम का परित्याग कर काव्य-प्रणयन किया है वहाँ उनकी शैली रोचक होने के साथ ही काव्यरसिकों का पर्याप्त मनोरञ्जन भी करती है। सुबन्धु कोमलकान्त पदावली की पद्य-रचना में भी निपुण हैं। सत्कविता की यह स्तुति उनकी कोमलकान्त पदावली की द्योतक है-—

'अविदितगुणापि सत्कवि-भणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम्।
अनधिगतपरिमलापि हि हरति दृशं मालती-माला॥'

वासवदत्ता की कल्पनाओं का प्रभाव परवर्ती कवियों पर भी देखने को मिलता है। विरह-दुःख की अवर्णनीयता की कल्पना महिम्न स्तोत्र के एक सुप्रसिद्ध श्लोक में ज्यों-की-त्यों मिलती है। सुबन्धु की यह प्रसन्नश्लेषमयी वाणी आलोचकों के लिए अत्यन्त आह्लादजनक है—

'विषधरतोऽप्यतिविषमः खल इति न मृषा वदन्ति विद्वांसः।
यदयं नकुलद्वेषी स कुलद्वेषी पुनः पिशुनः॥'

सुबन्धु के प्राकृतिक दृश्य चित्रण अत्यन्त मनोरम एवं हृदयस्पर्शी हैं। प्रभात-वर्णन इसका स्पष्ट उदाहरण है। कुन्तक के विचित्र मार्ग का सुन्दर उदाहरण सुबन्धु की वासवदत्ता ही मानी जा सकती है। बाणभट्ट द्वारा की गयी वासवदत्ता की समीक्षा सुबन्धु के प्रगाढ पाण्डित्य की द्योतक है—

'कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम्॥'

सुबन्धु और बाणभट्ट की शैली में महान् अन्तर है। बाण ने अक्षराडम्बर की अपेक्षा स्निग्ध, रसपेशल पाञ्चाली शैली को अपना कर सुबन्धु की गद्य-शैली को परिमार्जित किया है। दण्डी से भी सुबन्धु का पार्थक्य स्पष्ट है। दण्डी जैसी तीव्र निरीक्षणशक्ति और यथार्थवादी शब्द-विन्यास का अभाव वासवदत्ता की लोकप्रियता में बाधक होने में पर्याप्त हेतु है। यद्यपि सुबन्धु, बाणभट्ट और कविराज ये तीनों ही वक्रोक्तिमार्ग के निपुण कवि कहे गये हैं,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri

परन्तु बाण की कादम्बरी के सामने वासवदत्ता का काव्य पण्डितों की गोष्ठी का ही केवल विषय है, विद्वानों की गोष्ठी से उसका सीधा सम्पर्क नहीं जुटता है।

बाणभट्ट—बाणभट्ट ने सुबन्धु की अलंकृत गद्यशैली में रसपेशलता, भाव एवं रसानुभूति का सामञ्जस्य तथा पदलालित्य का मणिकाञ्चन संयोग बनाकर एक नवीन गद्यशैली का विकास किया है। इनकी रचना में पद-लालित्य की समुचित अभिव्यक्ति तथा दीर्घकाय समास, श्लेष, यमक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के चित्रण के साथ ही रस, भाव आदि का स्पष्ट परिपाक प्राप्त होता है। बाणभट्ट ने कलापक्ष के साथ ही हृदयपक्ष की रमणीयता का पूर्णरूप से ध्यान रखा है। यही कारण है कि बाण की गद्यशैली परम्परागत होने पर भी नूतन गद्यशैली स्वीकार की जाती है। बाणभट्ट का जीवन-परिचय उनकी रचनाओं हर्षचरित व कादम्बरी में विस्तार के साथ प्राप्त होता है। ये सम्राट् हर्षवर्द्धन के सभापण्डित थे, अतः इनका समय सप्तम शताब्दी का पूर्वार्द्ध मान्य है।

रचनाएँ—बाणभट्ट की प्रमुख दो रचनाएँ ही प्राप्त हैं—हर्षचरित और कादम्बरी।

इन दो रचनाओं के अतिरिक्त बाणभट्ट की कृतियों के रूप में—(१) चण्डीशतक, (२) पार्वतीपरिणय, (३) पद्यकादम्बरी और (४) मुकुट-ताडितक नाटक का नाम भी विभिन्न विद्वानों ने उल्लेख किया है परन्तु इन पुस्तकों के अप्राप्य होने के कारण इनकी प्रामाणिकता में सन्देह है। निस्सन्देह बाणभट्ट का हर्षचरित और कादम्बरी ही प्रतिष्ठा के हेतु रूप में विख्यात हैं। इन कथाकाव्यों की संक्षिप्त समीक्षा यहाँ प्रस्तुत है।

(१) **हर्षचरित**—इस खण्डकाव्य में सम्राट् हर्षवर्धन का चरित्र उच्छ्-वासों में वर्णित है। इसे स्वयं बाणभट्ट ने आख्यायिका नाम से अभिहित किया है—

'तथापि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम् ॥'

हर्षचरित का आरम्भ बाणभट्ट ने शिव की स्तुति से की है। इसके पश्चात् इक्कीस श्लोकों में व्यास, भट्टार हरिश्चन्द्र, सातवाहन, प्रवरसेन, भास, कालिदास आदि कवियों की प्रशंसा की है। बृहत्कथा, वासवदत्ता आदि के

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सत्कवियों की प्रशंसा और असत्कवियों की तीव्र भर्त्सना भी की है। प्रथम उच्छ्वास में अपने वंश की उत्पत्ति का विस्तार से वर्णन किया है तथा अपना जीवन-चरित प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय उच्छ्वास के दूरस्थ भाग तक विस्तार-पूर्वक किया है। चतुर्थ, पञ्चम, षष्ठ तथा सप्तम उच्छ्वास में हर्षवर्धन के वंश-परिचय, शौर्य, औदार्य आदि गुणों का विस्तार से वर्णन किया गया है। अष्टम उच्छ्वास में सम्राट् हर्षवर्धन अपनी बहन राज्यश्री को तलाश करते हुए विन्ध्य के जंगलों में भटकते हुए बौद्धभिक्षु दिवाकर मित्र के आश्रम में पहुँचता है। वहाँ अपनी बहन का पता न मिलने से अत्यन्त दुःखी होता है। उसी समय एक भिक्षु आकर एक सुन्दरी रमणी के अग्नि-प्रवेश द्वारा आत्म-हत्या के प्रयास की सूचना देता है। यह सुनकर हर्ष उस भिक्षु के साथ उस स्थल पर जाकर अपनी बहन राज्यश्री को आत्महत्या जैसा जघन्य पापकर्म करने से रोकने में सफल होता है और उसे साथ लेकर अपने शिविर में लौट आता है। बाणभट्ट ने हर्षचरित को यहीं पर अधूरा छोड़ दिया है।

बाणभट्ट ने अपने चचेरे भाई श्यामल के आग्रह पर इसके कुछ ही अंशों को सुनाया था। कथा सुनाने से पूर्व बाणभट्ट ने कहा था—'कः खलु पुरुषायुषशतेनाऽपि शक्नुयादविकलमस्य चरितं वर्णयितुम् ? एकदेशे तु यदि कुतूहलं वः, सज्जा वयम्।' बाणभट्ट वस्तुतः एक कलाकार थे, इतिहासकार नहीं। इसीलिए हर्षवर्धन के प्रारम्भिक जीवन की घटनाओं का काव्यमय वर्णन करके ग्रन्थ को अधूरा ही छोड़ दिया।

(२) **कादम्बरी**—कादम्बरी बाणभट्ट की संस्कृत गद्य-साहित्य की अनुपम एवं सर्वश्रेष्ठ रचना मानी जाती है। यह एक पूर्णतया काल्पनिक कथा है। कादम्बरी का मूल स्रोत गुणाढ्यकृत वृहत्कथा के कथान्तरों में राजा सुमनस् की कथा को माना जाता है। कादम्बरी में बाणभट्ट ने भारतीय संस्कृति के विविध चित्रों का और भारतीय विविध विशेषताओं का स्पष्ट चित्र अंकित किया है। इसमें लौकिक एवं दिव्य दोनों प्रकार के पात्र हैं। पुनर्जन्म का समर्थन, आस्तिकता, देवता, गुरु, मुनि, ब्राह्मण आदि के प्रति पूर्ण श्रद्धा व्यक्त है। दैवीय सहायता से कठिनाइयों को पार करने का समर्थन किया गया है। भारतीय मान्यता के आधार पर जीवन में निराशा, असन्तोष; दुःख, दैन्य आदि की अपेक्षा आशा, विश्वास, आनन्द आदि को ही प्रमुख स्थान दिया गया है। इसीलिए कादम्बरी में महाश्वेता और कादम्बरी दोनों

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पात्रों की निराशा आशा में; तारापीड, चित्ररथदेव, हंस, शुकनास आदि का दुःख आनन्द में और पात्रों की असफलताएँ सफलता में परिवर्तित होती देखी जाती हैं। कादम्बरी पूर्णरूपेण एक सुखान्त कथाकाव्य है।

बाण की गद्यशैली—बाणभट्ट की गद्यकृति में तत्कालीन गद्यशैलियों का समन्वयात्मक एवं परिमार्जित रूप देखने को मिलता है। बाणभट्ट ने अपनी गद्य-रचना में भाव एवं कला दोनों पक्षों का समन्वयात्मक रूप उपस्थित करते हुए स्वयं कहा है—

'नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽश्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुर्लभम्'॥

यद्यपि बाणभट्ट पाञ्चाली गद्यरीति के प्रवर्त्तक हैं परन्तु उन्होंने समयानुसार अन्य गद्यरीति का भी समादर किया है। कोमलकान्त पदावली का प्रयोग प्रकृति-वर्णन में द्रष्टव्य है—

'उत्फुल्लकुमुदकुवलयकह्लारम्—अनेकजलचर-पतङ्ग-शत-सञ्चलन-चलित-वाचालवीचिमालम्—'। विन्ध्याटवी, शबरसेनापति, चण्डिकामन्दिर आदि के वर्णन में विषय के अनुरूप कठोर दीर्घकाय समासयुक्त वाक्यावली का प्रयोग करके अद्भुत कल्पनाशक्ति एवं प्रकाण्ड पाण्डित्य का परिचय दिया है। उपदेश जैसे अवसर पर समासरहित अथवा लघुकाय समासयुक्त, प्रसादगुण-युक्त, सरस, सरल एवं स्वाभाविक वाक्यावली का प्रयोग किया गया है। श्लेष, उपमा, उत्प्रेक्षा, यमक, अनुप्रास, परिसंख्या, विरोधाभास, सहोक्ति आदि अलंकारों का बाणभट्ट ने सफलतापूर्वक प्रयोग कर अपने उत्कृष्ट गद्यशैली को निखार दिया है। समालोचकों ने इसीलिए उनकी प्रशंसा में—'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्', 'बाणस्तु पञ्चाननः' और 'बाणी बाणो बभूव ह' आदि प्रशस्ति गायी हैं।

दण्डी—'अवन्तिसुन्दरी' कथा के अनुसार दण्डी कविश्रेष्ठ भारवि के वंश में उत्पन्न हुए थे। भारवि के तीन पुत्रों में मध्यम पुत्र मनोरथ के चार पुत्रों में सबसे छोटे पुत्र वीरदत्त के पुत्र रूप में कवि दण्डी का जन्म हुआ था। इनकी माता का नाम गौरी था। बचपन में ही माता-पिता के स्वर्गवास हो जाने पर काञ्ची में निराश्रित रहने लगे थे। काञ्ची-विप्लव के समय शहर छोड़कर जंगलों में भटकते फिरे। शान्ति स्थापित होते ही पुनः काञ्ची वापस आकर पल्लवनरेश नरसिंह वर्मा द्वितीय (६९०–७१५ ई०) की सभा में

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रहने लगे थे। इस कथा के आधार पर दण्डी की जन्मभूमि काञ्ची (वर्तमान काञ्जीवरम्) है। इनका समय सातवीं सदी का उत्तरार्द्ध तथा आठवीं सदी का प्रथम भाग माना जाता है।

ग्रन्थ—राजशेखर ने अपने प्रख्यात पद्य में दण्डी के तीन ग्रन्थों के अस्तित्व का स्पष्ट निर्देश किया है—

'त्रयोऽग्नयस्त्रयो देवास्त्रयो वेदास्त्रयो गुणाः।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः॥'

दण्डी की प्रबन्धत्रयी में काव्यादर्श निर्विवाद रचना है। दूसरी रचना 'दशकुमारचरित' सन्देहों एवं विवादों के घेरे में घिरी हुई है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने इसे दण्डी की रचना न मानकर किसी अन्य की रचना (१७वीं शती से पूर्व) मानी है। उन्होंने दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका में वर्णित 'अवन्तिसुन्दरी कथा' को ही दण्डी की द्वितीय रचना स्वीकार किया है। तीसरी रचना का उल्लेख भोजराज के शृंगारप्रकाश में 'द्विसन्धानकाव्य' नाम से प्राप्त होता है। अतः कवि दण्डी के तीन प्रबन्ध क्रमशः काव्यादर्श, अवन्तिसुन्दरीकथा और द्विसन्धानकाव्य माने जाते हैं। सम्प्रति अवन्तिसुन्दरीकथा स्वतन्त्र रूप से प्राप्त न होकर दशकुमारचरित के पूर्वपीठिका रूप में ही प्राप्त होती है तथा दशकुमारचरित ही दण्डी के दूसरे प्रबन्ध रूप में ख्यात है।

दण्डिनः पदलालित्यम्—साहित्यिक दृष्टि से दण्डी की रचना दशकुमारचरित एक श्लाघनीय कृति मानी जाती है। यह आख्यान काव्य का एक उज्ज्वल दृष्टान्त है। इसके पात्र जीते-जागते जगत् के प्राणी हैं और शिष्ट हास-परिहास तथा मधुर व्यंग्य के आश्रय में इनका चित्रण हुआ है। कथानक में पारस्परिक मनोरम सामञ्जस्य पाया जाता है। वर्णन की स्वल्पता न तो कथानक के प्रवाह को रोकती है, न ही अवान्तर कथाएँ मुख्य कथा में किसी प्रकार का अवरोध खड़ा करती हैं। दण्डी की गद्यशैली बड़ी ही सरल, सुबोध तथा प्रवाहमयी है। उनका गद्य श्लेष के बोझ से अनाक्रान्त व समास की प्रताड़ना से मुक्त, प्रतिदिन के व्यवहार योग्य, सजीव व चुस्त है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, पद का लालित्य तथा दैनन्दिन प्रयोग की क्षमता दण्डी की गद्यशैली की प्रमुख विशेषताएँ हैं। दण्डी ने सुबन्धु और बाण की गद्यशैलियों का अनुगमन न कर अपनी स्वतन्त्र गद्यशैली आविष्कृत

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की है। इन्होंने बाणभट्ट का अनुगमन अन्य जगहों पर भले ही किया हो परन्तु गद्यशैली में बाण द्वारा विकसित पदलालित्य को ही अपना प्रधान लक्ष्य बनाया है। इसीलिए समालोचकों में यह उक्ति प्रख्यात है—

'उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम्।
दण्डिनः पदलालित्यम् माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥'

दण्डी के प्राचीन आलोचक इन्हें वाल्मीकि और व्यास की कोटि में रखते हुए तृतीय कवि मानते हैं। यथा—

'जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवी इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि ॥'

अपनी व्यावहारिक शैली के लिए कवि दण्डी संस्कृत साहित्य में नित्य स्मरणीय हैं। संस्कृत-कोशों में व्यावहारिक प्रयोग के परिचायक शब्दों को सर्वप्रथम दण्डी ने भाषा में प्रयोग कर संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाने का प्रयास किया। उपहस्तिका (पनडब्बा), मलमल (लंगोटी), उद्गमनीय (एक जोड़ी धोती), उदश्वन (पानी निकालने का पात्र या डोल), किशारु (भूसी), कालशेय (तक्र-छाछ), मद्गु (युद्धपोत) तथा पञ्चवीर-गोष्ठ (पंचायत या जनपदीय सभा) जैसे शब्दों को व्यावहारिक रूप प्रथमतया दण्डी ने ही प्रदान किया है। अतः अत्युक्तियों को अर्थतः न लेकर पर्यवेक्षण किया जाय तो निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि—'कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी बभूव ह' की उक्ति उचित ही है।

(४) प्रश्न—'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' इस कथन की तर्कसंगत पुष्टि करते हुए बाणभट्ट की काव्यशैली तथा उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—बाणभट्ट की काव्यशैली—आधुनिक गवेषणाओं से यह सिद्ध हो चुका है कि पतञ्जलि के समय तक अलंकृत गद्यशैली में संस्कृत में रोमांच-कथाओं और वीरगाथाओं की परम्परा अवश्य विकसित हो चुकी थी। परन्तु ऐसी कृतियों के अनुपलब्ध होने के कारण बाणभट्ट को ही इन काव्य-रूपों का प्रवर्त्तक माना जा सकता है। काव्य-कला के बारे में बाण से पूर्व की कोई भी प्रामाणिक कृति उपलब्ध नहीं होती। भरतमुनि का नाटचशास्त्र अवश्य बाण से प्राचीन है, परन्तु उसमें केवल नाट्य-रूपों का ही निरूपण है

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और उसमें गद्य-साहित्य के काव्य-रूपों की उपेक्षा कर दी गयी है। भामह और दण्डी की कृतियों में गद्य-साहित्य तथा उसके विभाजन सम्बन्धी काव्य-नियम बाण की दो महान् रचनाओं के आधार पर ही स्थापित हैं। बाणभट्ट ने स्वयं हर्षचरित की पद्यमय प्रस्तावना में तत्कालीन स्वीकृत शैलियों का विवेचन करते हुए वक्रोक्तिपूर्ण रचना को श्लाघनीय कहा है। उनके अनुसार काव्य का हर वर्ण गुम्फित लयात्मक पदों में ऐसा बँधा होना चाहिए कि नये तथा अनपेक्षित अर्थों के कारण श्रोता स्वयं विस्मित हो जाय। इसके लिए समास एवं विविध अलंकारों के समुचित प्रयोग के साथ ही कौतुक एवं रोमांस के भावों को जगाने वाले वहुअर्थी काव्य-आसंगों को भी प्रयुक्त करना आवश्यक होता है। यहाँ पर बाणभट्ट के साहित्य सम्बन्धी कुछ विचार हर्षचरित और कादम्बरी से उद्धृत हैं—

'सन्ति श्वान इवासंख्याः जातिभाजो गृहे गृहे।
उत्पादका न वहवः कवयः शरभा इव॥'

अर्थात् कवि कहलाने वाले लोगों की संख्या घर-घर में पालतू कुत्तों के समान तो अधिक है जो केवल चापलसी (प्रशंसा या मनोविनोद हेतु) काव्य करते हैं, परन्तु शरभ के समान नवसृजन करने वाले कवियों की संख्या अधिक नहीं होती। इसी प्रकार उन्होंने अपने समय की प्रचलित चार रीति (गद्यशैली या काव्यरीति) का भी विवेचन किया है—

'श्लेषप्रायमुदीच्येषु प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम्।
उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु गौडेष्वक्षरडम्बरः॥'

बाणभट्ट के अनुसार किसी भी उत्कृष्ट एवं महान् काव्य-रचना में निम्न पाँच तत्त्वों का होना अनिवार्य है—

'नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम्॥'

कथा की प्रशंसा में वाण ने उसे आनन्दमयी सुन्दर शय्या की उपमा देते हुए कहा है—

'सुखप्रबोधललिता सुवर्णघटनोज्ज्वलैः।
शब्दैराख्यायिका भाति शय्येव प्रतिपादकैः॥'

इससे पता चलता है कि गद्यरूपों का भी महाकाव्यों की भाँति शिक्षा और

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मनोरञ्जन—दुहरा प्रयोजन था। गद्यलेखक ने गद्य को अलंकृत गद्यशैली में लिखकर महाकवि का सम्मान प्राप्त किया, यह कम महत्त्व की बात नहीं है। अभिजातवर्ग का विश्वास है कि शैलीकार के रूप में गद्यलेखक महाकवियों की तुलना में अधिक प्रभावशाली हैं। यह अत्यन्त परिष्कृत और अलंकृत शाब्दिक कला तत्कालीन भारतीय मूर्तिकला के समकक्ष है।

चित्रण की प्रभावशालिता तथा सजीवता बाणभट्ट की गद्यशैली का प्राण है। उन्होंने इसके लिए उपरोक्त चारों शैलियों से भिन्न किन्तु चारों के सम्मिश्रण युक्त पाँचवीं अपनी शैली का विकास किया है जिसे राजशेखर ने पाञ्चाली रीति कहा है। राजशेखर ने पाञ्चाली रीति का व्याख्यान इस प्रकार किया है—

'शब्दार्थयोः समो गुम्फः पाञ्चाली रीतिरिष्यते।
शिला-भट्टारिका वाचि बाणोक्तिषु च सा यदि॥'

पाञ्चाली शैली का प्राण है—वर्ण्य-विषय के अनुरूप ही पदों का विन्यास करना। जैसा अर्थ वैसा शब्दचयन। बाणभट्ट ने इसका पूर्ण रूप से पालन किया है। उन्होंने प्रसङ्गानुकूल दीर्घसमास वाली ओजोगुण से मण्डित उत्कट पदावली वाली गौडी शैली के साथ ही समासरहित ललित छोटे-छोटे वाक्य-युक्त प्रसादगुणविशिष्ट शैली का भी प्रयोग किया है। बाणभट्ट किसी एक शैली के कभी भी क्रीतदास नहीं बने अपितु शैली ही उनकी दासी बनी रही। प्रकृति-चित्रण भी मनोभावाभिव्यक्ति के अनुरूप किया गया है। विन्ध्याटवी वर्णन तथा सन्ध्या वर्णन में दीर्घ समासों की छटा है तो विरह-वर्णन के अवसर पर छोटे ललित पदों की झड़ी लगी है। पम्पा सरोवर का वर्णन बाणभट्ट की कोमलकान्त पदावली का उत्कृष्ट उदाहरण है—

'उत्फुल्लकुमुदवलयकल्हारम् अनेकजलचरशतसञ्चालनचलितवाचालवीचि-मालम्'।

इसी तरह प्रकृति का उग्र रूप भी उनकी लेखनी से उत्कट कठोर पदावली के रूप में चित्रित है। ग्रीष्म ऋतु की प्रचण्डता का निरूपण करते हुए उन्होंने कहा है—

'रुधिराहुतिभिरिव पारिभद्रमस्तवकवृष्टिभिस्तर्पयन्तस्तारवान् विभावसून् ... ... दावदहनपच्यमानचटकाण्डखण्डखचिततरुकोटरकीटपटलपुटपाकगन्ध-कटवः।'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यद्यपि बाणभट्ट की रचना में दीर्घकाय समासों का बाहुल्य दीख पड़ता है और कहीं-कहीं तो कई पृष्ठों के बाद क्रियापद का दर्शन होता है परन्तु यह स्थिति सर्वत्र नहीं प्राप्त होती। दीर्घकाय समास आवश्यकतानुसार ही प्रयुक्त हैं। राजप्रासाद, उज्जयिनी, विन्ध्याटवी, सन्ध्या, निशा, इन्द्रायुध, महाश्वेता, कादम्बरी एवं अन्य श्लिष्ट वर्णनों के लिए जहाँ दीर्घसमास का प्रयोग हुआ है वहीं उपदेश, मानवीय भावना का चित्रण एवं विरह-वर्णन आदि के लिए लघुकाय, सरल व सुमधुर पदावली का प्रयोग किया गया है। हृदय के भावों को व्यक्त करने के लिए समास-रहित छोटे वाक्यों का गुम्फन अत्यधिक प्रभावशाली बन गया है। कपिञ्जल ब्रह्मचारी पुण्डरीक की मदनव्यथा से संतप्त होने के अवसर पर अत्यन्त सरल किन्तु मर्मस्पर्शी वाक्यावली में भर्त्सना करता हुआ कहता है—

'सखे पुण्डरीक ! नैतदनुरूपं भवतः क्षुद्रजनक्षुण्ण एव मार्गः। धैर्यधना हि साधवः। किं यः कश्चित् प्राकृत इव विकलीभवन्तमात्मानं न रुणत्सि ? क्व ते तद् धैर्यम् ? क्वासौ इन्द्रियनयः ?'

इसी प्रकार से उपदेश देते समय मन्त्री शुकनास भी चन्द्रापीड को लक्ष्मी के दोषों को समास-रहित सरल शब्दों में लघु वाक्यों का प्रयोग करता है—

'लब्धापि दुःखेन पाल्यते। न परिचयं रक्षति। नाभिजनमभीक्षते। न रूपमालोकयते। न कुलक्रममनुवर्तते। न शीलं पश्यति। न वैदग्ध्यं गणयति।'

सच कहा जाय तो बाणभट्ट के गद्य में सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति, चमत्कृत वर्णन-प्रणाली, अक्षय शब्दराशि तथा कल्पनाप्रसूत मौलिक अर्थों की उद्भावना विशेष रूप से पायी जाती है। उनके जैसा गद्य-साहित्य में प्रभाव एवं प्रवाह उनके अनुकरणकर्त्ता गद्यकवि अथक प्रयासों के उपरान्त भी नहीं उत्पन्न कर सके हैं। शब्द के ऊपर अखण्ड साम्राज्य बाण की अन्यतम विशिष्टता है। उन्होंने कभी भी किसी वस्तु को अभिव्यक्त करने हेतु शब्दों को बार-बार दुहराया नहीं है। जो प्रयोग एक बार हो गया सो हो गया। उनके वर्णनों में स्निग्धता, रुचिरता, सुगढचिक्कणता, नूतनचमत्कारकारिता आदि वैशिष्ट्यों का दर्शन पद-पद पर होता है। त्रिलोचन कवि जैसे बाण के समीक्षकों ने बाण की रसभाववती कविता के सामने अन्य कवियों की रचना को केवल वाक्चापल्य मात्र कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः ।
भवेत् कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम् ।।'

बाणभट्ट द्वारा रचित कादम्बरी उस बगीचे के समान है जिसका प्रत्येक अवयव, प्रत्येक वस्तु कवि ने खूब सजाकर एक सुन्दर गुलदस्ता के रूप में गठित किया है जिसकी बहार अपने रंग से तथा अपनी महक से पाठकों का हृदय अपनी ओर बलात् खींच लेती है। संस्कृत गद्य की ओजस्विता, मंजुल-प्रवाह, सर्वत्र नवीन पद-विन्यास, नूतन अर्थाभिव्यक्ति, अभिनव भावभङ्गी और समर्थं भावाभिव्यञ्जना की परिचायक वाणभट्ट की कादम्बरी है। इसीलिए प्राचीन आलोचक धर्मदास ने मुग्ध होकर बाणभट्ट की स्तुति में यथार्थ कथन किया है—

'रुचिर-स्वर-वर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति ।
सा किं तरुणी ? नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य ।।'

इसी प्रकार जयदेव ने बाणभट्ट को कविताकामिनी के हृदय में रहने वाला कामदेव कहा है— 'हृदयवसतिः पञ्चबाणस्तु बाणः ।'

आर्यासप्तशती के रचयिता गोवर्द्धनाचार्य ने भी वाणभट्ट को साक्षात् सरस्वती का अवतार प्रतिपादित किया है—

'जाता शिखण्डिनी प्राक् यथा शिखण्डी तथाऽवगच्छामि ।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ।।'

बाणभट्ट के अन्य प्रशंसक चन्द्रदेव ने तो इन्हें पञ्चानन (सिंह) की संज्ञा दे दी है—

'श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरे-
ऽलङ्कारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने ।
आसर्वत्र गभीरधीरकविता विन्ध्याटवीचातुरी,
सञ्चारी कविकुम्भिकुम्भभिदुरः बाणस्तु पञ्चाननः ।।'

अतः यह निर्विवाद सत्य सिद्ध है कि वाणभट्ट एक संस्कृत गद्य-साहित्य के नवीन शैली के आविष्कर्त्ता, गद्यसम्राट्, नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा-सम्पन्न अद्वितीय गद्य-कलाकार हैं जिनमें समग्र विशेषताएँ एकत्र पायी जाती हैं। अतः 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' की उक्ति सत्य चरितार्थ होती है।

बाण का जीवन के प्रति दृष्टिकोण— कादम्बरी में बाणभट्ट ने सम-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सामयिक मानव-जीवन, समाज और आर्थिक तथा धार्मिक परिस्थितियों को भी भलीभाँति अपनाया है। आदर्श-प्रेम, पुनर्जन्म की मान्यता, आश्रम-व्यवस्था, वर्ण-व्यवस्था, दिव्यज्ञान एवं आस्तिकता को पूर्ण रूप से यथावत् अपनाया है। पूर्वजन्म के संस्कारों का समुचित उद्दीपन प्राप्त कर पुनः उद्बुद्ध होना वाण ने कालिदास से लिया है। पूर्वजन्म के संस्कार पूर्णतया नष्ट न होकर चित्त में स्थिर होते हैं और जन्मान्तर में संक्रमित होते रहते हैं तथा समय पर पुनः उद्दीप्त हो जाते हैं। कादम्बरी कथा के दोनों नायकों (चन्द्रमा और चन्द्रापीड) को तीन जन्मों के भोग भोगने पड़ते हैं। वैशम्पायन कुसुमपुर में अच्छोदसरोवर के तट पर पूर्वजन्म की स्मृति प्राप्त कर महाश्वेता को पहचान लेता है और उससे प्रणय-याचना करता है। परन्तु महाश्वेता उसे नहीं पहचान पाती और उसे शुक होने का शाप दे देती है। जाबालि आश्रम में ऋषि द्वारा अपनी आत्मकथा सुनकर उसे पुनः पूर्वजन्म की स्मृति हो जाती है। इस प्रकार वाणभट्ट और कालिदास के पूर्वजन्म सम्बन्धी मान्यताओं में अद्भुत साम्य दीख पड़ता है। कालिदास ने स्पष्ट किया है कि जन्मान्तर के भाव जो चित्त में स्थिर रहते हैं समय व अनुकूल परिस्थिति पाकर पुनः उद्बुद्ध हो जाते हैं—

'रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्
पर्युत्सुकीभवति यत् सुखिनोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमवोधपूर्वं
भावास्थिराणि जननान्तरसौहृदानि ॥'

कादम्बरी में तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का अच्छा चित्रण किया गया है। अभीष्ट सिद्धि हेतु यज्ञ-यागादि के अतिरिक्त जादू-टोना आदि का भी प्रचार-प्रसार था। देवी-देवताओं की पूजा धार्मिक सहिष्णुता का द्योतक है। मूर्तिपूजा, सतीप्रथा, तप, जप, संयम आदि उस समय की आचारसंहिता के स्तम्भ थे। वाणभट्ट ने आदर्श-प्रेम का चित्रण किया है। प्रेम का उद्दाम चित्र वासना व भौतिकता से अछूता है। उत्कट व असंयत भौतिक प्रेम को मानसिक दुर्बलता कहकर तीव्र भर्त्सना की गयी है। आर्थिक परिस्थितियों का चित्रण नगर के बाजार, महल, पुर आदि के वर्णनों के रूप में किया गया है। विविध धर्म एवं दर्शन-सिद्धान्तों का पता उनकी सूक्तियों से चलता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

संक्षेप में कहा जा सकता है कि बाणभट्ट का जीवन के प्रति शुद्ध आदर्शवादी दृष्टिकोण था।

(५) **प्रश्न**—कथा और आख्यायिका में भेद स्पष्ट करते हुए बाणभट्ट के दृष्टिकोण पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—कथा एवं आख्यायिका में भेद—सर्वप्रथम कात्यायन के अष्टाध्यायी पर वार्तिक एवं पतञ्जलि के महाभाष्य में आख्यायिका शब्द का प्रयोग तथा उसके निदर्शक रचनाओं के नाम (वासवदत्ता, सुमनोत्तरा, भैमरथी) का उल्लेख प्राप्त होता है। 'अधिकृत्य कृते ग्रन्थे' सूत्र में तद्धित प्रत्ययों के सन्दर्भ में बताया गया है कि जिसके जीवनवृत्त को आधार बनाकर ग्रन्थ लिखा जाय उसके नाम से काव्य (ग्रन्थ) का नामकरण होता है, जैसे सुभद्रा के विषय में पूर्ण जानकारी देने वाला ग्रन्थ 'सौभद्रम्' कहलाता है। उसी प्रकार किसी के जीवन को आधार बनाकर लिखे जाने वाले काव्य को आख्यायिका कहा जाता है। यह आख्यायिका शब्द 'आख्यान' शब्द के अत्यधिक निकट है। आख्यान में वर्ण्य विषयवस्तु पर विशेष बल होता है जब कि आख्यायिका में कहने वाली वृत्ति अर्थात् कहने वाली विधा पर विशेष बल होता है। अमरसिंह के अमरकोश में 'आख्यायिकोपलब्धार्था' यह आख्यायिका का लक्षण किया गया है। यास्क के निरुक्त में आख्यान शब्द सर्वत्र स्वयं देखे हुए विवरण का यथावत् उद्गिरण अथवा प्रकाशन अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। यहाँ आख्यान शब्द के साथ दो स्थितियाँ जुड़ी हुई हैं—वस्तुओं एवं व्यक्तियों का क्रान्त दर्शन एवं उसे जैसे का तैसा प्रकाशन एवं वर्णन करने की शक्ति का होना। आख्यायिका शब्द भी इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति करता हुआ-सा गद्यविधा अर्थ में रूढ़ हो गया है।

यास्क के निरुक्त में भी आख्यान, आख्यानक, आख्यानविद् आदि शब्द प्रयुक्त हैं, जो प्राचीन ऐतिहासिक कथात्मक विवरणों के लिए प्रयुक्त हुए हैं। आख्यानविद् शब्द का भी बहुधा प्रयोग मिलता है जो सूचित करता है कि वैदिक काल के पात्रों एवं घटनाओं का प्रामाणिक विवरण मन्त्रबद्ध या गद्य रूप में ब्राह्मणों में दिया गया है, अथवा लोकविश्वास एवं किंवदन्तियों में सुरक्षित है, जिसे यथाप्रसङ्ग उद्धृत करने की कला जिन्हें आती है, वे आख्यानविद् हैं। 'आङ्' पूर्वक 'ख्या' धातु (समाचार देने, घोषणा करने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तथा दर्शन अर्थ में) से 'ण्वुल्' एवं 'टाप्' प्रत्ययों के योग से 'आख्यायिका' शब्द तथा 'ल्युट्' प्रत्यय लगकर आख्यान शब्द बनता है। 'ण्वुल्' प्रत्यय कर्त्ता की विवक्षा में लगकर आख्यायिका शब्द के 'वर्णन करने वाली वृत्ति' (वृत्ति, विद्या, कला, कर्त्री आदि) पक्ष को उजागर करता है जबकि आख्यान शब्द वर्ण्य-वस्तु को प्रधानता देता है। इस प्रकार आख्यायिका गद्यविधा के रूप में संस्कृत साहित्य की मौलिकता एवं विशिष्टता को अत्यधिक सुरक्षित किये हुए है। ऐतिहासिक उपन्यास एवं आख्यायिका में मौलिक भेद यह है कि ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास को आधार बनाकर काल्पनिक रचना होते हैं जबकि आख्यायिका वृत्तान्त को यथावत् किन्तु कलात्मक रूप में प्रस्तुत करती है। बाणभट्ट ने स्वयं आख्यायिकाकार की प्रशंसा में कहा है—

'कथं न ते वन्द्याख्यायिकाकाराः कवीश्वराः।
उच्छ्वासान्तेऽप्यखिला येषां वक्त्रे सरस्वती ॥'

अर्थात् आख्यायिकाकार कवीश्वर वन्दनीय हैं जिनके मुख में सरस्वती उच्छ्वासान्त तक भी क्लान्त नहीं होती। नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के शतदल से पराग एवं सुरभि का अजस्र स्रोत प्रवाहित होता रहता है।

आख्यायिका में अपनी कल्पना को कवि स्वेच्छा से प्रश्रय नहीं दे सकता है। उसमें भूतार्थ तथ्यों एवं उपलब्धार्थ पर ही निर्भर होना होता है। इसमें रसाभिव्यक्ति के प्रयोजक हृद्गत भावों का पात्रों पर प्रक्षेप नहीं किया जा सकता। इसमें व्यापक एवं सूक्ष्म निरीक्षण की आवश्यकता है जो लोकवृत्तान्त होने से कथा के कौतूहल तत्त्व से अपेक्षाकृत रहित हो सकता है। आख्यायिका विधा की गद्य-रचना दीर्घसमासा, ओजोगुणसमन्विता, अशिथिल पद-विन्यास की अनिवार्यता आदि ऐसे निकषोपल हैं जिन पर बार-बार खरा उतरने के बाद ही कवि की पदवी पायी जा सकती है। आख्यायिका का साफल्य केवल पात्रों एवं घटनाओं को यथावत् प्रस्तुत करने में न होकर एक पर्यवेक्षक की दृष्टि से उसके काल एवं देश की प्रत्यभिज्ञा करने तथा कराने में निहित होता है। बाणभट्ट ने अपने युग का चित्र प्रस्तुत कर आख्यायिका को उपलब्धार्था करके दिखा दिया है। बाण की प्रतिभा के नव-नव उन्मेष वस्तुओं, दृश्यों, रीतियों, परम्पराओं, सामाजिक, औद्योगिक, राजनैतिक, धार्मिक, दार्शनिक सभी गतिविधियों का यथाप्रसंग सूक्ष्मातिसूक्ष्म वर्णन करने में दृष्टिगोचर होते हैं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आख्यायिका का दूसरा पहलू कथा है। यद्यपि दण्डी ने आख्यायिका और कथा में मूलतः कोई अन्तर स्वीकार नहीं किया है तथापि दोनों के स्वरूपतः भेद को उन्होंने भी स्वीकार किया है। अमरकोश में कथा का लक्षण 'प्रबन्ध-कल्पना कथा' के रूप में किया गया है। कथा काव्य-विधा कवि-कल्पना का सर्जनात्मक विन्यास है। कथा में कवि का कौशल सर्वथा नवीन एवं भव्य काल्पनिक वृत्त को कौतूहल तत्त्व सुरक्षित करते हुए उपन्यस्त करने में होता है। कल्पित पात्रों पर वास्तविक जीवन के सत्य को प्रत्यारोपित करके कथाकार पाठक को कल्पना के ऐसे अद्भुत लोक में ले जाता है जहाँ उसे चरम सत्यों का साक्षात्कार होता है। इसलिए कल्पना का प्रबन्ध जितना सुविन्यस्त, सुगठित एवं मनोहारि होता है, कथा उतनी ही अधिक प्रभाववती होती है। आधुनिक उपन्यास इसी प्रबन्ध-कल्पना का विकसित रूप है। कादम्बरी को मराठी में इसीलिए उपन्यास कहा गया है। बाणभट्ट ने इसकी रचना सुबन्धु कृत वासवदत्ता और गुणाढ्च कृत बृहत्कथा की मौलिक विशेषताओं को अक्षुण्ण रखते हुए उनसे भिन्न अपनी मौलिक कल्पना के द्वारा की है—

'द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठ्या महामनोमोहमलीमसान्धया ।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा ॥'

कादम्बरी की विशेषताओं का वर्णन करते हुए कवि का कथन है—

'स्फुरत्कलालापविलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम् ।
रसेन शय्यां स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव ॥'

इस एक श्लोक में बाणभट्ट ने कथा-साहित्य की स्वरूपगत विशेषता को पिरो दिया है। उसके बाह्य स्वरूप की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा है—

'हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिताः कथाः ।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव ॥'

कथा और आख्यायिका के स्वरूप का विवेचन अन्य आलंकारिकों ने भी किया है। सर्वप्रथम भामह ने कथा और आख्यायिका में भेद स्पष्ट करते हुए अपने काव्यालंकार में कहा है—

'संस्कृतानां कुलश्रव्यशब्दार्थपदवृत्तिना ।
गद्येन युक्तोदात्तार्था सोच्छ्वासाऽऽख्यायिका मता ॥

Kamtadatt Sharma Collection, Nawada

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वृत्तमाख्यायते तस्यां नायकेन स्वचेष्टितम् ।
वक्त्रं चापरवक्त्रं च काले भाव्यर्थशंसि च ॥
कवेरभिप्रायकृतैः कथनैः कैश्चिदङ्किताः ।
कन्याहरणसङ्ग्रामविप्रलम्भोदयान्विताः ॥
न वक्त्रापरवक्त्राभ्यां युक्ता नोच्छ्वासवत्यपि ।
संस्कृतासंस्कृता चेष्टा कथाऽपभ्रंशभाक्तथा ॥
अन्यैः स्वचरितं तस्यां नायकेन तु नोच्यते ।
स्वगुणाविष्कृतिः कुर्यादभिजातः कथं जनः' ॥

आचार्य भामह के उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कथा और आख्यायिका के मौलिक भेद का निरूपण इस प्रकार है—

आख्यायिका	कथा
१. यह संस्कृत भाषा में निबद्ध होती है ।	१. यह संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में भी निबद्ध होती है ।
२. इसमें यत्र-तत्र भावी घटनाओं के संसूचक वक्त्र-अपरवक्त्र छन्दों का प्रयोग होता है ।	२. इसमें ऐसे वक्त्र-अपरवक्त्र छन्दों का समावेश नहीं होता ।
३. इसमें इतिवृत्त का विभाजन उच्छ्वासों में होता है ।	३. इसमें इतिवृत्त का विभाजन उच्छ्वासों में नहीं होता ।
४. इसमें नायक स्वचरित का वर्णन स्वयं करता है ।	४. इसमें नायक स्वयं अपने चरित्र का वर्णन नहीं करता अपितु किसी अन्य के द्वारा उसका वर्णन किया जाता है ।

अग्निपुराण में भी इसी से मिलता-जुलता विवेचन प्राप्त होता है । दण्डी, रुद्रट, हेमचन्द्र, भोजराज और विश्वनाथ आदि आलंकारिकों ने भी कथा और आख्यायिका के बाह्य स्वरूप का लक्षण अपने-अपने प्रकार से इसी परिधि में किया है । परिणामस्वरूप भेदों के स्वरूप में परस्पर विरोधाभास प्रकट होता । आचार्य दण्डी कथा और आख्यायिका में तत्त्वतः कोई भेद नहीं मानते ।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri

परन्तु वह मानें या न मानें यह सूक्ष्म भेद उनकी रचनाओं 'अवन्तिसुन्दरी' और 'दशकुमारचरित' में स्पष्ट दिखायी पड़ता है।

निष्कर्षतया वाणभट्ट ने अपनी रचनाओं में कथा और आख्यायिका का लक्षण न करके उसके आत्मतत्त्व का निरूपण कर दोनों के अन्तर और परस्पर सहभागित्व का संकेत दिया है। वाणभट्ट ने कथा को अभिनवा वधू तथा आख्यायिका को उसकी शय्या कहा है। आख्यायिकारूपी शय्या कथा-कामिनी के विलास का स्थूलाधार है जिसका निर्माण वृत्तान्त को सुगम, सरल, सहज सुन्दर वर्णों के द्वारा नवीन विस्मित, आह्लादित करने वाले अर्थ को प्रतिपादित करने वाले शब्दों के द्वारा होता है। शब्दार्थ यहाँ आधारस्तम्भ हैं, आख्यायिका की वस्तु, रस उस काष्ठ आधार पर ताना-वाना हेतु रेशमी निबाड़ सदृश हैं। अलंकार चंदोवा वितान है। इस शय्या पर विदग्धहृदय-विगलित वेद्यान्तर सम्पूर्ण आनन्द का अनुभव करता हुआ सौन्दर्यानुभूति करता हुआ सुखपूर्वक विश्राम पाता है। यही सत्य अर्थ को प्रस्तुत करने वाली प्रवृत्ति आख्यायिका का शय्यात्व है। सुखपूर्वक सो लेने के बाद का आह्लादक ललित जागरण है। कथा रसभरी अभिनवा वधू-सदृशी होती है जो विदग्ध-हृदय में रस संचार हेतु स्वयं इस शय्या को प्राप्त होती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि वाणभट्ट ने आख्यायिका और कथा के स्वरूप को जिस गहराई से परखा है अन्य किसी आलंकारिक ने नहीं। वाणभट्ट की इस गहराई तक परवर्ती कथाकार व आख्यायिकाकार नहीं पहुँच सके। अतएव उनकी कथा अतिद्वयी बनकर रह गयी।

(६) प्रश्न—कादम्बरी के कथा-स्रोत की विवेचना कीजिए।

उत्तर—कादम्बरी का कथा-स्रोत—कादम्बरी को पूर्ण रूप से बाणभट्ट की अपनी कल्पना कहा जाता है। तथापि यह पूर्णतया बाणभट्ट की अपनी कल्पना न होकर गुणाढ्य कृत वृहत्कथा में वर्णित राजा सुमनस् की कथा का संशोधित एवं परिवर्धित रूप है। वृहत्कथा अब अप्राप्य है परन्तु दशम शताब्दी के सोमदेव शर्मा द्वारा पद्यात्मक रूपान्तर कथासरित्सागर में सुमनस् की कथा प्राप्त होती है। कथासरित्सागर के अनुसार कथा इस प्रकार है—

काञ्चनपुरी में राजा सुमनस् के दरबार में एक दिन एक चाण्डालकन्या पिंजड़े में बन्द एक तोते को लेकर उपस्थित हुई। तोते को उपहारस्वरूप भेंट

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करती हुई उसने बताया कि यह तोता वेदों एवं शास्त्रों का पण्डित है। तोते ने राजा की प्रशंसा में एक श्लोक का पाठकर अपने शास्त्रज्ञान का परिचय दिया। तोते के वाग्वैदग्ध्य से स्तम्भित राजा और मन्त्री ने उससे स्ववृत्तान्त सुनाने का आग्रह किया। तब तोता अपनी आत्मकथा सुनाता हुआ कहता है—

'मेरा जन्म हिमालय की ढलानों में एक वृक्ष के कोटर में हुआ था। जन्म होते ही मेरी माँ का देहान्त हो गया। पिता ने ही मेरा लालन-पालन किया। एक दिन कुछ शिकारी वहाँ आये और हमारे घोसलों को तोड़ने लगे। हमारे बहुत-से बन्धु-बान्धव मारे गये। मैं पिता के पंखों के आश्रय में इधर-उधर बड़ी देर तक बचता हुआ उड़ता रहा। शिकारियों ने जब मेरे पिता को भी मार गिराया तब मैं पत्तों के बीच अपने को छुपाकर प्राण बचाने में सफल रहा। अगली सुबह जब पानी पीने की इच्छा से झील की ओर मन्द गति से सरक रहा था तो मार्ग में ऋषि मारीचि ने मुझे इस दयनीय दशा में देखकर करुणाप्लावित हो उठा लिया और कमण्डलु से जल पिलाया तथा अपने साथ आश्रम में ले गये। आश्रम के कुलपति महर्षि पुलस्त्य मेरा दर्शन कर मुस्करायें और आश्रमवासियों को मेरे पूर्वजन्म की कथा सुनाते हुए बोले—

'रत्नाकर नामक नगर में ज्योतिषप्रभ नामक एक राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम हर्षवती था। उसके पुत्र का नाम सोमप्रभ था। राजकुमार सोमप्रभ के बड़े होने पर धूम-धाम से उसे राज्य का उत्तराधिकारी बनाया गया तथा मन्त्रीपुत्र प्रियंकर को उसका साथी बनाया गया। इन्द्र ने स्वर्ग का एक घोड़ा राजकुमार को उपहारस्वरूप भेंट किया। पिता की आज्ञा से राजकुमार सोमप्रभ मित्र प्रियंकर के साथ दिग्विजय के लिए प्रस्थान किया। अनेक राजाओं पर विजय प्राप्त करते हुए वह हिमालय की सुरम्य वादियों में जा पहुँचा। वहाँ शिकार खेलते हुए एक किन्नर का पीछा करते बहुत दूर अकेले ही जा निकला। किन्नर अपनी चालाकी से बच निकला परन्तु राजकुमार सूर्यास्त हो जाने से भटक गया और एक झील के किनारे रात बिताने के लिए रुक गया। तभी उसे मधुर संगीतलहरी सुनायी पड़ी। स्वरलहरी का अनुसरण करते हुए वह ऐसे स्थान पर जा पहुँचा जहाँ एक शिवलिंग के सम्मुख बैठी हुई युवती तन्मयता से भजन गा रही थी।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

राजकुमार को आया देख उस युवती ने उसका अतिथिसत्कार करते हु स्वागत किया। राजकुमार ने अपना परिचय देते हुए उससे इस निर्जन क में अकेले रहने का कारण और अपना वृत्तान्त सुनाने का आग्रह किया। त उस युवती मनोरथप्रभा ने अपना वृत्तान्त इस प्रकार सुनाया—

हिमालय की पर्वतश्रृंखलाओं में कंचननाभा नामक शहर के रा पद्मकूट की वह बेटी है। उसकी माता का नाम हेमप्रभा तथा उसका ना मनोरथप्रभा है। एक दिन वह अपनी सहेली के साथ विहार कर रही कि एक नवयुवक तपस्वी और उसके साथी पर दृष्टि पड़ी। प्रथम दर्शन ही हम दोनों परस्पर प्रेमपाश में बँध गये। मेरी सहेली ने नवयुवक योगी साथी से उसका परिचय पूछा। उसने बताया कि उस नवयुवक योगी नाम रश्मिमान् है तथा वह लक्ष्मी का मानसिक पुत्र और महर्षि दधीचि पालित पुत्र है। तभी अपने पिता का भोजन हेतु आमन्त्रण पाकर मैं अप महल लौटी। थोड़ी देर बाद उस योगी का साथी आया और चन्द्रोदय उद्दीप्त अपने कामपीड़ासन्तप्त साथी के प्राणों की रक्षा के लिए मुझसे शी चलने का आग्रह किया। मैं जब वहाँ पहुँची तो पता चला कि वह मर चु था। मैंने भी उसके वियोग में मरने का निश्चय किया। परन्तु तभी एक दि पुरुष आकाश से उतरा और उसके मृत शरीर को लेकर उड़ गया। त आकाशवाणी के द्वारा पुनः उस ऋषिकुमार के मिलन का और मुझे प्रा परित्याग न करने का सन्देश सुनायी दिया। तभी से यहाँ शिव-आराध करती हुई ऋषिकुमार के मिलन की प्रतीक्षा कर रही हूँ। उसका मित्र क गया, यह मुझे पता नहीं है।

राजकुमार सोमप्रभ द्वारा उसकी सखी के बारे में पूछे जाने पर उस बताया कि सिंहविक्रम नामक विद्याधरराज की बेटी मकरन्दिका मेरी पक्क सहेली है। मेरे विवाह न होने तक उसने भी विवाह न करने का फैसला क लिया है। मैंने अपनी दूती को उसके यहाँ से मेरा हाल जानने आये दूत साथ उसे सान्त्वना देने हेतु भेज दिया है इसीलिए मैं इस समय यहाँ अके हूँ। अभी दोनों बातें ही कर रहे थे कि उसकी दूती विद्याधर-दूत के सा वापस आ गयी। दूत ने राजा का सन्देश मनोरथप्रभा को दिया कि वह आक मकरन्दिका को समझाये और विवाह करने हेतु राजी करे। मनोरथप्र जब चलने को तैयार हुई तो सोमप्रभ ने भी विद्याधरों की नगरी देखने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं उसके साथ चलने की इच्छा प्रकट की। वह सहर्ष उसे अपने साथ ले गयी। सोमप्रभ और मकरन्दिका एक-दूसरे पर प्रथम दृष्टि में ही आसक्त हो गये। मकरन्दिका सोमप्रभ से विवाह करने को जब राजी हो गयी तो सोमप्रभ ने अपने बिछड़े साथियों की चिन्ता दूर कर पुनः वापस आने का वचन दिया और मनोरथप्रभा के साथ पुनः शिवमन्दिर लौट आया। तभी उसके सैनिक वहाँ ढूँढते हुए आ पहुँचे। अभी वह अपने साथियों को अपना और मकरन्दिका का वृत्तान्त सुना ही रहा था कि पिता का सन्देश लेकर दूत आ पहुँचा और उससे शीघ्र वापस चलने का आग्रह किया। सोमप्रभ ने पुनः वापस आने का मनोरथप्रभा को वचन देकर कंचनपुरी को प्रस्थान किया। सोमप्रभ के वियोग में मकरन्दिका विरहाकुल हो जंगल में इधर-उधर भ्रमण करने लगी। उसके पिता ने उसे बहुत समझाया पर वह घर जाने को उद्यत न हुई, तब उसके पिता ने उसे कुछ दिनों के लिए आदिवासी कन्या हो जाने का शाप दे दिया। मकरन्दिका के घर वापस न जाने से उसके वियोग में दुःखी माता-पिता भी स्वर्गवासी हुए और कुछ दिनों बाद दूसरे जन्म में ऋषि हुए जहाँ शापवश तीसरा जन्म शुक के रूप में लेना पड़ा। उसकी माता भी शापवश सूकरी हुई। यह शुक ही मकरन्दिका का पिता है जिसे अपने पूर्वजन्म का शास्त्रज्ञान है। जब यह शुक राजसभा में जाकर अपना वृत्तान्त सुनायेगा तो शापमुक्त हो पूर्व शरीर को प्राप्त हो जायेगा। मकरन्दिका का विवाह भी सोमप्रभ से हो जायेगा और रश्मिमान जो राजा है, उसका विवाह मनोरथप्रभा से हो जायेगा। इस समय सोमप्रभ अपने पिता से मिलकर लौट आया है और मकरन्दिका से मिलन हेतु शिव-आराधना में दत्तचित्त है। इतना कहकर पुलस्त्य मुनि चुप हो गये। शुक ने आगे बताया कि वह इस समय शापमुक्त हो गया है। शुक का वृत्तान्त सुनकर राजा सुमनस् प्रसन्न हुए। उधर सोमप्रभ को भगवान् आशुतोष ने राजा सुमनस् के दरबार में जाने को कहा जहाँ मकरन्दिका निषादकन्या रूप में मौजूद थी। मनोरथप्रभा को भी शिव ने ज्ञान दिया कि वह भी दरबार में जाय क्योंकि राजा सुमनस् ही रश्मिमान् है। दोनों जब दरबार में पहुँचते हैं तो सोमप्रभ को देखकर मकरन्दिका को पूर्व ज्ञान एवं पूर्व रूप प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार सोमप्रभ-मकरन्दिका तथा मनोरथप्रभा व सुमनस् का विवाह हो जाता है। सुमनस् आकाश से गिरे अपने पूर्व शरीर को धारण कर आश्रम को मनोरथप्रभा के

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

साथ लौट आता है तथा सोमप्रभ मकरन्दिका के साथ कंचनपुरी में रहने लगा। शुक भी तपोबल से शुक योनि से मुक्त हो गया।

मूल कथा में परिवर्तन—बाणभट्ट द्वारा विरचित 'कादम्बरी कथा' गुणाढ्य की बृहत्कथा में वर्णित 'सुमनस् कथा' का अनुसरण करती हुई भी पूर्णरूपेण छायानुवाद नहीं है। इसमें अनेक मौलिक परिवर्तन देखने को मिलते हैं। बाणभट्ट ने सुमनस् कथा के पात्रों के नामतुल्य पात्रों के नाम रखे हैं तथा पात्रों की संख्या में अधिक विस्तार किया है। ऐसा उन्होंने विविध विषयों का कथा में समावेश करने हेतु किया है। कादम्बरी में बाणभट्ट की नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा का पद-पद पर दर्शन होता है। बाणभट्ट के समय तक बृहत्कथा और वासवदत्ता दोनों ही रचनाएँ अवश्य विद्यमान रही होगीं। उन्होंने दोनों की विशेषताओं के साथ रिक्तियों का अन्वेषण किया और उनकी पूर्ति कादम्बरी में की। तभी तो कादम्बरी 'अतिद्वयीकथा' बन सकी। बाणभट्ट द्वारा मूल कथा के पात्रों के नाम-परिवर्तन इस प्रकार हैं—

बृहत्कथा	कादम्बरी
१. कंचनपुरी	विदिशा
२. सुमनस् (नायक)	शूद्रक (पूर्वजन्म-चन्द्रापीड)
३. मुक्तलता	चाण्डालकन्या
४. शास्त्रज्ञ तोता	वैशम्पायन (पुण्डरीक)
५. मारीचि ऋषि	हारीत
६. पुलस्त्य	जाबालि
७. रत्नाकरपुर	उज्जयिनी
८. ज्योतिषप्रभ	तारापीड (चन्द्रापीड के पिता)
९. हर्षवती	विलासवती
१०. सोमप्रभ	चन्द्रापीड
११. प्रभाकर	शुकनास
१२. प्रियंकर	वैशम्पायन
१३. अशुश्रवा	इन्द्रायुध
१४. पद्मकूट	हंस
१५. हेमप्रभा	गौरी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

१६. मनोरथप्रभा	महाश्वेता
१७. दधीचि मुनि	श्वेतकेतु
१८. रश्मिमान्	पुण्डरीक
१९. सिंहविक्रम	चित्ररथदेव
२०. मकरन्दिका	कादम्बरी
२१. देवजया	केयूरक

पात्रों के नामों में परिवर्तन के अतिरिक्त बाणभट्ट ने चरित्र-चित्रण में भी अपनी नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा को प्रकाशित किया है। चन्द्रापीड के शौर्य, औदार्य एवं प्रताप आदि का उत्कर्ष प्रदर्शित करते हुए उसमें शास्त्रीय नायक के लक्षणों का उदाहरण प्रस्तुत किया। शुकनास की विद्वत्ता का अनुपम वर्णन बाणभट्ट की अपनी कल्पना है। चन्द्रापीड के मित्र रूप में वैशम्पायन के चरित्र की कल्पना, किन्नर के स्थान पर किन्नर-मिथुन की कथा, नायक-नायिका के अनुकूल सूक्ष्म एवं भव्य भावनाओं का चित्रण बाण की अपनी मौलिक प्रतिभा का परिचायक है। चन्द्रापीड जब अपने पिता के पास वापस लौट जाता है तो प्राचीन कथा (वृहत्कथा) का कलेवर पर्याप्त भिन्न हो जाता है। प्राचीन कथा में मकरन्दिका अपने माता-पिता को सोमप्रभ के वियोग में दुःखी हो क्षुब्ध कर देती है तथा उसका पिता क्षोभ में उसे निषादकन्या होने का शाप दे देता है और माता-पिता दोनों का स्वर्गवास हो जाता है। उसका पिता ही अगले जन्म में शुक होता है। कादम्बरी में पुण्डरीक की माता लक्ष्मी चाण्डालकन्या तथा पुण्डरीक शुक का जन्म लेता है। चन्द्रापीड का मित्र वैशम्पायन ही महाश्वेता के शाप से शुक योनि में जन्म लेता है। चन्द्रापीड ही अगले जन्म में राजा शूद्रक होता है। शूद्रक और सुमनस् के चरित्र में भी पर्याप्त भिन्नता बाणभट्ट ने प्रदर्शित की है।

प्राचीन कथा में लक्ष्मी के मानसिक पुत्र और दधीचि मुनि के पालित पुत्र रश्मिमान् अगले जन्म में राजा सुमनस् होते हैं। इसके विपरीत कादम्बरी में श्वेतकेतु का मानसिक पुत्र पुण्डरीक पहले वैशम्पायन तत्पश्चात् शापवश शुक योनि प्राप्त करता है। प्राचीन कथा में सोमप्रभ की मृत्यु नहीं होती जबकि कादम्बरी में नायक चन्द्रापीड की मृत्यु और पुनर्जन्म दोनों दिखाया गया है। बाणभट्ट ने चन्द्रमा को ही शापवश चन्द्रापीड और फिर शूद्रक रूप

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में जन्म लेना बताया है। पत्रलेखा की कल्पना वाणभट्ट की मौलिक कल्पना है। इसके अतिरिक्त कथासरित्सागर (बृहत्कथा) के प्राचीन कलेवर को काव्यत्व का कलेवर प्रदान करते हुए राजसी ठाठ-बाट से अलंकृत करके मानवीय भावों का तथा प्रकृति के उदात्त चित्रों का चित्रण करते हुए शुकनास के द्वारा धन के अवगुणों का स्पष्ट चित्रण बाण की प्रतिभा का द्योतक है। इस प्रकार कादम्बरी बृहत्कथा की सुमनस्-कथा पर आधारित होते हुए भी पर्याप्त भिन्नता रखते हुए बाणभट्ट की सर्वथा मौलिक कल्पना-सृष्टि मानी जाती है। बाणभट्ट ने इसमें किसी भी वस्तु को शेष नहीं छोड़ा है। सबका समुचित समावेश कर रखा है। तभी तो समीक्षकों ने 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' कहकर इनकी समीक्षा की है।

(७) प्रश्न—कादम्बरी के कथा-शिल्प की विवेचना कीजिए।

उत्तर—कादम्बरी (कथा-शिल्प)—यद्यपि कादम्बरी जैसी ही कथा उसी घटनाक्रम में केवल पात्रों के नाम-परिवर्तन के साथ गुणाढ्य कृत बृहत्कथा में सुमानसोपाख्यान के रूप में उपलब्ध है तथापि न तो बृहत्कथा का राजा सुमनस् कादम्वरी के शूद्रक का स्थान ले सका है, न ही सोमप्रभ चन्द्रापीड और न मकरन्दिका कादम्वरी वन सकी है। इसका कारण है बाणभट्ट का अद्भुत कथा-शिल्प एवं चरित्र-चित्रण कला की वैदग्ध्यता। कादम्बरी का कथासूत्र गुणाढ्य कृत बृहत्कथा के सुमानसोपाख्यान पर आधारित अवश्य है परन्तु उसमें पिरोये गये वर्णन रूप मोती बाण की अपनी कला एवं प्रतिभा के देन हैं।

कादम्बरी कथा में कथातत्त्व कौतूहल के नित्य नये आयामों की सृष्टि करता हुआ क्रमशः मुख्य भाव को केन्द्र में ले जाता है, जहाँ अमर-प्रेम का मधु पुञ्जीभूत है। रसान्वेषी सहृदय भ्रमर इसमें इतना डूब जाता है कि कब भगवान् अंशुमाली अपना अंशुजाल समेट कर चले गये, पाठक को पता ही नहीं चलता। इस पराग-उत्स से कथा के समस्त पात्र चक्राकृति जुड़े हैं। जन्म-जन्मान्तर का काममोहित मिथुन यहाँ मध्याधार में सुप्रतिष्ठित है, साथ ही छायावत् मित्रप्रेम का अद्भुत सामञ्जस्य सुरभि के समान अभिन्न रूप से जुड़ा है। कादम्बरी-चन्द्रापीड के समानान्तर वैशम्पायन-महाश्वेता का प्रणय-प्रसङ्ग जन्म-जन्मातर के साहचर्य में प्रतिफलित है। यही नहीं, कादम्बरी का महाश्वेता से तथा चन्द्रापीड का वैशम्पायन से दृढ़ अनुराग, दूसरे जन्मों

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में भी साथ रहने की उत्कट अभिलाषा उन्हें एक प्राण दो शरीर मानकर प्रस्तुत की गयी है। मित्रप्रेम के द्वारा बाण ने स्पष्ट कर दिया है कि ऐन्द्रियत्व प्रेम के मार्ग का एक नगण्य शिविर है, शारीरिक स्तर तक की आवश्यकता भर, इससे अधिक नहीं। वैशम्पायन की मृत्यु पर चन्द्रापीड का देह-त्याग करना मित्रप्रेम को प्रेयसी के प्रेम के ऊपर प्रतिष्ठित करना है। इसी प्रकार महाश्वेता के विफल प्रणय पर कादम्बरी का अविवाहित रहने का संकल्प स्त्रियों के लिए प्रेम का उदात्त निदर्शन है। इतनी मानवीय एवं उदात्त परिकल्पना के लिए बाणभट्ट ने एक जन्म को अपर्याप्त मानकर तीन जन्मों का घटनाचक्र परस्पर संयोजित किया है। तीन जन्मों की पृथक्-पृथक् पहचान वनाये रखते हुए एक आत्मा के तीन दैहिक स्तरों का तारतम्य सुग्रथित वस्तु के रूप में प्रस्तुत करना बाण के कथा-शिल्प की विलक्षणता है। तीन जन्मों के घटनासूत्र परस्पर न उलझकर तीन लड़ी की माला की भाँति शूद्रक-सभा रूप मध्यमणि में संयोजित हो गये हैं।

कादम्बरी-कथा में चाण्डालकन्या वैशम्पायन शुक को लेकर शूद्रक के सभा-मण्डप में उपस्थित होती है जहाँ कथा के चरम कौतूहल तक वैशम्पायन क्रम से समस्त वृत्तान्त प्रस्तुत करता है। वैशम्पायन तोते का मानवीय गिरा में वृत्तान्त-कथन रहस्य-बीज है। ज्यों-ज्यों कथा बढ़ती है यह रहस्य गहराता जाता है। कथा की सबसे बड़ी विशेषता सतत उत्सुकता को जगाये रखना है। मुख्य श्रोता शूद्रक के पूर्वजन्म की स्मृतियों के आभास होने तक चरम सीमा पर पहुँच जाता है। कथाकार बिना किसी इन्द्रजाल या निरी कल्पना के उड़ान का सहारा लिये ही अद्भुत किन्तु अनुभूति की सीमा तक यथार्थ घटना-क्रम को सहज विश्वास्य भूमिका पर उतारने में सफल हुआ है। कथा सुनते-सुनते शूद्रक की सभा चित्रलिखित-सी मुग्ध हो गयी, यह विशेष नहीं है, विशेष है—पाठक का शूद्रक की सभा से वैशम्पायन के साथ विन्ध्याटवी से उज्जयिनी, उज्जयिनी से अच्छोद सरोवर, अच्छोद सरोवर से हेमकूट तक जाना, तत्-तद् देश, तत-तद् काल में रम जाना और फिर वैशम्पायन तोते की नियति एवं चन्द्रापीड की अभिशप्ति का साक्षात्कार करना। वैशम्पायन की नियति अपने मित्र के साथ जुड़ी है और अमृतनिधि चन्द्रमा का अभिशाप मर्त्य देहों में सुख-दुःखात्मक अनुभूतियों से गुजर कर मर्त्यता को एक प्रबल रूप देने में ही इस कथा की विशेषता है। यह कादम्बरी कथा-शिल्प की महती

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतिष्ठा है कि लम्बे-लम्बे वर्णन भी कथासूत्र को छिन्न-भिन्न नहीं कर पाते अपितु वस्तुओं, स्थानों, दृश्यों का विशद चित्रण घटना-क्रम में एक विचित्र रसास्वाद जोड़ता है। उज्जयिनी की सभा में राजा तारापीड का वैभव नायक चन्द्रापीड के आभिजात्य का हेतुभूत है, तो यज्ञ-यागादिक, दान-पुण्य, देवी-देवतार्चन आदि से प्राप्त दुर्लभ सन्तान का जीवन-वृत्त भी वैसा ही भव्य एवं विचित्र भूमिका ली गयी है। वैशम्पायन का छाया की तरह चन्द्रापीड के साथ जन्म लेना, बढ़ना, पढ़ना-लिखना तथा आखेट-यात्राओं में भी साथ-साथ रहना उनके जन्म-जन्मान्तर के सौहार्द्र का प्रमाण-सा प्रस्तुत करता है। उसी प्रकार महाश्वेता द्वारा अपना तथा कादम्बरी का गन्धर्व एवं अप्सरा देवयोनि में जन्म लेकर मानवों एवं मर्त्यभूमि के प्रति प्रेम और उनके शापों के अवसान तक प्रतीक्षा कवि के कर्मभूमि धरती के प्रति अखण्ड विश्वास को व्यक्त करती है। कादम्बरी चन्द्रापीड के शव की रक्षा करते हुए, महाश्वेता शिवाराधन करते हुए अपने-अपने मानवप्रेमियों के लिए दिव्ययोनि की अमरता का उपयोग कर सकती है। मनुष्य और देव में यही मुख्य भेद है कि एक मर्त्यधर्मा है और दूसरा अमर्त्य। बाणभट्ट ने दिव्यादिव्य पात्रों की प्रकृति का प्रेम एक आत्मा के धर्म रूप में प्रतिस्थापित करने का कौशलपूर्ण प्रयोग किया है।

कादम्बरी कथा में दो प्रकार के वक्ताओं का प्रयोग बाणभट्ट ने किया है—

१. प्रत्यक्ष एवं २. परोक्ष। प्रत्यक्ष वक्ताओं में बाणभट्ट, वैशम्पायन तोता, चाण्डालकन्या है तथा परोक्ष वक्ताओं में जाबालि मुनि तथा कथा के पात्र हैं जिनमें प्रमुख रूप से जाबालि मुनि की कथावाचकता में चन्द्रापीड के पूछे जाने पर महाश्वेता कथा के अनेक रहस्यों को अनावृत करती है। महाश्वेता स्वयं एक पात्र होने के साथ कथावस्तु के पताका कथांश की नायिका भी है। बाण ने अपनी समझ से कथा की संघटना में देश, काल तथा घटना की अन्विति व सामञ्जस्य रखने का भरपूर प्रयास किया है, जैसे कि तीनों जन्मों के वृत्तान्त को उद्धृत करने के लिए तीन स्तर के वक्ता, श्रोता, पात्र एवं स्थान का संयोजन किया है। यहाँ तक कि गौण पात्रों के भी कथा के मंच पर आने और अदृश्य रहने के कारणों का उल्लेख किया गया है। वस्तुतः कादम्बरी कथा भारतीय साहित्य दर्शन की उन्हीं मान्यताओं पर लिखी गयी जो भारतीय जीवन को सुसंस्कृत एवं आनन्दमय बनाती थीं। यहाँ ऋषियों

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की क्रान्त एवं कल्याणोन्मुखी दृष्टि लोक-सामान्य जीवन को उदात्त मानवीय चेतना प्रदान करती थी, इसीलिए संस्कृत के सभी कवियों ने अपने काव्य-यज्ञ द्वारा सामान्य गुणों और अवगुणों वाले मनुष्यों को दीक्षित करके इतिहास का अमर नायक बना दिया। डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'कादम्बरी एक सांस्कृतिक अध्ययन' ग्रन्थ में लिखा है—

'कादम्बरी बाण के परिपक्व मानस की देन है। बाण अपने सरस जीवनानुभव एवं तत्त्वावलोकन में उस आदर्श भारतीय मानव के स्वरूप थे जो जीवन-रस का पान करके पूर्ण विदग्ध बने थे। उन्होंने लोक-व्यवहार की सामग्री से कथा का ठाट निर्मित करने में साहित्यकार की रसानुभूति एवं कलाकार के रचना-कौशल का परिचय दिया है।'

प्रबन्ध काव्यों की कथावस्तु के लिए आचार्य आनन्दवर्धन ने अपने ध्वन्यालोक के तृतीय उद्योत में निम्न निर्देश दिये हैं—

१. सर्वप्रथम एक सुन्दर मूल कथा का निर्धारण।

२. मूल कथा का रसानुकूल संस्करण।

३. कथाविस्तार में अपेक्षित सन्धि तथा सन्ध्यङ्गों की रचना।

४. बीच में यथास्थान रस का उद्दीपन व प्रशमन।

५. प्रबन्ध में प्रधान रस का आदि से अन्त तक अनुसन्धान अर्थात् अविस्मरण।

एक बात आनन्दवर्धन ने स्पष्ट रूप से कही है कि सन्धियों एवं सन्ध्यङ्गों की योजना शास्त्र की लीक पीटने के लिए न होकर रसाभिव्यक्ति-सापेक्ष्य होनी चाहिए। कादम्बरी के कथानक एवं वस्तु-विन्यास में यह संगति स्पष्ट दीख पड़ती है—

यहाँ आधिकारिक कथा चन्द्रापीड और कादम्बरी की प्रणय-कथा है। वैशम्पायन तथा महाश्वेता की प्रणय-कथा प्रासङ्गिक कथा है। पुण्डरीक (वैशम्पायन) तथा महाश्वेता की कथा को पताका-कथा कहा जा सकता है। क्योंकि यह पूरे वृत्त में आधिकारिक कथा के साथ-साथ चलती है तथा आधिकारिक कथा के विकास में सहायक सिद्ध होती है। पत्रलेखा एवं कपिञ्जल की कथाएँ प्रकरण वश मुख्य कथासूत्र में उपकारक होकर प्रयुक्त है। अस्तु, ये प्रकरी कथाएँ कही जा सकती हैं।

अर्थ अर्थात् वर्ण्य वस्तु की प्रकृति (स्वरूप) पाँच रूपों में प्रबन्ध काव्यों

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

में दृष्टिगत होती है। वस्तु-विन्यास में एकलयात्मक योजना एवं संगति होती है जिसे वस्तु के विस्तार में रूपायित किया जाता है। इसलिए अर्थप्रकृतियों एवं अवस्थाओं से भी अधिक महत्त्व सन्धियों का होता है। प्रबन्ध काव्य की प्रमुख सन्धियाँ हैं—मुख, प्रतिमुख, गर्भ, अवमर्षण एवं निर्वहण। इस दृष्टि से कादम्बरी के परीक्षण पर निम्न तथ्य सामने आते हैं—

१. **मुख-सन्धि**—चन्द्रापीड का अच्छोद सरोवर पर पहुँचकर महाश्वेता से मिलकर उसके वृत्तान्त के प्रकरण में उसकी अभिन्नहृदया सखी कादम्बरी का परिचय प्राप्त करना तथा उससे मिलने हेतु चन्द्रापीड के मन में उत्सुकता जागृत होना कथा का मुख है।

२. **प्रतिमुख-सन्धि**—कादम्बरी द्वारा चन्द्रापीड को शेष नाम का हार भेजकर अपनी प्रीति प्रगट करना तथा क्रीडा पर्वत पर रहते हुए दोनों का वारम्वार मिलने को आवागमन।

३. **गर्भ-सन्धि**—राजा तारापीड द्वारा चन्द्रापीड को बुलवा लेना, केयूरक द्वारा कादम्बरी के विरह-वृत्तान्त वर्णन सुनकर चन्द्रापीड का गन्धर्वलोक के लिए प्रस्थान, मार्ग में ही वैशम्पायन को ढूँढ़ने के लिए दशपुर एवं अच्छोद सरोवर जाना आदि घटनाएँ कथा का गर्भ भाग हैं।

४. **अवमर्श**—चन्द्रापीड के देहत्याग से दुःखी स्वयं प्राणोत्सर्ग को उद्यत हुई कादम्बरी को चन्द्रापीड से पुनर्मिलन होने की तथा पुनर्मिलन तक चन्द्रापीड के मृत शरीर की रक्षा करने हेतु दिव्य वाणी द्वारा आग्रह किया जाना।

५. **निर्वहण-सन्धि**—वैशम्पायन एवं लक्ष्मी (चाण्डालकन्या) से पूर्व जन्मों की कथा सुनकर शूद्रक (चन्द्रापीड) को अपने पूर्वजन्मों की समस्त घटनाओं का स्मरण हो जाना तथा कादम्बरी से मिलने की उत्कण्ठा जागृत होना। वसन्तागमन पर कादम्बरी का चन्द्रापीड के देह को आलिंगन कर पुनर्जीवित करना तथा चन्द्रापीड-कादम्बरी, वैशम्पायन-महाश्वेता आदि का अपने-अपने स्निग्ध जनों से मिलकर सुखपूर्वक यथेच्छ विहार करना निर्वहण सन्धि है।

कथा का नायक चन्द्रापीड (शूद्रक) पूर्ण यौवन एवं राजवैभव-सम्पन्न होते हुए भी वीतराग है। उसका आगमन शूद्रक रूप में कथा के प्रारम्भ में ही होता है। अद्भुत शुक द्वारा उसकी सभा में समस्त वृत्तान्त इस प्रकार रखा गया हैं कि बहुतिथि-काल में घटित संघटना शूद्रक को संस्मरण दिलाने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के लिए एक रात में ही कह दी गयी है। इस प्रकार कथा के प्रारम्भ में ही नायक-नायिका, सहनायक-सहनायिका तथा अन्य प्रमुख पात्रों एवं उनकी गतिविधियों का सूत्र हाथ लग जाता है। कथा में सतत कौतूहल बनाये रखने के लिए ही रहस्य को अन्त तक रहस्य ही बनाये रखा गया है। पूरे प्रबन्ध में शृंगार एवं उसके अंगीरस करुण, वीर आदि की योजना समुचित रीति से की गयी है तथा अन्त में रहस्योद्घाटन कर अद्भुत रस की अद्भुत योजना जन्म-जन्मान्तर के परिचय से सम्बन्धित पात्रों द्वारा की गयी है। पाठक को जब पता चलता है कि शूद्रक ही कथा का नायक चन्द्रापीड है तथा वैशम्पायन तोता ही विप्रकुमार वैशम्पायन एवं उससे पूर्व जन्म का पुण्डरीक है, चाण्डाल-कन्या ही शुक वैशम्पायन की माँ लक्ष्मी है, पत्रलेखा चन्द्रमा की पत्नी रोहिणी है, इन्द्रायुध अश्व पुण्डरीक का मित्र कपिञ्जल है और ये सब मर्त्य योनियों में पुनर्भव का अभिशाप भोगते हुए एक देह से दूसरे देहों में आवागमन कर रहे हैं, तो उसके हर्ष एवं विस्मय की सीमा नहीं रहती और उसे दोनों का एक साथ सुख आस्वाद प्राप्त होता है। कादम्बरी और महाश्वेता दिव्य योनि में जन्म होने के कारण उसी शरीर से अपने मर्त्य प्रेमियों से मिलन की तप एवं दृढ़ संकल्प के सहारे प्रतीक्षा कर रही हैं।

डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार कादम्बरी के कथा-शिल्प की तुलना एक सुगठित देवप्रासाद अथवा राजप्रासाद के शिल्प से की जा सकती है। उन्होंने अपनी पुस्तक में सम्पूर्ण कथानक को मुखमण्डप, रंगमण्डप, अन्तराल-मण्डप और गर्भगृह—इन चार भागों में विभक्त किया है। डॉ० विजयलक्ष्मी त्रिवेदी ने भी अपनी पुस्तक 'बाणभट्ट' में वर्णनों की दृष्टि से कादम्बरी के वस्तु-विन्यास को राजप्रासाद के शिल्प से उपमित करते हुए विभिन्न कथांशों को प्रथम कक्ष्या, द्वितीय कक्ष्या, तृतीय कक्ष्या, धवलगृह और सुखमन्दिर आदि में विभक्त किया है। कादम्बरी की कथा में प्रमुख पात्रों के चरित्र को तीन जन्मों के समय तक उठाते जाना, सारे कथानक को एक विशिष्ट केन्द्र से आरम्भ कर पूर्ण सन्तुलन के साथ आगे बढ़ाना और पुनः उसी बिन्दु पर ले आना तथा सर्वत्र रोचकता एवं नवीन उत्कण्ठा को सुस्थिर रखना बाणभट्ट के कथा-शिल्प की अपनी विशेषता है। उस युग की कथा कहने की विशेषता का आलम्बन अथवा उपाख्यान शैली के सभी रूपों का प्रयोग करते हुए उनकी अलग-अलग धारा बहाकर भी एक मुख्य धारा में ही सब धाराओं की व्याप्ति कर देना कादम्बरी के कथानक की महती विशेषता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(८) प्रश्न — बाणभट्ट के समय की सामाजिक दशा, रीति-रिवाज एवं धर्म-दर्शन पर संक्षिप्त निबन्ध प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर — बाणकालीन भारतीय समाज — महाकवि बाणभट्ट सच्चे अर्थों में समाज के प्रतिबिम्बकार माने जाते हैं। उन्होंने समाज को जिस रूप में देखा उसी रूप में उसका छायाचित्र अपनी रचनाओं में अंकित कर लिया। इतना अवश्य है कि कवि होने के कारण आदर्श व सुन्दर तत्त्व को कहीं नहीं भूले हैं। बाण का प्रादुर्भाव स्वर्णकाल के अन्तिम चरण में हुआ था। वैदिक संस्कृति अपने चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। लोगों में सामाजिक बन्धनों के प्रति एक नयी सोच जागृत हो चुकी थी। कला-कौशल एवं विविध विधाओं का समाज में अत्यधिक प्रचार-प्रसार था। महाराज शूद्रक के शासनकाल का एक चित्र इसका उदाहरण है—

'यस्मिंश्च राजनि जितजगति परिपालयति महीं चित्रकर्म्मसु वर्णसङ्कराः, रतेषु केशग्रहाः, काव्येषु दृढबन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ता, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु मदविकाराः, चापेषु गुणच्छेदाः, गवाक्षेषु जालमार्गाः, शशिकृपाणकवचेषु कलङ्काः, रति-कलहेषु दूतसम्प्रेषणानि, सार्य्यक्षेषु शून्यगृहाः न प्रजानामासन्'।

यह है बाणभट्ट के आदर्श समाज का चित्र। इन पंक्तियों में बाणभट्ट ने वर्णसंकर न होने, अपमान न किये जाने, भयमुक्तता, सात्त्विकता आदि सद्‌गुणों की चर्चा करके एक आदर्श राज्य की चर्चा की है। परन्तु स्वयं ही हर्षचरित में इन्हीं दुर्गुणों के समाज में होने की चर्चा की है। 'हर्षचरित' के अनुसार पितृसत्तात्मक संगठित परिवार में व्यक्तिगत रूप से भी सबकी स्थिति सुरक्षित थी। सन्तति के लिए माता-पिता ही सर्वाधिक उत्तरदायी होते थे। वैदिक परम्परा के अनुसार समाज का संचालन होते हुए भी चारों वर्णों में अनेक उपवर्णों का विभाजन हो चुका था। उच्च, मध्यम और निम्न वर्गों में वर्णों का वर्गीकरण हो चुका था। कट्टरपन्थी परम्परा ने छुआछूत जैसी बीमारी को समाज में फैला रखा था। बाणभट्ट ने हर्षचरित के पञ्चम उच्छ्‌वास में २१ धार्मिक सम्प्रदायों का उल्लेख किया है। सूत, पाराशव आदि जातियाँ वर्णसंकरणजन्य थीं। समाज में आठ प्रकार के विवाहों की मान्यता प्रचलित थी, किन्तु प्राजापत्य विवाह की ही प्रशस्त मान्यता थी। बहु-विवाह सम्पन्नता का सूचक था। स्वयंवर का प्रचलन नहीं था फिर भी कन्या के अनुरूप

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वर का होना अपेक्षित माना जाता था। बाल-विवाह नहीं होते थे। स्त्री-शिक्षा प्रचलित थी। सती-प्रथा भी विद्यमान थी, दासी-प्रथा का प्रचलन था। युद्ध में पराजित शत्रुओं की स्त्रियों को दासी बनाकर महल में रखा जाता था। वेश्याएँ नृत्य आदि द्वारा सम्भ्रान्त जनों का मनोविनोद करती थीं किन्तु उनका एक कलाकार के रूप में समाज में सम्मान भी किया जाता था। इस प्रकार बाणकालीन एक सम्भ्रान्त समाज था। वैदिक परम्परा का पालन कठोरतापूर्वक होते हुए भी उसमें लचक आ गयी थी। स्वयं बाणभट्ट इसके उदाहरण थे। वे ब्राह्मण होते हुए भी निम्न वर्ण के मित्रों के साथ खाने-पीने में परहेज नहीं करते थे। स्त्रियाँ भी प्रव्रज्या धर्म स्वीकार कर सकती थीं।

बाणभट्ट के समय भारत का मुख्य व्यवसाय कृषि ही था। इसके अतिरिक्त वाणिज्य व घरेलू उद्योग-धन्धों के द्वारा भी आय होती थी। सोना-चाँदी तथा ताँबा के सिक्कों व मोहरों तथा कार्षापण का प्रचलन था। विदेशी-व्यापार पूर्वी द्वीपसमूह, तिब्बत, चीन, ईरान आदि देशों के साथ होता था। व्यवसाय वर्णों पर आश्रित था। ब्राह्मण लोग शिक्षा व पौरोहित्य के अतिरिक्त मन्त्री व गुरु के पद का कार्य भी करते थे। इनका समाज में आदर व सम्मान सर्वोपरि था। ये समय-समय पर सदुपदेश भी दिया करते थे। कृषि एवं वाणिज्य का काम मुख्यतया वैश्य वर्ग तथा रक्षा व युद्ध का कार्य क्षत्रिय वर्ण के जिम्मे था। शूद्र व अन्त्यज वर्ग के लोग भृत्यवृत्ति द्वारा जीविका-निर्वाह करते थे। इसके अतिरिक्त काव्य-पाठ, नृत्य, संगीत, चित्रकला आदि के द्वारा भी जीविका-निर्वाह होता था। सारांशतया उस समय की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ थी। उज्जयिनी के वर्णन-प्रसङ्ग में बाणभट्ट ने उसके वैभव का सजीव चित्र प्रस्तुत किया है जिससे उस समय की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दशा की सुदृढ़ व्यवस्था का पता चलता है।

रीति-रिवाज—बाणभट्ट के समय तक समाज में वैदिक परम्पराओं, कर्मकाण्डों का बोल-बाला था। षोडश संस्कार यथावत् प्रतिष्ठा को प्राप्त थे। इनके अतिरिक्त बौद्धयुगीन तंत्र-मन्त्र, झाड़-फूंक का भी समाज में प्रचलन था। विष्णु, शिव और देवी की उपासना समान रूप से प्रचलित थी। भगवान् शिव जन-साधारण से लेकर राज-परिवार सभी के प्रधान उपास्य थे। मनोरञ्जन के लिए जुआ खेलना भी समाज में मान्यता प्राप्त था। गणिका और वारविलासिनियाँ नृत्य और संगीत के द्वारा लोगों का मनोरञ्जन करती थीं।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शारीरिक स्वास्थ्य को अक्षुण्ण बनाये रखने हेतु नित्य व्यायाम की व्यवस्था थी। इसके लिए व्यायामशालाएँ बनी हुई थीं, जहाँ व्यायाम की शिक्षा की भी व्यवस्था थी। आश्रम-व्यवस्था के अनुसार लोगों का जीवन चलता था। कुमारावस्था के आगमन में ही बालकों को गुरुकुलों में अध्ययन हेतु भेज दिया जाता था जहाँ से शिक्षा समाप्त करने के उपरान्त गुरु से आज्ञा प्राप्त करके ही वापस घर लौटते थे। शिक्षा की व्यवस्था उनके भावी जीवन को ध्यान में रखकर की जाती थी। शिक्षा-समाप्ति के पश्चात् ही व्यक्ति का सामाजिक जीवन प्रारम्भ होता था। विवाह करके गृहस्थाश्रम चलाना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य था।

बाणभट्ट ने कादम्बरी के अन्तर्गत राजकुल, ऋषिकुल और शवरकुल के दैनिक जीवन का वर्णन किया है। राजकुल में शूद्रक, तारापीड और चन्द्रापीड के साथ ही मन्त्रियों के परिवारों की दिनचर्या का; ऋषिकुल में जाबालि आश्रम, महाश्वेता, कादम्बरी आदि गन्धर्वकुल का तथा निम्न वर्ग में शवर-कुल की परम्पराओं का उल्लेख किया है।

कादम्बरी में शूद्रक व तारापीड दोनों ही संयमी, प्रतापी, प्रजापालक, विद्यानुरागी, कलाप्रेमी, कलाकार शासक हैं। शूद्रक सर्वगुणसम्पन्न होते हुए भी स्त्री-सुख के प्रति अनासक्त है। वह इससे बचने के लिए संगीत, चित्रकला, आखेट, शास्त्रचर्चा, धर्मकार्य आदि में अपना समय व्यतीत करता था। शूद्रक का समय शान्ति का समय था। युद्ध की विभीषिका समाप्त हो चुकी थी अतएव वह विभिन्न कलाओं के विकास और प्रजावर्ग के पोषण में ही अपना सब समय व्यतीत करता था। राजकुल का मुख्य परिधान श्वेत दुकूल (दुपट्टा) था। सेविकाओं को भी तलवार धारण करना पड़ता था। राजा स्वयं श्वेत रेशमी वस्त्र धारण करता था। चन्दन का लेप व पुष्पमाला श्रृंगार के आवश्यक अंग थे।

चाण्डाल-पुरुष के वेश-विन्यास वर्णन-प्रसङ्ग में बाणभट्ट ने आदिवासी संस्कृति का उत्तम चित्र उकेरा है। चाण्डालकन्या के साथ आया हुआ पुरुष वृद्ध होते हुए भी वलिष्ठ था। उसने श्वेत वस्त्र धारण कर रखे थे। उसके साथ पिञ्जरा लिये हुए बालक भी बालों में काकपक्ष का आभूषण धारण किये हुए था। स्वयं चाण्डालकन्या भी अलंकारों से अलंकृत थी जिनमें मणि-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जटित नूपुर, अलक्तक रंजितपाद आदि प्रधान थे। तात्पर्य यह कि बाणभट्ट का युग विलास एवं वैभव का युग था।

शबरकुल की जीवनचर्या का वर्णन करते हुए बाणभट्ट ने उनके जीवन को साधुजनगर्हित कहा है। शबरों में नरबलि सामान्य प्रथा थी। मधु-मांसादि भक्षण, शिकार करना, शराब पीना, परायी स्त्रियों को बलपूर्वक छीनकर अपनी पत्नी बना लेना, जंगल का राजा होकर भी जंगल को शून्य कर देना, इधर-उधर यायावरीय वृत्ति करना, चोरी करना आदि उनके जीवन-चर्या के सामान्य अंग थे।

बाणभट्ट ने जन्मोत्सव के समय होने वाले कार्यों का भी बड़ी सूक्ष्मता के साथ चित्रण किया है। प्रसूतिगृह को उस समय मणि, मन्त्र, औषधादि द्वारा सजाया और रक्षा-विधान किया जाता था। बीच में मंगलदीप जलाकर रखा जाता था। सम्पूर्ण कक्ष को चूने से पोत कर उस पर बालकों के चित्र व देवी-देवताओं के चित्र अंकित किये जाते थे। पुत्रजन्म के समय राजकुल में चारों तरफ लूट का दृश्य उपस्थित हो जाता था। दास-दासियाँ बलपूर्वक मनचाहे आभूषणादि को लूट लेती थीं। दुन्दुभी, मृदङ्ग, शंख, ढोल, नगाड़े आदि बाजों से सारा नगर कोलाहलमय हो जाता था। छोटे-छोटे राजा, सामन्त, रनिवास की स्त्रियाँ, नगरवासी और नौजवान वेश्याएँ मांगलिक नृत्य करती थीं। इस अवसर पर नानाविध धार्मिक कृत्य एवं यन्त्र-तन्त्र-मन्त्रों का भी विधान किया जाता था।

धर्म एवं दर्शन—बाणभट्ट के समय गुप्तकालीन संस्कृति अपने पूर्ण निखार पर थी। वैदिक धर्म एवं दर्शन का सर्वत्र प्रचलन था फिर भी उसमें कुछ शिथिलता-सी आती दीख पड़ती थी। बौद्ध दर्शन के साथ-साथ अन्य धर्मों की भी छाप लोगों के मन पर पड़ने लगी थी। धर्माश्रित कर्म करने का उपदेश दिया जाता था। अर्थ और भोग को धर्मानुकूल ही न्यायोचित माना गया था। तन्त्रसाधना, सांख्यविद्या और अनीश्वरवादी दर्शन के साथ ही शाक्त, वैष्णव व शैव दर्शनों की सत्ता बाण के समय विद्यमान थी। विष्णु-शिव-शक्ति आदि देवी-देवताओं के अतिरिक्त वनदेवी और अन्य बहुत-से देवताओं की पूजा समाज में प्रचलित थी। आश्रम-व्यवस्था का पालन कठोरता से होता था। संन्यास लेना ऐच्छिक हो गया था। स्त्रियाँ भी संन्यास व्रत का पालन कर सकती थीं। तपसाधना पुरुष और स्त्री दोनों समान रूप

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से करते थे। महाश्वेता और कादम्बरी दोनों ही अपने प्रेमी से मिलन पर्यन्त तप करती हैं।

सारांश यह है कि बाणभट्ट के समय सामाजिक दशा सब प्रकार से सुदृढ़ थी। युद्ध-विराम के कारण लोगों का ध्यान राष्ट्र को समृद्ध बनाने में था, अतः शासन कृषि एवं व्यापार की वृद्धि करने में लगा था जिससे प्रजावर्ग सम्पन्न था। सर्वत्र भोग-विलास का युग था। सती-प्रथा जैसी अनेक प्रथाओं का अन्त होता दीख पड़ता है। राज्यश्री, महाश्वेता, कादम्बरी आदि को सती होने से रोका गया है। शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार था। शिक्षा-मन्दिरों में व्यावसायिक शिक्षा वर्णानुकूल प्रदान की जाती थी। सदाचार व संयम शिक्षा का प्रधान विषय था। अतः बाणभट्ट का समय इतिहास में स्वर्ण-युग के नाम से जाना जाता है।

(९) प्रश्न—कादम्बरी के रस-योजना की विवेचना करते हुए अङ्गी-रस की समीक्षा कीजिए।

उत्तर—रस-योजना—कादम्बरी कथा को सुनाने वाले ऋषि जाबालि क्रान्तदर्शी कवि हैं। क्रान्तदर्शी ऋषि और कवि समप्रज्ञ एवं समानधर्मा होते हैं। क्रान्तदर्शी कवि का कर्म ही काव्य होता है। उसके कथा-श्रावण कर्म से तटस्थ सहृदय भी काव्य के तीर्थों विभाव, अनुभाव, सञ्चारीभावों में निमज्जन करता है। वह स्वसत्ता से निरपेक्ष होकर कथा के पात्रों के जगत् में, उनके सुख-दुःखात्मक लोक में लीन हो जाता है। इसलिए कथा सुनते-सुनते या पढ़ते-पढ़ते वह तृप्ति का आह्लाद अनुभव करने लगता है, वञ्चना से आहत हो उच्छ्वास भरने लगता है अथवा शोक से विह्वल अश्रुधार बहाने लगता है। बाणभट्ट की कादम्बरी-कथा पढ़कर भी पाठक का चित्त एक साथ विस्मय, आनन्द, शोक, उत्साह आदि भावों का रस-सीमा तक आस्वाद प्राप्त करता है। श्रेष्ठ कवियों की पंक्ति में गिने जाने वाले कालिदास, बाण आदि की अद्भुत प्रतिभा से ही अलोकसामान्य काव्य-सर्जना सम्भव होती है जो प्रतीयमान अर्थ द्वारा सहृदयों के हृदय को द्रवित कर आह्लाद पूरित करने की क्षमता रखती है।

कथा का रस काव्य-रस से किञ्चिद् भिन्न होता है। परिणाम दोनों का एक होने पर भी माध्यम-भेद है। काव्यानुशीलन से पाठक एक शान्त-प्रवाह वाली निर्मल धारा में निमज्जन करता है जबकि कथा विस्मयजन्य आनन्द

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की प्रस्रविणी है, जहाँ शोक, रति, उत्साह, क्रोध, हास्य, अद्भुत एवं निर्वेद सब पराकाष्ठा तक पहुँचा कर रस-स्थिति में परिणत किये जाते हैं। चन्द्रोदय के साथ समुद्र में उठने वाले ज्वार की भाँति ही कथाकार द्वारा अनूदित अतिमानवीय यथार्थ भी यहाँ पाठक में साधारणीकरण करवा देता है। कौतूहल तत्त्व कथा में रमाये रखने की अद्भुत क्षमता प्रदान करता है। वैशम्पायन शुक का वर्णन सुनने को शूद्रक की सभा कौतूहल से अभिभूत हो कह उठती है—

'अपनयतु वः कुतूहलम्, आवेदयतु भवान् आदितः प्रभृतिः कात्स्न्येंनात्मनो जन्म, कस्मिन्देशे भवान्कथं जातः, केन वा नाम कृतम्, का ते माता, कः ते पिता, कथं वेदानामागमः, कथं शास्त्राणां परिचयः, कुतः कला आसादिताः, किं हेतुकं जन्मान्तरानुसारणम्, उत वरप्रदानम् अथवा विहङ्गवेशधारी कश्चिच्छन्नं निवससि, क्व वापूर्वमुषितम्, कियद्वा वयः, कथं पञ्जरबन्धनं, कथं चाण्डालहस्तगमनम् इह वा कथम् आगमनम् इति।'

इस प्रकार श्रोताओं के मन में चरम कौतूहल जागृत कर बाणभट्ट ने वैशम्पायन तोते के मुख से आगे की कथा को विस्तार दिया है। बाणभट्ट ने कथा में जगह-जगह पर इस कौतूहल को जगाये रखा है। सर्वप्रथम जाबालि मुनि के आश्रम में शान्तहृदय आत्माराम ऋषियों के हृदय में उपरोक्त कौतूहल को जाबालि मुनि के कथन—'स्वस्यैवाविनयस्य फलमनेनानुभूयते' के द्वारा जागृत किया। तब ऋषिमण्डली बरबस कह उठती है—'हे तात ! सकलेयमाश्चर्यश्रवणकुतूहलाकलितया समुपस्थिता तापसपरिपदाबद्धमण्डला प्रतीक्षते।'

इस प्रकार श्रोताजन में उत्सुकता जागृत कर दी गयी; यह जरा-सा मृतप्राय शुकशावक और कोई बड़ी अविनय, दोनों छोरों में एक सूत्र 'कथं एवं जातम्' = ऐसा क्या हुआ ? प्रबल जिज्ञासा, उससे भी बड़ी उत्सुकता, बिना जाने हुए जैसे चैन ही नहीं मिलेगा, तभी तो तपस्विजन भी भगवद्-चर्चा छोड़कर मण्डल बनाकर कथा सुनने हेतु बैठ गये। सुनने की बलवती उत्कण्ठा उत्पन्न हो चुकी थी, आश्चर्य को सुनने के कुतूहल से परिपूर्ण हृदय होकर उत्कट प्रतीक्षा करने वाले ऋषियों से जाबालि मुनि ने कहा—'कथा तो बहुत बड़ी है किन्तु यदि कौतूहल है तो सुनो'—यहीं से तारापीड के पुत्र और कादम्बरी कथा के नायक चन्द्रापीड की कथा भी प्रारम्भ हो जाती है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लम्बे-लम्बे वर्णनों में कथासूत्र छिन्न-भिन्न होने पर भी कवि शब्दचित्रों के द्वारा पाठक की रस-पिपासा को शान्त कर देता है, वहाँ कादम्बरी कथा काव्य का रूप ले लेती है। कथा के साथ चलता श्रोता-समुदाय पर्वतशिखर पर पहुँचकर पर्वत पार के दिव्य रहस्यमय साक्षात्कार करने के लिए अच्छोद सरोवर पर विश्राम करता है। यहाँ अपनी व्यय हुई उत्सुकता-राशि को पुनः सञ्चित करता है। जाबालि मुनि का आश्रम विन्ध्यारण्य का शान्त तरुमूल था। श्रोता भी वीतराग तपस्वि-परिषत् थी, इसलिए कथा-धारा शान्त सुस्निग्ध मन्द्र सान्द्र वेग में प्रवाहित हो रही थी, किन्तु अच्छोद सरोवर पर कथा का श्रोता चन्द्रापीड दिव्य संगीत की रागिनी का मर्मज्ञ, राजनीति-कुशल, विजिगीषु युवराज है और कथाश्राविका साक्षात्प्रज्ञास्वरूपिणी महाश्वेता हो जाती है, इसलिए कथा की धारा भी नये कौतूहल और अधीर कर देने वाले अभूतपूर्व वृत्तान्त पूर्ण से रमणीयता को निखार देती है।

चन्द्रापीड के विनय, सहानुभूतिपूर्ण जिज्ञासा से महाश्वेता के मर्म में वर्षों से दबी हुई रागवृत्ति भावुकता के प्रवाह में अश्रुधारा बन वह चली। वह बरबस रो पड़ी और इतना रोयी कि आँखें लाल हो गयीं, फिर तत्काल ही आँखें पोंछ लीं और उष्ण निःश्वास ले धीरे-धीरे उस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—'कुछ भी तो नहीं है सुनने योग्य मुझ हतभागिनी के विषय में, फिर भी यदि कुतूहल है तो सुनिए'।

इस प्रकार बाणभट्ट ने स्थान-स्थान पर कथा के वक्ता और श्रोता में परिवर्तन लाकर नये रस की सर्जना द्वारा श्रोता अथवा पाठक को रसभरित रखा है। वास्तव में रस तो सहृदय में ही निक्षिप्त रहता है। काव्य और कथा केवल प्रतीति के माध्यम मात्र है। कौतूहल ही वास्तविक रस की कुञ्जी है—कौतूहल—कुछ नया जानने की जिज्ञासा और यह नवीनता ही सौन्दर्य है। कौतूहल—रहस्य जानने का—रहस्य जानना ही दर्शन है, प्रमेय है। कौतूहल जो उत्पन्न कर सके—'कथमिदं कथमेवम्' के रहस्यों को अनावृत करने वाली सुधानिष्यन्दिनी वाणी ही बाणभट्ट की कथा कादम्बरी है। 'कथा' 'कथं' इस कौतूहल का उत्तर हो, यह भी कथा का निर्वचन हो सकता है। बाणभट्ट ने कथा शान्त रस में प्रारम्भ कर अच्छोद सरोवर पर पहुँचकर रस की धारा को शृंगार में मोड़ दिया है। यह शृंगार रस ही कथा का अङ्गी रस है। इसका पोषण करुण, वीर, अद्भुत और हास्य एवं शान्त रसों से होता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

यद्यपि रौद्र, भयानक और बीभत्स रस मुख्य प्रबन्ध का भाग व्याप्त नहीं करते फिर भी शबरसेनापति के चित्रण में, चण्डिकायतन एवं पुजारी के स्वरूप चित्रण में भयावह रहस्यमय परिवेश अवश्य मूर्त हो उठा है। जाबालि के आश्रम में भी भयमिश्रित शान्त वातावरण का चित्रण है। शबरसेना तथा चन्द्रापीड का मृगया-विदार बीभत्स रस का उपकरण बनकर प्रयुक्त हुआ है।

कादम्बरी-कथा आत्मवृत्त पद्धति द्वारा विकसित हुई है। प्रारम्भ में बाणभट्ट ने अपने मुख से कथा की प्रस्तावना प्रस्तुत की है तत्पश्चात् कथा का सूत्र वैशम्पायन शुक सम्भाल लेता है। वैशम्पायन शुक के कथारम्भ से करुण रस का कथा में उद्दीपन होता है। वैशम्पायन की कथा के श्रोता राजा शूद्रक व उनके सभासद हैं। जाबालि मुनि के आश्रम तक पहुँचाकर वैशम्पायन विराम करता है और कथा को आगे बढ़ाने का कार्य जाबालि मुनि स्वयं करते हैं जहाँ शान्त तपस्वी-समुदाय श्रोता हैं। जाबालि मुनि कथा को अच्छोद सरोवर तक ले जाते हैं। यहाँ तक कथा में शान्त रस ही प्रधान रस होता है। अच्छोद सरोवर से ही वास्तविक कादम्बरी कथा प्रारम्भ होती है और कथा का सूत्र तपस्विनी महाश्वेता के हाथों में आ जाता है तथा कथा का श्रोता चन्द्रापीड होता है। महाश्वेता द्वारा कही गयी कथा शृंगार-प्रधान है। इसमें कवि ने अपना हृदय खोल दिया है। शृङ्गार रस के पोषक विभिन्न अंगों का बड़ी ही सूक्ष्मता से निरूपण किया है। संक्षेप में कादम्बरी कथा की रस-योजना इस प्रकार है—

करुण रस—कादम्बरी कथा की प्रस्तावना वैशम्पायन तोते द्वारा शूद्रक की सभा में अपनी करुण-गाथा सुनाने से प्रारम्भ की गयी है। शबर-सेनापति द्वारा उसके एकमात्र आश्रयदाता वृद्ध पिता की नृशंस हत्या का वृत्तान्त बरबस ही श्रोता या पाठक की आँखों को नम कर देता है। करुणा का दूसरा स्थल तारापीड और विलासवती द्वारा सन्ततिहीनता के लिए किये गये विलाप व नियति के समक्ष अपनी असहाय स्थिति को स्वीकारने का है। पुण्डरीक की मृत्यु पर महाश्वेता और कपिञ्जल, वैशम्पायन की मृत्यु पर चन्द्रापीड की प्राणान्तक वेदना करुण रस के आस्वादन के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करता है।

वीर रस—युवराज चन्द्रापीड का दिग्विजय हेतु प्रस्थान और नगर की स्त्रियों द्वारा उस रूप की गरिमा और महिमा का अनुभव करना तथा कराया

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाना वीर रस की मनोहारी एवं ओजस्वी छटा कथा में विकीर्ण करता है। यहाँ चतुरङ्गिणी सेना का पूर्ण उत्साह के साथ नगर से प्रस्थान तथा चरणों से पृथ्वी के कम्पन व सिंहनाद रोमाञ्च उत्पन्न करते हैं जो विना युद्ध के ही विजय का अनुभव कराने वाले हैं।

हास्य रस—कथा में सुरभिपूर्ण हास्य राजभवन की सुन्दरियों के संभ्रम में निखर उठा है जहाँ वे प्रसाधन तथा वस्त्र पहनने के उलटे-पुलटे क्रम में स्वयं तो बेसुध हैं ही, पाठक भी मानो उनके विचित्र वेश-भूषा का दर्शक बनकर हँसते-हँसते लोटने को वाध्य हो जाता है। कादम्बरी की प्रिय सारिका कालिन्दी और शुक परिहास के विवाह और प्रथम कलह में विदग्ध जनों को परिष्कृत और विचित्र हास्य की फुहार दीख पड़ती है। अन्य कई स्थलों पर भी इस प्रकार के हास्य की फुहारें पाठकों को आर्द्र करती हैं।

अद्‌भुत रस—कादम्वरी में आद्योपान्त अद्‌भुत उपाख्यानों का गुम्फन हुआ है। चाण्डालकन्या के वर्णन से लेकर शुक का मानवीय गिरा में वैदुष्य पूर्ण आख्यान, जाबालि आश्रम, इन्द्रायुध घोड़ा, अच्छोद सरोवर, कपिञ्जल का आकाश में उड़ना, देव-मानव योनियों का सम्बन्ध होना, पक्षियों का मनुष्यवत् व्यवहार, शाप द्वारा जन्म-मृत्यु नियन्त्रण, पूर्व जन्मों की स्मृति, शव का पुनः जीवित हो उठना आदि अति मानवीय तत्त्व कथा में विस्मय-जन्य आनन्द की प्रतीति कराते हैं।

रौद्र, भयानक, बीभत्स रसों का प्रवन्ध में विभिन्न स्थलों पर उद्दीपन किया गया है। शवरसेनापति के चित्रण में रौद्र, भयानक और बीभत्स तीनों का आनन्द मिलता है। चण्डिकायतन एवं पुजारी के स्वरूप चित्रण में भयावह रहस्यमय परिवेश मूर्त्त हो उठा है। जावालि के आश्रम में भी शान्ति के साथ भयमिश्रित वातावरण की सृष्टि की गयी है। शवरसेना तथा चन्द्रापीड का मृगयाविहार बीभत्स रस का उपकरण बनकर प्रयुक्त हुआ है।

शान्त-रस—कादम्वरी कथा में शान्त रस को भी बाणभट्ट ने पर्याप्त स्थान दिया है। महामन्त्री शुकनास लौकिक आचार में निर्वेद शिक्षा द्वारा तटस्थ पूर्वाग्रहमुक्त दृष्टि का रोपण कुमार चन्द्रापीड में करते हैं। इस सन्दर्भ में यौवन, लक्ष्मी, राज्याधिकार, आभिजात्य आदि अवस्थाओं की ऐसी निर्मम भर्त्सना की गयी है कि कल्याण का इच्छुक व्यक्ति इन सबके भयावह परिणाम

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

से सदा सावधान रहे। श्वेतकेतु, शुकनास, जाबालि और कपिञ्जल तीनों ही इस कथा में लोक-स्वस्ति हेतु उपदेश करते हैं। कपिञ्जल अपने मित्र पुण्डरीक को जिस रीति से कामासक्त दशा में आत्मालोचन को प्रेरित करता है वह अनुभव एवं मित्रप्रेम की गहनता से उत्पन्न शुभकरी शिक्षा परम आत्मिक शान्ति प्रदान करती है। ये ऋषि-कल्प सुख-दुःखमय जगत् में रहकर भी इससे ऊपर उठे हुए, जल में पद्मपत्र की भाँति निर्लिप्त चित्रित किये गये हैं। बाणभट्ट की कथाशैली रोचकता के साथ रहस्यों को परत-दर-परत खोल देती है और अधिकाधिक विराट लोक के दर्शन कराती है।

भावों के चित्रण में बाणभट्ट ने मैत्रीभाव को सर्वोपरि स्थान दिया है। चन्द्रापीड-वैशम्पायन, पुण्डरीक-कपिञ्जल, कादम्बरी-महाश्वेता, चन्द्रापीड-पत्रलेखा, महाश्वेता-तरलिका, कादम्बरी-मदलेखा, तारापीड-शुकनास आदि ऐसे युग्म हैं जो मानव में निहित हार्दिक, मानसिक एवं आत्मिक सौन्दर्य का परिचय मित्रप्रेम की कसौटी पर खरा प्रस्तुत करते हैं। विशेषकर चन्द्रापीड, कादम्बरी और कपिञ्जल मानों मित्र के लिए ही जीते हैं। ऐसे उदात्त मानवीय मित्रप्रेम के उदाहरण विश्व-साहित्य में अन्यत्र कम ही मिलते हैं।

मैत्री भाव के बाद वात्सल्य भाव, गुरुभक्ति और स्वामिभक्ति तथा देव-भक्ति को स्थान मिला है। वस्तुतः बाण का व्यापक लोकानुभव एवं मानव मन की परख ने उन्हें मानवीय संवेदना के प्रत्येक पटल को पहचानने और तथैव अभिव्यक्त करने की अद्भुत क्षमता प्रदान की थी, इसलिए कोई भी उदात्त भाव या मानवीय सम्बन्ध बाण की सूक्ष्मेक्षिका दृष्टि से बचा नहीं है। बाणभट्ट की विलक्षण रसमयता से सराबोर सुधी पाठक को गुण-दोषमन्थन का अवकाश ही नहीं मिलता है। विभावानुभावसंचारीभावों का साङ्गोपाङ्ग चित्रण कादम्बरी-कथा की महती उपलब्धि है। विशेषकर श्रृङ्गार रस अपने शास्त्रीय भेदोपभेद सहित रसराज की उपाधि को सार्थक कर रहा है। रस का सीधा सम्बन्ध साधारणीकरण की प्रक्रिया से है। बाणभट्ट ने आश्रम में अनुभूतियों की विविधता का प्रतान खड़ा करके नानाप्रकृत्यात्मक लोक की भिन्न-भिन्न रुचियों और चेष्टाओं के अनुरूप सह-अनुभूति को पर्याप्त अवसर प्रदान किया है। कादम्बरी और महाश्वेता के पूर्वराग तथा विप्रलम्भ का सर्वाङ्गपूर्ण निदर्शन प्रस्तुत कर दिया है। यह प्रकरण अत्यन्त विस्तृत एवं विशद है तथापि एकरसताजन्य ऊब नहीं होती है। इसका कारण मनो-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

धरातल पर इन भावों का इतना सामान्यीकृत होना है कि वे स्वानुभूति से प्रतीत होते हुए भी पाठक के लिए उद्वेगकारी नहीं होते। बाणभट्ट विभिन्न कामदशाओं, सञ्चारीभावों, अनुभावों के चित्रण में सफल एवं कुशल कलाकार के रूप में उभरे हैं। मनुष्य के भीतर काम के समुज्ज्वल प्रकाश एवं ऊर्जा का यथार्थ एवं सूक्ष्म चित्रण बाणभट्ट की महती उपलब्धि है। पुण्डरीक को देखकर महाश्वेता की दशा उसके अपने शब्दों में स्वानुभूति की सीमा तक स्पष्ट एवं यथार्थ रूप में वर्णित है—

'इति विचिन्तयन्तीमेव मामविचारितगुणदोषविशेषो रूपैकपक्षपाती नव-यौवनसुलभः कुसुमायुधः कुसुमसमयमद इव मधुकरीं परवशामकरोदुच्छ्वसितेः सह। विस्मृतनिमिषेण किञ्चिदामुकुलितपक्ष्मणा जिह्मिततरलतरतारशारोदरे- दक्षिणेन चक्षुषा सस्पृहमापिबन्तीव किमपि याचमाना·········स्तम्भितेव लिखितेव, उत्कीर्णेव, संयतेव, मूर्च्छितेव, केनापि विधृतेव, निष्पन्दसकलावयव तत्कालाविर्भूतेनावष्टम्भेन, अकथितशिक्षितेनानाख्येयेन स्वसंवेद्येन केवलं न विभाव्यते, किं तद्रूपसम्पदा किं मनसा किं मनसिजेन किमभिनवयौवने- किमनुरागेण वा उपदिश्यमाना किमन्येनैव वा केनापि प्रकारेण अहमपि न जानामि कथं कथमिति तमतिचिरं व्यलोकयम्। उत्क्षिप्य नीयमानेव तत्समीप- मिन्द्रियैः पुरस्तादाकृष्यमाणेव हृदयेन, पृष्ठतः प्रेर्यमाणेव पुष्पधन्वना कथमपि मुक्तप्रयत्नमात्मानमधारयम्।

अनन्तरं च येऽन्तर्मदनेनावकाशमिव दातुमाहितसन्तानाः निरीयुः श्वास- मरुतः।

साभिलाषं हृदयमाख्यातुकाममिव स्फुरितमुखमभूत्कुचयुगलम्, स्वेदल- लेखाक्षालितेवागलल्लज्जा।

मकरध्वजनिशितशरनिपातत्रस्तेवाकम्पत गात्रयष्टिः। तद्रूपातिशयं द्रष्टु- मिव कुतूहलादालिङ्गनलालसेभ्योऽङ्गेभ्यो निरगाद्रोमाञ्चजालकम्।

अशेषतः स्वेदाम्भसा धौतश्चरणयुगलादिव हृदयमविशद्रागः।'

सम्पूर्ण महाश्वेता-प्रणयप्रसङ्ग शृङ्गार की सौ-सौ विधियों को प्रकाशित करता है। एक किशोरी के हृदय में किसी युवक को देखकर उठने वाले समस्त मनोव्यापारों, कामदशाओं एवं यौवनालङ्कारों को कवि ने वाणी प्रदान कर मुखर कर दिया है। शृंगार रस के सम्भोग एवं विप्रलम्भ दोनों पक्षों का क-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

ने विशेषतया निरूपण किया है। कादम्बरी की संघटना में करुणविप्रलम्भान्तर संभोग का ही अवकाश है जो समृद्ध कोटि का माना जाता है। कादम्बरी में सम्भोग शृङ्गार की केवल अभिव्यञ्जना मात्र है, विभिन्न अंग-उपाङ्ग सहित विशिष्ट विवेचन नहीं। इसके पीछे कवि का यह उद्देश्य निहित है—

'न विना विप्रलम्भेन सम्भोगः पुष्टिमश्नुते।
कषायिते हि वस्त्रादौ भूयान् रागो विवर्धते॥'

वाणभट्ट ने कादम्बरी में नायिका के २८ भेदों का निरूपण यौवनालंकार या सात्त्विक अलंकार के रूप में युक्तियुक्त किया है। मुग्धा नायिका की समस्त चेष्टाओं का निरूपण कादम्बरी और महाश्वेता के चरित्रों में समाविष्ट है। केयूरक, तरलिका, पत्रलेखा, मदलेखा, मालती आदि सन्देशवाहक के रूप में प्रयुक्त होकर शृङ्गार रस में दूत अथवा दूती सम्प्रेषण की महत्ता को स्थापित करते हैं। चार प्रकार के विप्रलम्भों में बाणभट्ट ने मान-विप्रलम्भ को कथा के लिए अनुपयुक्त मानकर त्याग दिया है। इस प्रकार कादम्बरी में शृङ्गार रस निरूपण में बाणभट्ट को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है।

(१०) प्रश्न—कादम्बरी की पात्र-योजना की विवेचना करते हुए निम्न चरित्रों पर संक्षेप में प्रकाश डालिए—१. शूद्रक, २. जाबालि, ३. तारापीड, ४. चन्द्रापीड, ५. शुकनास, ६. पुण्डरीक, ७. कपिञ्जल, ८. कादम्बरी, ९. महाश्वेता और १०. पत्रलेखा।

उत्तर—पात्र-योजना—बाणभट्ट ने अपनी कादम्बरी कथा में धरती से स्वर्ग तक तथा उज्जयिनी से हेमकूट तक विस्तृत क्षेत्र में बसे पात्रों का एकत्र संयोजन करके संश्लिष्ट एवं जटिल कथानक को स्वर एवं संवाद प्रदान किया है। साथ ही गीता की—

'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥'

इस उक्ति को चरितार्थ सिद्ध कर दिखाया है। वाणभट्ट ने वस्त्र बदलने और शरीर बदलने के बीच के अन्तर को समाप्त कर दिया है इसलिए उनके भौतिक जगत् के पात्र भी आत्मास्वरूप हैं। इनके पात्रों में मानव के अतिरिक्त पशु (इन्द्रायुध घोड़ा, गन्धमादन हाथी) तथा पक्षी (कालिन्दी मैना व परिहास तोता तथा वैशम्पायन शुक) एवं गन्धर्व तथा किन्नर आदि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की भूमिका प्रधान हैं। इनकी मानव-वाणी में स्पष्ट एवं संस्कृत संवाद कथा में प्राण संचार करने वाले हैं।

कवि अपने काव्य में पुरुषार्थचतुष्टय के किसी एक पुरुषार्थ को अपना लक्ष्य बनाता है—उसे वस्तु से जोड़ता है। बाणभट्ट ने मानव-जीवन में काम को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान करते हुए इसके ऊर्जस्वल रूप को सृष्टिकर्त्ता कहा है। यह अपने कोमल रूप में मनसिज होकर मनोजगत् के नाना अघटित वृत्तों का सर्जक होता है। जो कुछ भी चेतन-अचेतन अथवा स्वप्न एवं आकांक्षा रूप में उदित होता है वह वस्तुतः काम का ही अप्रच्छन्न रूप होता है। कथानायक इस लक्ष्य को केन्द्र में रखकर ही लौकिक जीवन में प्रवृत्त होता है। उसके जीवन की, संघटना तथा कार्य की विविध अवस्था में ही काव्य की वस्तु के रूप में नायक के मानस के स्पन्दन भावों से क्रमशः रस रूप में प्रस्फुटित होती हैं। भारतीय काव्यशास्त्र में वस्तु तथा नायक परस्पर ग्रथित होकर लोक-प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होते हैं। जितना अधिक लोक-मानस नायक में अन्तर्भूत हो पाता है उतना ही कवि का कर्म सफल माना जाता है, क्योंकि नायक तथा पात्रों के चित्रण में द्विपक्षीय सन्तुलन स्थापित होता है जो कवि और पाठक को एक साथ जोड़े रहता है। पात्रों में कवि और सहृदय दोनों ही अपने को स्थित पाकर काव्य-विभावन के माध्यम बन जाते हैं।

उपर्युक्त आलोक में कादम्बरी की वस्तु क्रियात्मक सौन्दर्योन्मुख जीवन के धरातल पर केन्द्रित दीख पड़ती है। मानव उसका केन्द्रविन्दु है जो काल-देश की सीमा से परे सार्वभौम है। वह पूर्ण मानव है—मानव होने की प्रक्रिया में उसे विविध जीवन-स्तरों से जोड़ा गया है। भौतिक तत्त्व-प्रधान, मानसिक तत्त्व-प्रधान एवं आध्यात्मिक तत्त्व-प्रधान मानसोत्पन्न मानव काम का प्रतीक है। चन्द्रापीड इस दृष्टि से सहज ही चन्द्रमा का अवतार सिद्ध हो जाता है। भौतिक रूप में वह केवल चन्द्रापीड अथवा शूद्रक होते हुए भी अपने आत्मिक रूप में रसब्रह्म के आनन्द-विहार में नित्य रममाण है। कथा में शूद्रक की नायक रूप में अवतारणा धीरोदात्त नायक की आवश्यकता को पूरा करती है। मनुष्य के सर्वाङ्गीण विकास की कल्पना राजा शूद्रक के चरित्र में की गयी है। गुप्त युग के विदग्ध मानव के सभी गुण उसमें विद्यमान हैं जो जन्म-जन्मान्तरों के संस्कारों से निर्मित हैं। वह पशु-पक्षियों की भाषाओं का मर्मज्ञ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

है। पक्षी के मुख से कथा को सुनकर वह आगे की कथा उत्कण्ठापूर्वक चाण्डाल-कन्या से सुनता है। पूर्ण कथा सुनकर शूद्रक को ज्ञान का आलोक प्राप्त होता है और अपने प्रातिभ चक्षु से पूर्वजन्मों के वृत्तान्त को स्मरण कर वैशम्पायन नामधारी मित्र पुण्डरीक को पहचान गया। दोनों की शाप की अवधि इसी क्षण समाप्त होती है और शूद्रक मित्र वैशम्पायन के साथ कामाभिभूत हो कादम्बरी से मिलने पहुँच जाता है। इस प्रकार बाणभट्ट ने कथावस्तु बड़ी ही सजगता व सहजता के साथ अपनी अद्भुत चरित्र-चित्रण कला एवं पात्र-योजना से सँजोया है। कादम्बरी के चरित नायकों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

(१) शूद्रक—'मध्यदेशस्य अधिपतिः इतिहासप्रसिद्धः इन्द्र इव वीरः पृथ्वीपालकः चक्रवर्तिलक्षणोपेतः शिव इति विजितकामदेवः गङ्गाप्रवाह इवाप्रतिहतगतिः कर्त्ता महतामाश्चर्याणाम्, आहर्त्ता क्रतूनाम्, आदर्शः सर्वशास्त्राणाम्, उत्पत्तिः कलानाम्, कुलभवनं गुणानाम्, आगमः काव्यामृतरसानाम्, उदयशैलो मित्रमण्डलस्य, उत्पातकेतुरहितजनस्य प्रवर्त्तयिता गोष्ठीबन्धानाम्, आश्रयो रसिकानाम्, प्रत्यादेशो धनुष्मताम्, धौरेयः साहसिकानाम्, अग्रणीः विदग्धानाम्, वैनतेय इव विनतानन्दजननः वैन्य इव चापकोटिसमुत्सारितसकलारातिकुलाचलो शूद्रको नाम राजा आसीत्।

तस्य च राज्ञः कलिकाल-भयपुञ्जीभूत-कृतयुगानुकारिणी, त्रिभुवनप्रसवभूमिरिव विस्तीर्णा, मज्जन्मालवविलासिनीकुचतटास्फालनजर्जरितोर्मिमालया जलावगाहनागतजयकुञ्जर-कुम्भ-सिन्दूर-सन्ध्यायमानसलिलया उन्मद-कलहंस-कुल-कोलाहल-मुखरितकूलया वेत्रवत्या परिगता विदिशाभिधाना नगरी राजधानी आसीत्।' (कादम्बरी-कथामुख)

यह है बाणभट्ट द्वारा प्रस्तुत राजा शूद्रक का परिचय-सारांश। शूद्रक को बाणभट्ट ने कादम्बरी कथा में कथानायक और प्रधान श्रोता दोनों ही रूप में प्रस्तुत किया है। शूद्रक की सभा में एक दिन एक चाण्डालकन्या पिन्जरे में बन्द अद्भुत तोता लेकर उपस्थित होती है, जो सर्वशास्त्रज्ञ और संस्कृत भाषा में संवाद करने में पटु है। इस तोते द्वारा आर्या छन्द में अपनी स्तुति सुनकर सभी सभासद आश्चर्यचकित रह जाते हैं और सभी उसके वृत्तान्त को आद्योपान्त सुनने को आतुर हो उठते हैं। तब विश्रामोपरान्त सभा में वैशम्पायन नामधारी वह तोता सर्वप्रथम जाबालि आश्रम तक अपने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पहुँचने की कथा और जाबालि मुनि द्वारा वर्णित अपने शुकयोनित्व-प्राप्ति का वृत्तान्त सभा में सुनाता है। जाबालि मुनि अपने पुत्रों व शिष्यों को वैशम्पायन के पूर्वजन्मों का वृत्तान्त सुनाते समय इसी प्रसङ्ग में पुण्डरीक, कपिञ्जल, चन्द्रापीड, तारापीड, कादम्बरी व महाश्वेता के वृत्तान्तों का वर्णन करते हैं। पुण्डरीक ही वैशम्पायन और फिर वैशम्पायन तोता के रूप में आता है तथा चन्द्रमा पहले कपिञ्जल, फिर चन्द्रापीड और पश्चात् शूद्रक रूप में आता है। चन्द्रापीड कादम्बरी के वियोग में प्राण त्याग कर देता है तो कादम्बरी उसके शव को आकाशवाणी द्वारा पुनः जीवित होने का आश्वासन पाकर उसकी रक्षा करती हुई तपस्या करती है। इधर चन्द्रापीड की आत्मा शूद्रक के रूप में अवतरित होती है। तोते के वृत्तान्त के उपरान्त जब चाण्डाल-कन्या रहस्योद्घाटन करती है तो शूद्रक को अपना पूर्वजन्म स्मरण हो जाता है और अपने मित्र वैशम्पायन (तोता) के साथ शापमुक्त हो कादम्बरी से मिलने अच्छोद सरोवर पहुँचता है। वहाँ कादम्बरी और चन्द्रापीड का मिलन होता है।

इस प्रकार शूद्रक के चरित्र की महत्ता एक आदर्श प्रशासक के रूप में हुई जो विजितेन्द्रिय रहकर यौवनावस्था में भी वीतराग-सा जीवन व्यतीत करता है। वह चम्पक उद्यान में रहकर भी चञ्चरीक है। रमणियों के विलास से दूर रहने वाला है। लक्ष्मी का उपभोग करने पर भी मद रहित है। कामदेव का अवतार होने पर भी रमणी के प्रति उदासीन है। वह मनोरञ्जन हेतु ललित कलाओं का आश्रय लेता है। कथा का नायक होते हुए भी वह श्रोता मात्र प्रतीत होता है।

(२) जाबालि—इनका आश्रम विन्ध्य-मेखला में स्थित दण्डकारण्य में मालिनी नदी के तट पर शान्त उपवन में था। यहाँ अनेक ऋषि व राजकुमार शास्त्र-शिक्षा ग्रहण करने के लिए एकत्र ब्रह्मचर्य-जीवन पालन करते थे। महर्षि जाबालि सकुटुम्ब वहाँ निवास करते थे। वैशम्पायन के मुख से इनका वर्णन बाणभट्ट ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है—

'तस्य चैवंविधस्य मध्यभागमलंकुर्वाणस्य, अलक्तकालोहितपल्लवस्य, मुनिजनालम्बितकृष्णाजिन-जल-करक-सनाथशाखस्य तापसकुमारिकाभिरालवाल-दत्त-पीत-पिष्टपञ्चाङ्गुलस्य हरिणशिशुभिः पीयमानालवालकसलिलस्य, मुनिकुमारकाबद्ध-कुशचीरदाम्नो हरितगोमयोपलेपनविविक्ततलस्य, तत्क्षणकृतकुसुमोपहार-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रमणीयस्य नातिमहतः परिमण्डलतया विस्तीर्णावकाशस्य, रक्ताशोकतरोरधश्छायायामुपविष्टम्, उग्रतपोभिर्भुवनमिव सागरैः, कनकगिरिमिव कुलपर्वतैः, क्रतुमिव वैतानिकवह्निभिः, कल्पान्तदिवसमिव रविभिः, कालमिव कल्पैः, समन्तान्महर्षिभिः परिवृतम्, उग्र-शाप-कम्पितदेहया, प्रणयिन्येव विहितकेशग्रहया, क्रुद्धयेव कृतभ्रूभङ्ग्या, मत्तयेवाकुलितगमनया, प्रसाधितयेव प्रकटित-तिलकया जरया, गृहीतव्रतयेव भस्मधवलया धवलीकृतविग्रहम्, आयामिनीभिः पलित-पाण्डुराभिस्तपसा विजित्य.........बृहस्पतिमिवाजन्मवर्द्धितकचम्, दिवसमिवोद्यदर्कबिम्ब-भास्वर-मुखम्, शरत्कालमिव क्षीणवर्षम्, शन्तनुमिव प्रियसत्यव्रतम्, अम्बिकाकरतलमिव रुद्राक्षवलयग्रहणनिपुणम्, शिशिरसमयसूर्य्यमिव कृतोत्तरासङ्गम्, वडवानलमिव सन्ततपयोभक्ष्यम्, शून्यनगरमिव दीनाऽनाथविपन्नशरणम्, पशुपतिमिव भस्मपाण्डुरोमाश्लिष्ट-शरीरम् भगवन्तं जाबालिमपश्यम्।

अवलोक्य चाहमचिन्तयम्—अहो ! प्रभावस्तपसाम्। इयमस्य शान्तापि मूर्त्तिरुत्तप्तकनकावदाता परिस्फुरन्ती सौदामिनीव चक्षुषः प्रतिहन्ति तेजांसि, सततमुदासीनापि महाप्रभावतया भयमिवोपजनयति प्रथमोपगतस्य शुष्क-नलकाश-कुसुमनिपतितानल। चटुलवृत्तिनित्यमसहिष्णुस्तपस्विनां तनुतपसामपि तेजः प्रकृत्या दुःसहं भवति, किमुत सकलभुवनवन्दितचरणानामनवरततपःसलिलक्षपितमलानां करतलामलकवदखिलं जगदालोकयतां दिव्येन चक्षुषा भगवतामेवंविधानामघक्षयकारिणाम्। पुण्यानि हि नामग्रहणान्यपि महामुनीनां किं पुनर्दर्शनानि।'

(कथामुख-जाबालिवर्णनम्)

इस प्रकार बाणभट्ट ने कादम्बरी में महर्षि जाबालि और उनके आश्रम का जो चित्र खींचा है वह कोई कुशल चित्रकार की अप्रतिभ कल्पना का परिणाम है। जटाओं से लेकर शुभ्र महीन आच्छादन सहित वे पारदर्शी स्फटिक की मूर्ति से अन्तर्बाह्य धवल चित्रित किये गये हैं। वैशम्पायन तोते को देखते ही उनके मन पर करुण प्रतिक्रिया हुई। लोक से ऊपर उठा हुआ मनस्वी सामान्य प्राणी को इसी करुण दृष्टि से देखता है, फिर अपने अतल ज्ञान के निर्मल शान्त जल में उसका प्रतिबिम्ब धारण करता है; उसकी काया, मानस तथा आत्मा में संक्रान्त होकर 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' इस आप्त वचन को सिद्ध करता है। इतना कर लेने पर उसका भोगा हुआ, भोग्यमान और भोगा जाने वाला सत्य इस प्रकार उद्घाटित है जैसे सुनियोजित चिन्तन में अपना स्वयं का जीवन। स्व और पर का भेद मिटा देने वाली वृत्ति के जागृत

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हो जाने पर समस्त जगत् आत्मीयता के घेरे में स्वतः आ जाता है। जावालि मुनि क्रान्तदर्शी हैं, अतः वह आदि से अन्त तक की वैशम्पायन व चन्द्रदेव की कथा प्रत्यक्षदर्शी की भाँति वर्णन करते हैं। हस्तामलकवत् देश-काल की सीमाओं को तोड़ते हुए अतीत का प्रत्यक्षीकरण प्रस्तुत करते हैं। मानव की अनन्त सम्भावनाओं में इतिहास-दर्शन भी एक है। भारतीय मानव ने साहित्य, कला, दर्शन से अपने चिरन्तन रूप को अजर-अमर रखा। जावालि की इतिहासभेदिनी दृष्टि ने वैशम्पायन के व्याज से मानव-जीवन की रहस्यमय परतों को खोला और प्रतीक योनियों में देह धारण की परिकल्पना की। वे स्वयं स्थितप्रज्ञ एवं जल में पद्मपत्र की भाँति बिना आर्द्र हुए बिना आसक्त हुए लोकविचरण में समर्थ हैं। उनका हृदय स्वच्छ दर्पण है जिसमें लोक का प्रतिबिम्ब उभरता है और अभिव्यक्ति हेतु वाणी प्राप्त करता है।

(३) **तारापीड**—कथा के नायक चन्द्रापीड के पिता का नाम तारापीड है। वह उज्जयिनी के नरेश हैं। बाणभट्ट ने उनका प्रताप व परिचय देने से पूर्व उज्जयिनी के वैभव का निरूपण करने का उपक्रम किया है। तदुपरान्त अपने दीर्घ वर्णनों में राजा तारापीड को विष्णु से लेकर तत्काल प्रसिद्ध समस्त देवताओं से उपमित करते हुए श्रेष्ठ भारतीय राजाओं से उसकी उपमा देते हुए व्यतिरेक अलंकार और उत्प्रेक्षाओं के माध्यम से तारापीड का सर्व-प्रभुसत्तासम्पन्न गुप्तकालीन भारतीय सम्राटों के प्रतापातिशय को ध्वनित किया है।

बाणभट्ट ने कादम्बरी में तारापीड का वर्णन इस प्रकार किया है—

'तस्याञ्चैवंविधायां नगर्यां नल-नहुष-ययाति-धुन्धुमार-भरत-भगीरथ-दशरथप्रतिमः, भुजबलार्जितभूमण्डलः, फलितशक्तित्रयः, मतिमान्, उत्साह-सम्पन्नः, नीतिशास्त्राखिन्नबुद्धिः, अधीतधर्मशास्त्रः,.........ग्रहगण इव बुधानुगतः, मकरध्वज इवोत्सन्नविग्रहः, दशरथ इव सुमित्रोपेतः, पशुपतिरिव महासेनानुयातः, भुजगराज इव क्षमाभरगुरुः, नर्मदाप्रवाह इव महावंशप्रभवः, अवतार इव धर्म्मस्य, प्रतिनिधिरिव पुरुषोत्तमस्य, परिहृत-प्रजापीडो राजा तारापीडो नामाऽभूत्।'

विद्वानों एवं कवियों के लिए उसके मन में विशेष आदर था। शुकनास की विद्वत्ता का सम्मान करते हुए ही उसने उनको मन्त्री एवं अभिन्न मित्र का पद दिया था। धर्म, अर्थ और काम इन तीनों की उसने सम्यक् उपासना

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

की थी। रानी विलासवती के प्रति उसकी स्नेहमिश्रित सम्मान की भावना थी। अनपत्यता से खिन्न पत्नी को सहानुभूतिपूर्वक समझाता हुआ अधिकाधिक धार्मिक कृत्य के सम्पादन का उपदेश करता है। वह कर्मफल पर भी विश्वास रखने वाला है।

राजा तारापीड धीरोदात्त, प्रौढ़, अनुभवी और शास्त्रज्ञानी है। पुत्र-जन्म के शुभ समाचार को सुनकर भी वह शुभ मुहूर्त्त की प्रतीक्षा करता है ताकि उसके पुत्र का अनिष्ट न हो। चन्द्रापीड के पालन-पोषण एवं शिक्षा-दीक्षा संस्कार करने में तारापीड एक आदर्श पिता का धर्म-निर्वाह करता है। राजमहल से दूर एकान्त उपवन में शान्त आश्रम में राजकुमार की शिक्षा श्रेष्ठ आचार्य-वर्ग के सान्निध्य में सम्पन्न होती है। बारह वर्षों तक अनवरत रानी के साथ आश्रम में जाकर शिशु को स्नेह प्रदान करना पुत्र-वत्सलता का प्रमाण है। शिक्षा-समाप्ति के पश्चात् चन्द्रापीड को युवराज पद पर प्रतिष्ठित कर राज्यकार्य-सञ्चालन का स्वयं प्रशिक्षण देना प्रारम्भ कर देता है। प्रशिक्षणोपरान्त उसे दिग्विजय हेतु भेज देता है।

अन्तिम दिनों राजा तारापीड को पुत्र की मृत्यु का दुःखद सामना भी भी करना पड़ा। चन्द्रापीड के विवाह, राज्याभिषेक तथा अपने वनवास की व्यवस्था की मनोकामना उस समय धूमिल हो गयी जब कादम्बरी के विरह में चन्द्रापीड और वैशम्पायन की मृत्यु का दुःखद समाचार मिला। वह अपनी जीवनलीला समाप्त करने को उद्यत हुआ कि दिव्य वाणी द्वारा उनके पुन-रुज्जीवित होने का आश्वासन प्राप्त कर सकुटुम्ब अच्छोद सरोवर पर दोनों के पुनः जीवित होने पर्यन्त कठोर तप-साधना में लीन हो जाता है। अन्ततः सबके साथ मिलकर रहने का आनन्द अनुभव करके निर्विकार भाव से अरण्य-वास स्वीकार कर लिया। इस प्रकार तारापीड के चरित्र में बाणभट्ट ने कालिदास के रघुवंशी राजाओं के चरित्र को समुज्ज्वल रूप में प्रस्तुत किया।

(४) **शुकनास**—कादम्बरी कथा में शुकनास राजा तारापीड का प्रधान अमात्य के रूप में चित्रित है। प्रज्ञा, वैराग्य, योग्य, कर्मकौशल, वैदुष्य व सच्चरित्रता का धनी ब्राह्मण उस महान् राज्य के सञ्चालन में मन्त्रशक्ति का कार्य सम्पादन करता था। मस्तिष्क के निर्देशों की भाँति उसके निर्देशों का पालन प्रजा और स्वयं राजा तारापीड करते थे। राजा के दुःख-सुख का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सच्चा साथी होने के कारण वह उनका परमबन्धु भी था। बाणभट्ट ने शुकनास का चरित्र कादम्बरी की निम्न पंक्तियों में स्पष्ट वर्णन किया है—

'तस्य च राज्ञो निखिलशास्त्रकलावगाहगम्भीरबुद्धिः आशैशवादुपारूढ-निर्भरप्रेमरसः, नीतिशास्त्र-प्रयोगकुशलः, भुवनराज्यभारनौकर्णधारः, महत्स्वपि कार्यसङ्कटेष्वविषण्णधीः, धाम धैर्यस्य, स्थानं स्थितेः, सेतुः सत्यस्य, गुरुर्गुणानाम्, आचार्य आचाराणाम्, धाता धर्मस्य, शेषाहिरिव महीभारधारणक्षमः, सलिलनिधिरिव महासत्त्वः, जरासन्ध इव घटितसन्धि-विग्रहः, त्र्यम्बक इव प्रसाधित-दुर्गः युधिष्ठिर इव धर्मप्रभवः, सकलवेद-वेदाङ्गवित्, अशेषराज्यमङ्गलैकसारः, वृहस्पतिरिव सुनासीरस्य·········सर्वकार्येष्वाहितमतिरमात्यो ब्राह्मणः शुकनासो नामासीत्।'

शुकनास जैसे कर्त्तव्यपरायण मन्त्री को पाकर राजा तारापीड निश्चिन्त हो उसके ऊपर समस्त राज्यभार डालकर यौवन-सुख का अनुभव करते थे। अपने प्रज्ञाबल से राज्य के धुर-वहन का कुशलता से सम्पादन के कारण प्रजा में उसका सम्मान राजा की भाँति था। चन्द्रापीड के प्रति शुकनास के मन में प्रेम का सागर उमड़ता था। वह चन्द्रापीड के प्रति पितृवत् और गुरुवत् वात्सल्य भाव रखता था। विद्या प्राप्त कर लौटे हुए चन्द्रापीड को शुकनास द्वारा दिया गया उपदेश उपनिषदों, शास्त्रों एवं अनुभवों के निचोड़ से उद्भूत औषधिरस के समान यौवन, अधिकार, विद्या एवं रूप जनित मद से पीड़ित किसी भी युवा के लिए अनामयकारक है। धन साधन के रूप में ही सहायक होता है, साध्य बन जाने पर इसके अनेक कुपरिणाम सहज ही दिखाई देते हैं। राज्याधिकार भी कर्त्तव्य मानकर स्वीकार करने पर ही यश व प्रताप प्रदान करता है, भोग-प्रधान अधिकार व सत्ता लोभ में परिणत होते ही दुरुपयोग एवं तज्जन्य अनर्थ का जनक बन जाता है। शुकनास ने अत्यन्त संयत किन्तु सुदृढ़ शैली में ये विचार नवोदित राजा चन्द्रापीड को हृदयङ्गम कराये हैं। इससे एक ओर जहाँ शुकनास के गहन अनुभव, दूरदृष्टि तथा अमित ज्ञान का परिचय मिलता है वहीं उसके भव्य, सुदृढ़ तथा निर्लोभ विवेक की भी पुष्टि होती है।

इस प्रकार बाणभट्ट ने वस्तुतः शुकनास के चरित्र के रूप में मनुष्य में विद्यमान उस विवेक को ही निरूपित किया है जो उसके आत्मविकास के साधक विकल्पों में श्रेष्ठतम चुनाव करने की क्षमता व शक्ति प्रदान करता है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(५) **चन्द्रापीड**—कादम्बरी कथा का नायक चन्द्रापीड इस कथा में तीन जन्मों में कथानायक होता है। वह पूर्वजन्म में चन्द्रमा था जो शापवश मनुष्य योनि में राजा तारापीड के पुत्र रूप में उत्पन्न हुआ तथा अपने परम मित्र वैशम्पायन, जो पितातुल्य मन्त्री शुकनास का पुत्र और पूर्वजन्म का मित्र पुण्डरीक था, के शोक में उसके शुक होने का शाप सुनकर मित्र-वियोग में स्वयं भी प्राण त्याग देता है। अगला जन्म विदिशा में राजा शूद्रक के रूप में होता है। जिसकी सभा में उसका मित्र वैशम्पायन शुक रूप में चाण्डालकन्या द्वारा उपस्थित किया जाता है। कथा में शूद्रक के चरित्र को अधिक विस्तार न देकर चन्द्रापीड के चरित्र के रूप में ही निखार दिया गया है।

चन्द्रापीड का चरित्र प्रारम्भ से ही नायक के सभी गुणों से सम्पन्न प्राप्त होता है। वह परम सुन्दर, विनीत, उदारहृदय, वीर, रसिक, मृगयाप्रिय, असाधारणशक्तिसम्पन्न, शास्त्रज्ञ, नीतिज्ञ, कलामर्मज्ञ तथा पशु-पक्षी, हस्ति-वाहनादि विद्याओं का मर्मज्ञ चित्रित किया गया है। शिक्षा-प्राप्ति के पश्चात् वह इन्द्रायुध पर सवार हो राजप्रासाद में अतिविनीत भाव से प्रवेश करता है। पिता और पितातुल्य मन्त्री शुकनास के लिए समान रूप से आदर व विनय का प्रदर्शन करता है। शुकनास द्वारा दिये गये उपदेश वह बड़े मनोयोग से सुनता है। पिता द्वारा युवराज पद पर अभिषिक्त हो वह दिग्विजय को प्रयाण करता है। पूर्व दिशा से प्रारम्भ कर क्रमशः उसका विजय-अभियान उत्तर दिशा-विजय पर समाप्त होता है। एक दिन मृगया करते हुए किन्नर-मिथुन का पीछा करते हुए कैलाशशिखर पर स्थित अच्छोद सरोवर पर पहुँच जाता है। वहाँ वीणा की मधुर ध्वनि का अनुसरण करते हुए शिवमन्दिर में पहुँचता है। वहाँ उसकी मुलाकात एकाकिनी शिव-आराधना में तल्लीन गौरवर्णा परमसुन्दरी नवयौवना तपस्विनी महाश्वेता से होती है। अपनी उत्सुकता को शान्त करने के लिए परम विनीत भाव से उससे इस एकान्त वनवास के विषय में प्रश्न करता है। उत्तर में महाश्वेता अपना आद्योपान्त विरह-वृत्तान्त कह सुनाती है। चन्द्रापीड उसकी करुण-कथा सुनकर उसे सान्त्वना देता हुआ कहता है—

'भगवति ! क्लेशभीरुरकृतज्ञः सुखासङ्गलुब्धो लोकः स्नेहसदृशं कर्मानुष्ठा-तुमशक्तो निष्फलेनाश्रुपातमात्रेण स्नेहमुपदर्शयन्रोदिति। त्वया तु कर्मणैव

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सर्वमाचरन्त्या किमिव न प्रेमोचितमाचेष्टितम्, येन रोदिषि। ....धीरा हि तरन्त्यापदम्, इत्येवंविधैरन्यैश्च मृदुभिरुपसान्त्वनैः संस्थाप्य तां पुनरपि निर्झरजलेनाञ्जलिपुटोपनीतेनानिच्छतीमपि बलात्प्रक्षालितमुखीमकारयत्।'

इस प्रकार चन्द्रापीड को त्याग, शील, उदारता, वीरता, मृगया, कुशलता, दक्षता, सहानुभूति आदि से युक्त एक उदात्त नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इन सबसे बढ़कर कथा में चन्द्रापीड का रूप एक आदर्श प्रेमी का उभरा है। कादम्बरी के प्रथम दर्शन पर ही मुग्ध होने पर भी प्रणय-निवेदन में कोई जल्दबाजी नहीं करता है। वह पहले कादम्बरी की मानसिक स्थिति को जानने की इच्छा करता है—

'किमनेन वृथैव मनसा खेदितेन, यदि सत्यमेवेयं धवलेक्षणा मय्येवं जातचित्तवृत्तिस्तदा न चिरात् स एनामप्रार्थितानुकूलो मन्मथः प्रकटीकरिष्यति।'

वह कादम्बरी के सामने अपने को उसका प्रेम-भाजन बनने के अयोग्य घोषित करते हुए कहता है—

'न खलु चिन्तयन्नपि निपुणं तमात्मनोगुणमवलोकयामि यस्यायमनुरूपोऽयमनुग्रहातिरेकः।'

इस प्रकार कादम्बरी के साथ चन्द्रापीड के वार्तालाप को देखने से चन्द्रापीड की उदारता, शालीनता, कुलीनता और वाक्चातुर्य का उत्तम परिचय प्राप्त होता है। कादम्बरी के प्रति अपार प्रेम के कारण वह उज्जयिनी-गमन के पश्चात् भी उसके अनुराग को भूल नहीं पाता। केयूरक द्वारा कादम्बरी की विरह-व्यथा सुनकर वह उससे मिलने को आतुर हो उठता है। परन्तु एक आदर्श व विवेकी प्रेमी होने के कारण अपने पिता से अनुमति लेकर ही वह मिलने को प्रस्थान करता है। उसकी मित्रभक्ति भी सराहनीय एवं स्तुत्य है। उज्जयिनी से प्रस्थान करते समय ही सेनापति द्वारा अपने परम मित्र वैशम्पायन की मनोदशा का समाचार सुनकर वह व्याकुल हो उठता है और अनेक संकल्प-विकल्पों के झंझावात में उलझता हुआ अतिशीघ्र अच्छोद सरोवर पहुँचकर महाश्वेता से मिलकर अपने मित्र का समाचार पूछता है। महाश्वेता से उसके शापवश शुकयोनि को प्राप्त होने का वृत्तान्त जानकर उसके वियोग-व्यथा में चन्द्रापीड का हृदय विदीर्ण हो जाता है और वह इस आघात को न सह पाने के कारण पञ्चत्व में मिल जाता है। इसके पश्चात् अगले जन्म में चन्द्रापीड शूद्रक के रूप में जन्म लेता है। इसी योनि में शूद्रक के दरबार में

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुक रूप में वैशम्पायन उपस्थित होता है तथा कथा के अन्त में सभी शाप-मुक्त हो अपने-अपने सुखद व मधुर मिलन को प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार चन्द्रापीड के चरित्र में वाणभट्ट ने आदर्श धीरोदात्त कथा-नायक के सभी गुणों का समावेश किया है। वह परम सुन्दर, विनीत, शीलवान्, उदार, परिश्रमी, उच्चकुलोत्पन्न, साहसी, सहृदय, आदर्श प्रेमी, वीर योद्धा, सकल कला व विद्यानिपुण, पवित्र आचरण, आदर्श मित्र आदि गुणों से युक्त आदर्श कथानायक है।

(६) पुण्डरीक—वाणभट्ट ने कादम्बरी में जन्म-जन्मान्तर की मैत्री को आदर्श रूप दिया है। चन्द्रापीड की ही भाँति उसके परम मित्र वैशम्पायन को भी तीन जन्म लेने पड़ते हैं। वैशम्पायन पूर्वजन्म में पुण्डरीक था। महर्षि श्वेतकेतु के रूपमाधुरी पर मुग्ध हुई लक्ष्मी देवी ने मानसिक पुत्र के रूप में जन्म दिया था। यह परम सुन्दर तथा हृदय से दुर्बल प्रेमी युवक था। एक दिन अपने मित्र कपिञ्जल के साथ भ्रमण करते हुए अकस्मात् गौरवर्णा महा-श्वेता को देखा और देखते ही उसके असीम रूप-सौन्दर्य पर मुग्ध हो अपनी सुध-बुध खो वैठा। कपिञ्जल ने तपस्वीजनविरुद्ध आचरण के लिए उसे बहुत फटकारा परन्तु धैर्यविहीन पुण्डरीक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। महाश्वेता के चले जाने पर चन्द्रोदय देखकर उसकी प्रणय-वेदना और बढ़ जाती है और अपनी इस काम-वेदना में ही उसके प्राणपखेरु उड़ जाते हैं। वह महाश्वेता से पुनर्मिलन की प्रतीक्षा भी नहीं करता।

अगले जन्म में वह तारापीड के मन्त्री ब्राह्मण शुकनास के यहाँ वैशम्पायन रूप में जन्म लेता है। राजा तारापीड के पुत्र राजकुमार चन्द्रापीड का वह अनन्य समवयस्क मित्र है तथा इसका पालन-पोषण भी चन्द्रापीड के साथ ही होता है। अतः विद्या व कला में वह चन्द्रापीड के समान निपुण है। दिग्विजय-अभियान में वैशम्पायन भी चन्द्रापीड के साथ जाता है। चन्द्रापीड उत्तर दिशा में पहुँचकर अपनी सेना का पड़ाव कुसुमपुर नगर में डाल देता है। यहीं से चन्द्रापीड शिकार खेलते समय किन्नर-मिथुन का पीछा करते-करते अच्छोद सरोवर पहुँच जाता है जहाँ महाश्वेता से उसकी भेंट होती है तथा उसके माध्यम से कादम्बरी तक पहुँचता है। चन्द्रापीड के वापस उज्जयिनी लौट जाने पर वैशम्पायन एक दिन अच्छोद सरोवर का दर्शन करने जाता है और वहाँ महाश्वेता का दर्शन कर पूर्वजन्म की स्मृति हो आने से पुनः कामातुर हो

Kirtikant Sharma Collection, Rajasthan

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

जाता है। वह महाश्वेता से प्रणय-याचना करता है परन्तु महाश्वेता उसे नहीं पहचान पाती और उसे शुक योनि में जाने का शाप दे देती है। गन्धर्वकन्या के शाप से वैशम्पायन अपना भौतिक शरीर त्याग कर अगला जन्म शुक का प्राप्त करता है। इस प्रकार पुण्डरीक (वैशम्पायन) का यह दूसरा जन्म भी असफल प्रेमी के रूप में ही व्यतीत हुआ।

अगला जन्म शापवश शुकयोनि में हुआ जहाँ वह मुनिकुमार के द्वारा जाबालि मुनि के आश्रम में लाया गया। जाबालि मुनि ने तपस्वी जनों की तद्विषयिणी जिज्ञासा को शान्त करने के लिए उसके दोनों पूर्वजन्मों का वृत्तान्त कह सुनाया। अपने पूर्वजन्मों के वृत्तान्त को सुनते ही वैशम्पायन शुक को अपना पूर्वजन्म स्मरण हो आया और वह महाश्वेता से मिलने को आतुर हो उन्मत्त की भाँति जाबालि आश्रम से उड़ता है परन्तु बीच मार्ग में ही पकड़ा जाता है और लक्ष्मीरूपा चाण्डालकन्या द्वारा उपहार रूप में राजा शूद्रक (चन्द्रापीड) के दरबार में लाया जाता है। वहाँ शूद्रक के अनुरोध पर वह अपना आत्मवृत्त कहता है। शुक द्वारा आत्मवृत्तान्त समाप्त करने पर कथा के शेष रहस्यों पर से चाण्डालकन्या रूपा लक्ष्मी परदा उठाती है और शूद्रक तथा शुक दोनों ही अपने पूर्व योनि को प्राप्त होते हैं तथा सबका सुखद मिलन होता है। चन्द्रापीड का कादम्बरी के साथ तथा पुण्डरीक (वैशम्पायन) का महाश्वेता के साथ विवाह सम्पन्न होता है। बाणभट्ट ने पुण्डरीक के चरित्र को एक कामासक्त व्यसनी के रूप में प्रस्तुत करते हुए वासनामय प्रेम की बार-बार असफलता, अपूर्णता दिखाते हुए त्याग, तप व मर्यादित प्रेम को महत्त्व प्रदान किया है।

बाणभट्ट की सशक्त अभिव्यञ्जना-प्रधान शैली ने वैशम्पायन के चरित्र को अपनी अद्भुत कल्पना से आध्यात्मिक ढाँचे में ढाल दिया है। 'सोऽहमस्मि' की अखण्ड वृत्ति में परब्रह्म से साक्षात्कार करने वाला मनुष्य आध्यात्मिक स्तर पर ऋषि श्वेतकेतु का पुत्र पुण्डरीक है। श्वेतकेतु का प्रतीकार्थ है—श्वेत है केतु (ध्वज) जिसका अर्थात् शुद्ध सत्त्वप्रधान सृष्टि। यह सत्त्व-प्रधान सृष्टि ही प्रज्ञा की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती का आसन श्वेत कमल है। पुण्डरीक बनकर ही मनुष्य सतोगुणी वृत्ति के द्वारा सभी सांसारिक रंगों से निर्लिप्त विशुद्ध सत्त्व होकर मुक्ति अर्थात् महाश्वेता की उपासना करता है। महाश्वेता प्रज्ञा-स्वरूपिणी सरस्वती है। परन्तु वही पुण्डरीक जब अपना सत्त्वप्रधान ध

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

छोड़कर रज-प्रधान राग-द्वेषमय मानस प्राणी बन जाता है तो उसकी आसक्ति प्रज्ञा से हट जाती है और वह वासनाओं से निरन्तर आक्रान्त हो पतनोन्मुख हो जाता है। वैशम्पायन (पुण्डरीक) अच्छोद सरोवर पर पहुँचकर महाश्वेता के प्रथम दर्शन से ही सत्त्वप्रधान वृत्ति से भटक कर राग-प्रधान रजोगुणी वृत्ति से आकृष्ट हो अनधिकृत चेष्टाओं द्वारा काम के उच्छृंखल उद्धत रूप का प्रदर्शन वाला साधारण मनुष्य हो जाता है। उस पर कपिञ्जल के उपदेश; शिक्षा व संस्कार का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और वह पतनोन्मुख हो जाता है। अगले जन्म में भी वैशम्पायन अपनी रजः-प्रधान राग-द्वेषमयी वासनावृत्ति के कारण ही महाश्वेता और चन्द्रापीड के समझाने पर नहीं मानता और शाप का भाजन बन शुकयोनि को प्राप्त होता है। मनुष्य की यही इयत्ता है। वह मनुष्य से पतित हो धरती का दोपाया पशु बन जाता है। 'पशु' शब्द की व्युत्पत्ति है—'पश्यतीति पशुः'। जो अपनी इन्द्रियों में ही आत्मा की भ्रान्ति से ग्रस्त है, इन्द्रियों के कार्य को ही आत्मा के कार्य मानता है, वह पशु है। महाश्वेता ने उसकी उच्छृंखल वृत्ति के अनुरूप ही शुक होने का शाप दिया। महाश्वेता ने वैशम्पायन को पशु से पक्षी बना दिया—कल्पनारूपी पंख के सहारे उड़ने वाला विवेकी प्राणी शुक है। इसलिए तोता होते हुए भी वैशम्पायन मानवीय ज्ञान, वाणी, कला संवेदना का स्वामी है जिसके द्वारा शूद्रक को अपना पूर्वजन्म स्मरण हो आता है। इस प्रकार वैशम्पायन मनुष्य की समस्त क्षमताओं एवं दुर्बलताओं, गुणों और अवगुणों से निर्मित धरती का मरणधर्मा मनुष्य है। बाण की शरभ उद्भावना का निदर्शन—पुण्डरीक, वैशम्पायन और वैशम्पायन शुक वास्तव में साधारण लौकिक पूर्ण एक निरा मानव है जो नितान्त विश्वसनीय है, सार्वभौम एवं सार्वयुगीन है। जाबालि मुनि के शब्दों में वैशम्पायन का परिचय इस प्रकार है—

'तद्यः स कामोपहतचेताः स्वयंकृतादेवाविनयाद्दिव्यलोकतः परिभ्रश्यन् मर्त्यलोके वैशम्पायननामा शुकनाससूनुरभवत्। स एवैष पुनः स्वयंकृतेनाविनयेन कोपितस्य पितुराक्रोशान्महाश्वेताव्रताच्च सत्याधिष्ठानादस्यां शुकजातौ पतितः।'

(७) **कपिञ्जल**—कादम्बरी में वर्णित पात्रों में कपिञ्जल का चरित्र सबसे अलग व अयुग्म है। उसका सम्पूर्ण जीवन अपने मित्र पुण्डरीक के लिए ही समर्पित है। वह मित्र पुण्डरीक का सहचर ही नहीं उसका कवच भी है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

महाश्वेता के प्रति पुण्डरीक की कामुक चेष्टाओं को देखकर उसे फटकारता है। वह उसके हाथ से गिरी हुई अक्षमाला को उठाने वाली महाश्वेता को भी फटकारता है। पुण्डरीक को समझाता हुआ कहता है—

'सखे पुण्डरीक ! नैतदनुरूपं भवतः। क्षुद्रजनक्षुण्ण एष मार्गः। धैर्यधना हि साधवः। किं यः कश्चन प्राकृत इव विक्लवीभवन्तमात्मानं न रुणत्सि ? ···क्व ते तद्धैर्यम्, क्वासाविन्द्रियजयः, क्व तद्वशित्वं चेतसः, क्व सा प्रशान्तिः, क्व तत्कुलक्रमागतं ब्रह्मचर्यम्, क्व सा सर्वविषयनिरुत्सुकता, क्व ते गुरूपदेशाः, क्व तानि श्रुतानि, ······निरर्थकः संस्कारः। निरुपकारको गुरूपदेशविवेकः। निष्प्रयोजनं प्रबुद्धता। निष्कारणं ज्ञानम्। यदत्र भवादृशा अपि रागाभिषङ्गैः कलुषीक्रियन्ते, प्रमादैश्चाभिभूयन्ते। कथं करतलाद्गलितामपहृतामक्षमालामपि न लक्षयसि। अहो ! विगतचेतनत्वमपहृता नामेयम्। इदमपि तावद्ध्रियमाणमनया अनार्यया निवार्यतां हृदयम्।'

परन्तु कपिञ्जल के उपदेश का रागान्ध पुण्डरीक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। यह देख वह मित्र के प्राणों की भीख माँगता हुआ महाश्वेता से पुण्डरीक पर दया करने का अनुनय करता है। इस बीच पुण्डरीक महाश्वेता के विरह में अपने शरीर को छोड़ देता है। कपिञ्जल पुण्डरीक के शव को लेकर जाते हुए दिव्य ज्योति का अनुसरण करता है और तब तक उसका पीछा नहीं छोड़ता जब तक महाश्वेता और पुण्डरीक के पुनः मिलन का पूर्ण आश्वासन नहीं मिल जाता है। इसी क्रम में एक वैमानिक दिव्यात्मा के मार्ग का शीघ्रता में उससे उल्लंघन हो जाता है जिससे उसे अश्व होने का शाप मिलता है। कपिञ्जल ने अनुनय-विनय करके उनसे चन्द्रमा के चन्द्रापीड रूप में अवतार लेने पर उनका वाहन बनने का वरदान ले लिया जिससे वह अपने मित्र पुण्डरीक जो अगले जन्म में वैशम्पायन रूप में चन्द्रापीड का परम मित्र होगा, के सान्निध्य में रह सके। यह कपिञ्जल ही चन्द्रापीड के पास इन्द्रायुध घोड़े के रूप में उपहारस्वरूप उपस्थित होता है। दिव्य आत्मा ने उसे शापानुग्रह रूप में कहा था कि जिसका तू वाहन बनेगा उसकी मृत्यु के पश्चात् सरोवर में स्नान करते ही तेरा शाप समाप्त हो जायेगा और तू पुनः मानव-शरीर प्राप्त कर लेगा। चन्द्रापीड की मृत्यु पर पत्रलेखा उसे लेकर अच्छोद सरोवर में कूद गयी जहाँ से वह पुनः ब्राह्मणकुमार बनकर निकला था।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शुकयोनि में स्थित वैशम्पायन से उसकी भेंट जाबालि आश्रम में होती है। परन्तु योनिभिन्नता के कारण वह अपने मित्र को पहचान नहीं पाता। जाबालि मुनि ने जब शुक योनि प्राप्त वैशम्पायन को उसका पूर्वजन्मवृत्त सुनाया तो वह अपने मित्र कपिञ्जल की दशा देख व्याकुल हो उठा। वैशम्पायन द्वारा व्यक्त मनोदशा का भावार्थ इस प्रकार है—

'अस्थिमात्र अवशिष्ट उसकी दुर्बल छाती पर आधा टूटा यज्ञोपवीत विद्यमान था। मुझे देखकर दुःखित होने के कारण उसके नयनों में उमड़े हुए आँसू टपक रहे थे। मुमुक्षु होते हुए भी वह मेरा स्नेह नहीं त्याग सका था। वीतराग होता हुआ भी वह मेरा प्रिय तथा हित करने को सदा सन्नद्ध था। सांसारिक झमेले से दूर होते हुए भी सदा मुझसे मिलने को उत्सुक रहा। कोई चाहना न करते हुए भी निरन्तर मेरे हितसाधन के लिए बेचैन रहता था। ममताशून्य होने पर भी वह स्नेहसम्पन्न था। अहंकार रहित होते हुए भी वह मुझमें और अपने में कोई अन्तर नहीं मानता था। क्लेशों से परे होकर भी मेरे लिए ही सब क्लेश सह रहा था।'

शुक वैशम्पायन के उद्‌गारों से कपिञ्जल का जो चरित्र उभरकर सामने आता है वह एक आदर्श परोपकारी अनन्य मित्र का है। कपिञ्जल जैसा मित्र विश्व-साहित्य में ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलता। वह एक साथ ही शुभचिन्तक, गुरु, माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी, सखा-सहायक, यहाँ तक कि दास और भक्त तक की भूमिकाओं में पुण्डरीक के लिए उपस्थित होता है। वह अपने लिए नहीं अपितु अपने मित्र के लिए जीता और मरता है। निस्स्वार्थ प्रेमी का ऐसा अनूठा उदाहरण बाणभट्ट की अपनी प्रतिभा का ही परिणाम है।

(८) **कादम्बरी**— चन्द्रापीड के दो जीवनों की एक मात्र उपलब्धि कादम्बरी है। शृङ्गार रस-प्रधान कथा के नायक के समस्त प्रयत्नों का फल नायिका का स्थायी मिलन है। इस दृष्टि से नायिका का महत्त्व नायक से अधिक होता है, क्योंकि नायक साधक होता है और नायिका उसकी साध्या। बाणभट्ट ने साध्य में साधना के योग्य सम्भावनाओं को पूर्ण रूप से उकेरा है। रूप, गुण, शील मूलक सौन्दर्य का सन्धान करने में अपनी उर्वर कल्पना से कोई आयाम अस्पष्ट नहीं छोड़ा है।

कादम्बरी चित्ररथ नामक गन्धर्व की कन्या है। कादम्बरी की माता का नाम मदिरा है तथा आवासस्थान हेमकूट पर्वत पर स्थित राजधानी है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वह परमसुन्दरी, भावुक, सहृदय, कलाप्रिय एवं सहानुभूति आदि गुणों से युक्त स्वकीया नायिका है। वह महाश्वेता की अनन्य प्रिय सहेली है जो उसके प्रणय-भंग से दुःखी होकर स्वयं भी महाश्वेता के पुण्डरीक से मिलन एवं विवाह पर्यन्त अविवाहित रहने की गुरुतम प्रतिज्ञा किये हुए है।

कादम्बरी के इस निर्णय से उसके माता-पिता अत्यन्त दुःखी हुए। यह समाचार पाकर महाश्वेता ने अपनी प्रिय सखी को समझाने के लिए अपनी अन्तरङ्ग सखी तरलिका को उसके पास भेजा था। प्रत्युत्तर में केयूरक आकर बताता है—

'भर्तृदारिके महाश्वेते ! देवी कादम्बरी दृढदत्तकण्ठग्रहा त्वां विज्ञापयति। यदियमागत्य मामवदत्तरलिका तत्कथय किमयं गुरुजनानुरोधः, किमिदं मच्चित्त-परीक्षणम्, किं गृहनिवासापराधनिपुणोपालम्भः, किं प्रेमविच्छेदाभिलाषः, किं भक्तजनपरित्यागोपायः, किं वा प्रकोपः। जानास्येव मे सहजप्रेमनिस्यन्दनिर्भरं हृदयम्······सुहृददुःखखेदिते हि मनसि क्वैव सुखाशा क्वैव निर्वृत्तिः। कीदृशाः सम्भोगाः, कानि वा हसितानि। दिवसकरास्तसमयविधुरासु नलिनीषु सहवास-परिचयाच्चक्रवाकयुवतिरपि पतिसमागमसुखानि त्यजति, किमुत नार्यः। त्वत्प्रेम्णा चास्मिन्वस्तुनि मया कुमारिकाजनविरुद्धं स्वातन्त्र्यमालम्ब्याङ्गीकृत-मपयशः, समवधीरितो विनयः, गुरुवचनमतिक्रामितम्, न गणितो लोकाऽपवादः, वनिताजनस्य सहजमाभरणमुत्सृष्टा लज्जा, सा कथय कथमिव पुनरत्र प्रवर्तते। तदयमञ्जलिरुपरचितः प्रणामोऽयम्, इदं च पादग्रहणम्, अनुगृहाण मां। वनमितो गतासि मे जीवितेन सहेति मा कृथाः स्वप्नेऽपि पुनरिममर्थं मनसि।'

कादम्बरी के इन उद्गारो में उसके उदात्त हृदय की अभिव्यञ्जना निहित है। महाश्वेता चन्द्रापीड को हेमकूट पर्वत चलकर सरलहृदया, महानुभाव प्रिय सखी कादम्बरी से मिलने की अभ्यर्थना करती है तो महाश्वेता से कादम्बरी का परिचय सुनकर चन्द्रापीड स्वयं भी उसके दर्शन को उत्सुक होता है। प्रथम दर्शन में ही दोनों एक-दूसरे के प्रति सहज ही आकर्षित हो उठते हैं परन्तु काम के अजेय बल से अभिभूत होते हुए भी कादम्बरी सहज विवेक एवं धैर्य को नहीं खोती अपितु शान्त मन से आन्दोलित हृदय और गौरवमय वंश-परम्परा का सम्यग् विचार करती है। सखीजन तथा परिचारिकाओं के मध्य अपनी मर्यादा से स्खलित होने से ग्लानि अनुभव करती है। का

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के प्रभाव से अपने को विजित होते देखकर अपनी शक्ति और काम की दुर्निवारता की तुलना करती है।

वैशम्पायन के वियोग में जब चन्द्रापीड ने भी अपने प्राण त्याग दिया तब कादम्बरी भी पतिव्रता नारी की भाँति मनोनीत पति का अनुकरण करने के लिए उद्यत हुई। मृत्युमार्ग में भी उसका साहचर्य अनुभव करते हुए उसे मृत्युभय नहीं व्याप्त हुआ अपितु एक प्रकार का उत्सर्गजन्य आनन्द ही प्राप्त हुआ। कादम्बरी के दिव्य करस्पर्श से मृत चन्द्रापीड के भौतिक शरीर में अन्तर्हित दिव्य ज्योति प्रकट होते हुए वाणी रूप में श्रवणगोचर हुई। वह वाणी वस्तुतः चन्द्रमा की अशरीरी वाक् थी जिसने महाश्वेता को आश्वासन दिया कि शाप समाप्त होने की अवधि तक इस शरीर की रक्षा कादम्बरी के पुण्य बल से होगी। इसे पञ्चभूत में न मिलाना, इससे पुनर्मिलन तक यत्न-पूर्वक इसकी रक्षा करना। कादम्बरी ने अशरीरी वाणी के कथन का पूर्ण रूप से विश्वास करते हुए मनोयोग से चन्द्रापीड के शव की रक्षा की। उसके दिव्य संरक्षण में मर्त्य मानव-शरीर पवित्र बना रहा। शोक का सूतक उस पर व्याप्त न हुआ। प्रेम के अमृत स्रोत से भय और शोक जीत लिये गये। शूद्रक के रूप में जन्म लेकर युवावस्था तक प्राप्त होकर समस्त उपचीयमान कर्मों के क्षय हो जाने तक चन्द्रापीड की काया शव रूप में ही रही। कादम्बरी हिरण्यगर्भ की अमृत छाया होने के कारण शवरक्षण में मृत्युछाया से भयभीत नहीं हुई।

कादम्बरी के चरित्र में परस्पर विरोधी गुणों का सन्तुलन दिखाई देता है। एक ओर वह प्रेमसार है तो दूसरी ओर अपने समस्त कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक भी। चन्द्रापीड के मृत्यु का उसे गहरा आघात लगता है, परन्तु महाश्वेता के समान दुःखभागी हो जाने पर सच्चे सखी पद पर विराजने का सन्तोष भी होता है। चन्द्रापीड के मृत शरीर की रक्षा करते हुए उसके अमृत रूप में पूर्ण की अनुभूति करते हुए भी उसकी जड़ता से आकुल होने की मानवीय वेदना, समस्त सम्बन्धियों, परिजनों के प्रति कर्त्तव्यपरायणता की भावना के साथ क्षणभर भी चन्द्रापीड से वियुक्त न रहने का प्रेम-गर्व छायातप की भाँति कादम्बरी के प्रभविष्णु चरित्रपट का ताना-बाना है।

वाणभट्ट ने कादम्बरी को नारी के सम्पूर्ण रूप में देखा है। वह नायक के हृदय पर अपने सुन्दरता के उपकरणों से आक्रान्त होती है। उसका दैहिक

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सौन्दर्य कामोद्दीपन का शक्तिस्वरूपा है। कालिदास के काल से ही इन्द्रिय-क्षोभ नारी रूप की कसौटी मान ली गयी है। कादम्वरी के रूपचित्रण में भी कवि ने नारी के इसी वैशिष्टच पर वल दिया है। अङ्ग-प्रत्यङ्ग में विराजमान सौकुमार्य, आकर्षण, लावण्य, मांसलता, नितम्बों की गुरुता, उदर की त्रिवली, ऊरु-रामणीयक, उन्नत स्तनों पर कामदेव की चरणचौकी का उपमान, रोमराजि पर त्रिभुवन-विजय की प्रशस्ति पंक्ति की उपमा, जलावर्त्त नाभि-गह्वर आदि विशेषण सौन्दर्य के वीर्यक्षोभ प्रयोजनभूतता को प्रगट करते हैं।

उपमानों में यौवनव्यञ्जक, मदिरावत् मादक, रागात्मिका वृत्ति को जागृत करने वाले गुणों का वर्णन है। इसका प्रभाव चन्द्रापीड को द्रवित करने में हुआ। महाश्वेता ने इसकी पुष्टि अपने कथन में की है। कादम्बरी के अङ्गोपाङ्ग के सौन्दर्य के साथ ही हाव-भाव, चेष्टाएँ, स्मिति, दर्शन, कथन, श्रवण, चिन्तन सभी कुछ मनोहारी थे। जितना वह इन माध्यमों से प्रकट हो रही थी उतना ही मौग्ध्यवशात् अप्रकट थी। लज्जा, व्रीडा, मौन, शील, संयम उसके असीम भाव-सौन्दर्य की उत्कट व्यञ्जना करा रहे थे तथापि यह केवल कादम्बरी का बाह्य सौन्दर्य है—दिखाई पड़ने वाला, दूसरा सौन्दर्य आन्तर व मानस है जो मात्र अनुभव किया जा सकता है और समर्पित होने के लिए प्रेरित करता है।

इस प्रकार कादम्बरी के चरित्र को चित्रित करने में बाणभट्ट ने मानवीय संवेदना के समस्त उपकरणों को एकत्र किया है। उसके कमनीय कलेवर-विन्यास क्रम में त्रिभुवन-ललाम सौन्दर्य के साथ ही भव्य उदारहृदय में मानवीय गुणों की पराकाष्ठा विराजमान है। नारीसृष्टि के समस्त वरेण्य उपादानों को संगृहीत कर चन्द्रापीड के जन्मान्तर के पुण्यफल को चरितार्थ कर दिया।

(९) **महाश्वेता**—किन्नर-मिथुन का पीछा करते हुए चन्द्रापीड ने शान्ति, शीतलता व पवित्रता के अद्भुत साम्राज्य अच्छोद सरोवर के परिसर में प्रवेश करते ही दिव्य संगीतध्वनि सुनी। नीरव स्थान पर संगीत की गूंज ने चन्द्रापीड को रस के उस उत्स को जानने को आकुल कर दिया और वह ध्वनि का अनुसरण करता हुआ उस स्थान पर आ पहुँचा। वहाँ उसने शिवायतन में शिवप्रतिमा के सम्मुख वीणा बजाते हुए पाशुपत व्रत धारण किये शिवाराधनतत्पर कन्या गौरवर्ण सर्वशुक्ला सरस्वतीस्वरूपा महाश्वेता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को देखा। बाण ने महाश्वेता की धवलता एवं गौरता के वर्णन में प्रकृति एवं वस्तुजगत् के किसी भी उपमान को प्रयोग करना नहीं छोड़ा। लगभग १० पृष्ठों के एक महावाक्य में ९२ उपमानों का प्रयोग किया है। इन विशेषणों में महाश्वेता के गौरवर्ण से लेकर अद्भुत तप, कलाप्रवीणता, मुख पर छाया हुआ तेज, शान्ति, कान्ति, दीप्ति, सहजस्मृति, धवल चरित्र, व्यक्तित्व का आन्तर तथा बाह्य प्रकाश मुखर हो उठा है। चन्द्रापीड ने उसे एक तपस्विनी नारी रूप में देखा जो अपने प्रणय में काम की अन्तिम दशा मृत्यु को प्राप्त हुए अपने मनोनीत पति की आकाशवाणी द्वारा पुनर्मिलन के लिए आश्वासन प्राप्त करके प्रतीक्षा कर रही थी। चन्द्रापीड ने इस अट्ठारह वर्षीया दिव्य-रूपसम्पन्न संगीत-साधना करती हुई तपस्विनी से उसका परिचय जानना चाहा।

वह गन्धर्वकुलोत्पन्न हंस की एवं अप्सरा गौरी की पुत्री थी। हंस स्वयं अप्सरा एवं ऋषि की सन्तान था तथा गौरी सोमवंश में उत्पन्न। ऋषि की क्रान्तदृष्टि, सोम की अमरता तथा अप्सरा रूप एवं रस का वैभव महाश्वेता को उत्तराधिकार में मिले थे। इस बौद्धिक, मानसिक एवं भौतिक रूपसम्पदा से प्रथम दृष्टि में श्वेतकेतु ऋषि एवं देवी लक्ष्मी का पुत्र पुण्डरीक मुग्ध हो जाता है। मनुष्य के सीमित आयु, बुद्धि, बल से सम्पन्न पुण्डरीक असीम बुद्धि, आयु एवं प्रतिभा की स्वामिनी महाश्वेता का स्वामी नहीं बन सका, उसको पाने की उत्कट कामना के ताप में ही झुलस गया, किन्तु दिव्यता और अमरता की रागिनी-सी महाश्वेता अपने दृढ़ संकल्प एवं दृढ़ इच्छाशक्ति से, अपने असीम धैर्य से उसकी प्रतीक्षा करती रही, न केवल प्रतीक्षा करती रही अपितु शिवायतन में शिवार्चन भी करती रही। इस शिवार्चन में उसकी वीणा के तार निरन्तर झंकृत होते रहे।

महाश्वेता नारी के आह्लादक शान्तिदायक सौन्दर्यप्रसाद का पर्याय है। उसका दूसरा प्रमुख गुण है—उसका मित्रवत्सल रूप। चन्द्रापीड को देखकर उसके भव्य उदात्त व्यक्तित्व से आश्वस्त होकर उसे अपनी कथा बिना कुछ घटाये-बढ़ाये आद्योपान्त सुना देती है। उसमें उसके अपने भी दुर्बल क्षण थे। काम के प्रभाव से जिस सीमा तक किस प्रकार से वह अवश हो गयी थी यह बताने में महाश्वेता ने कुछ भी प्रच्छन्न नहीं रखा। यह महाश्वेता के चरित्र की एक और धवलता थी। चन्द्रापीड को वह निष्कपट साधु स्त्री इतनी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विश्वस्त प्रतीत हुई कि उसके अनुरोध से वह उसकी तदनुरूप सखी कादम्बरी से मिलने को उत्सुक हो गया। गन्धर्वलोक जाकर उसे महाश्वेता के सम्मान, स्नेह एवं लोकप्रियता का परिचय प्राप्त हुआ। कादम्बरी और चन्द्रापीड के बीच वह सेतु का काम करती है। उसने कादम्बरी को समझाया कि इनके प्रति तुम उतना ही सहज विश्वास कर सकती हो जितना मेरे प्रति करती हो। आज से मेरे समान ही इनको भी अपना मित्र समझना। मैत्री का निःस्वार्थ रूप मुझसे भी अधिक तुम्हें स्नेह करने वाला मिल जाये, मुझे तुम भूलकर भी मुझ पर उपकार करोगी। महाश्वेता बाल्यकाल से ही कादम्बरी के साथ खेली, खाई, पढ़ी तथा बढ़ी थी। उसके एक-एक चरणक्षेप से वह परिचित है। सुख-दुःख में समान रूप से सहभागिनी है, यही कारण है कि कादम्बरी को उसके सखीत्व पर अभिमान है। पुण्डरीक के वियोग में तपस्या करती हुई अपनी सखी के दुःखी रहते, भोग-विलासों से पराङ्मुख रहते वह भोग स्वीकार नहीं करेगी—जो इतना प्रेमास्पद है, उसमें उसके अनुरूप गुण तो होने ही चाहिए। चन्द्रापीड की मृत्यु हो जाने पर दिव्य ज्योति (चन्द्रमा) ने महाश्वेता के माध्यम से ही शाप की अवधि समाप्त होने तक दिव्य मिलन की बात से कादम्बरी को आश्वस्त रहने के लिए प्रेरित किया।

तपस्या में निखरा प्रेम स्थायी एवं विशुद्ध आनन्द प्रदान करता है। महाश्वेता ने प्रेम के लिए केवल जल पीकर दीर्घकालीन तपस्या की। इतनी एकनिष्ठ होकर कि पुण्डरीक को ही दूसरे शरीर वैशम्पायन रूप में न पहचान सकने के कारण शाप दे बैठी और जब अपनी भूल का ज्ञान हुआ तो कातर पीड़ा में सहभागिनी होकर करुणा की साकार मूर्ति जैसी दिखाई पड़ी। महाश्वेता का चरित्र लोकोत्तर है जो वज्र से भी कठोर और पुष्प से भी कोमल है। कादम्बरी यदि सुरा है तो महाश्वेता सुधा है। सुरा मनप्रधान मनुष्य की विश्रान्ति है किन्तु मनुष्य अमरता को सुधा से ही प्राप्त कर सकता है। यह सुधा उसे विवेक करने की शक्ति महाश्वेता रूपी बुद्धि में ही प्राप्त हो सकती है। यथेच्छ सुरा का भोग भी बुद्धि के जाग्रत रहते ही किया जाना चाहिए, इसीलिए बाणभट्ट ने कादम्बरी की चिर-सहचरी महाश्वेता की परि-कल्पना की है।

(१०) **पत्रलेखा**—राजकुमार चन्द्रापीड के विद्याध्ययन के अनन्तर राजकुल में प्रवेश के समय पत्रलेखा को उसकी सेवा हेतु राजमाता विलास-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वती कञ्चुकी के साथ भेजती है। कञ्चुकी पत्रलेखा को चन्द्रापीड के पास पहुँचाकर राजमाता विलासवती का सन्देश देता हुआ कहता है—

'इयं खलु कन्यका महाराजेन पूर्वं कुलूतराजधानीमवजित्य कुलूतेश्वरदुहिता पत्रलेखाभिधाना बालिका सती वन्दिजनेन सहानीयान्तःपुरपरिचारिकामध्यमुपनीता। सा मया विगतनाथा राजदुहितेति च शीलश्चास्या दुहितृनिर्विशेषमुपलालिता संवर्धिता च। ······अविदितसमुपजातस्नेहया कुमार इति सन्दिश्यते सर्वथा तथा कल्याणिना प्रयतितव्यं यथेयमतिचिरमुचिता परिचारिका ते भवति'।

माता की आज्ञा से ताम्बूलवाहिनी रूप में पत्रलेखा को स्वीकार करके कञ्चुकी को भेज दिया। उसी समय से पत्रलेखा चन्द्रापीड की योग्य परिचारिका तो हुई ही, साथ ही मित्र भी हो गयी। वह प्रतिबिम्ब के समान राजकुमार का अनुसरण करती थी। राजतिलक के उपरान्त दिग्विजय प्रस्थान के समय पत्रलेखा भी चन्द्रापीड के साथ ही जाती है। जब चन्द्रापीड कादम्बरी के यहाँ से लौटने लगा तो कादम्बरी ने पत्रलेखा को इसीलिए रोक लिया कि इसको लिवाने हेतु चन्द्रापीड पुनः आयेगा या इसी ब्याज से उसका स्मरण तो करेगा। जब चन्द्रापीड पिता का पत्र प्राप्त करते ही उज्जयिनी चला आता है तो कादम्बरी चन्द्रापीड के विरह से सन्तप्त हो केयूरक के साथ पत्रलेखा को उज्जयिनी भेजती है। पत्रलेखा कादम्बरी की विरहदशा का वर्णन चन्द्रापीड से करती है। इस प्रकार पत्रलेखा के चरित्र का पर्यवेक्षण करने से ज्ञात होता है कि पत्रलेखा एक योग्य, शिष्ट, उच्च कुलोत्पन्न, विश्वासपात्र, मित्र अथवा सेविका थी। प्रारम्भ में पत्रलेखा का चरित्र अपूर्व महत्त्व की अपेक्षा रखता है, परन्तु कथा के अन्दर पत्रलेखा की कवि द्वारा उपेक्षा ही की गयी है। वस्तुतः यह पत्रलेखा चन्द्रमा की पत्नी रोहिणी ही है जो शापग्रस्त चन्द्र (चन्द्रापीड) की सहायता के लिए पृथ्वी पर जन्म धारण करती है। चन्द्रापीड ही शापग्रस्त चन्द्र है, अतः उससे पत्रलेखा का अपूर्व अनुराग होना स्वाभाविक है। चन्द्रापीड की मृत्यु होने पर उस पर वज्राघात-सा प्रहार होता है। यह समझ कर कि चन्द्रापीड की मृत्यु पर चन्द्रापीड को इन्द्रायुध की आवश्यकता होगी इसलिए वह इन्द्रायुध अश्व के साथ ही अच्छोद सरोवर में कूद पड़ती है और फिर नहीं निकलती है।

अनेक समालोचकों ने बाणभट्ट पर पत्रलेखा के चरित्र व भूमिका के साथ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri

उपेक्षा का दोषारोपण किया है, परन्तु डॉ० अमरनाथ पाण्डेय ने अत्यन्त कौशल से बाणभट्ट के पक्षधर होकर पत्रलेखा के चरित्र को उकेरा है—

'यह बात सत्य है कि पत्रलेखा का बहुत कम चित्रण हुआ है। इसका कारण है कि वह परिचारिका है। उसका जितना सम्मान किया जा सकता है, उतना किया गया है। कवि के समक्ष उसका निरुपाधि सेवाभाव उसका निर्मल चरित्र है। पत्रलेखा उच्चकुल में उत्पन्न हुई है। वह अपनी सेवा से कुमार को प्रसन्न करती है और उसकी अभिन्नहृदया सखी बन जाती है। यह उसके चरित्र की उदात्तता है। कवि पत्रलेखा के उज्ज्वल अनुभाव के समक्ष नत है। पत्रलेखा के निर्मल चरित्र की एक-एक बूँद अमृत का सागर उँड़ेल रही है। उसका मधुर रूप आनन्द की वर्षा कर रहा है।'

(बाणभट्ट का साहित्यिक अनुशीलन)

वस्तुतः बाणभट्ट का युग और संस्कृति आज के भौतिकवादी युग और संस्कृति से सर्वथा भिन्न था। वहाँ पुरुष और स्त्री के बीच पवित्रतम सम्बन्ध दाम्पत्य तक ही सीमित नहीं था; अनुभूति की पूरी सत्यता एवं निष्ठा के साथ प्रकटन को ही चरित्र की समुज्ज्वलता माना जाता था। विचार और क्रिया की एकरूपता ही नहीं अपितु सापेक्षता ही सदाचार कहलाता था। इसलिए पत्रलेखा जल में पद्मपत्र की भाँति आत्मा से निर्लिप्त रही। चन्द्रापीड भी शारीरिक और मानसिक स्तर पर उससे जुड़े होकर भी आत्मा से निर्लिप्त रहे।

शरीर की दृष्टि से राजभवनों के अन्तःपुरों में यह सेवा का ही भाग था। मन की दृष्टि से देखने पर चन्द्रापीड और पत्रलेखा के मैत्री सम्बन्ध में सन्देह का कोई स्थान नहीं और आत्मा की दृष्टि से पूर्व के विग्रहों में वे पति-पत्नी ही थे और बिना विग्रह के तो अखण्ड एक चैतन्य बिन्दु में समाहित। तब उनके जन्म-जन्मान्तर के सम्बन्धों में बाण ने कोई असावधानी नहीं की है।

(११) प्रश्न—कादम्बरी के आधार पर बाणभट्ट के प्रकृति-दर्शन की विवेचना कीजिए।

उत्तर—प्रकृति-दर्शन—यद्यपि बाणभट्ट ने कादम्बरी की रचना नगर वर्णनों से ही प्रारम्भ की है तथापि कादम्बरी में प्रकृति का उदात्त चित्र पर्याप्त मात्रा में उन्मुक्त वातावरण में विकसित दिखाई देता है। बाणभट्ट

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रकृति-चित्रण में मुख्य रूप सहृदय हृदय को मुग्ध करते हैं—प्रकृति का आन्तर चित्र और दूसरा वाह्य चित्र।

वाणभट्ट की यह विशेषता है कि वे अन्तःप्रकृति के सूक्ष्म निरूपण-शक्ति का परिचय देते हुए वाह्य प्रकृति का रमणीय चित्र प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त कुशल शिल्पी थे। राजप्रासादों एवं समृद्धि का विस्तृत वर्णन करते हुए प्रकृति के रमणीय प्राङ्गण में पहुँच जाते हैं। इनकी प्रकृति-चित्रण की छटा सर्वत्र अलंकृत होने के कारण अतीव रमणीय फुलवारी की भाँति मनोहारी होती है। इनका प्रकृति-वर्णन सजीव चेतन जैसा व्यवहार करने लगता है।

वाणभट्ट ने अपने पूर्ववर्ती कवियों (वाल्मीकि, व्यास, कालिदास आदि) के समान प्रकृति को आलम्बन रूप में चित्रित किया है और कहीं भी चित्र औचित्य का उल्लंघन नहीं किया है। फिर भी वाणभट्ट के प्रकृति-चित्रों में समीक्षकों को स्वाभाविकता की न्यूनता दीख पड़ती है। इसका कारण है बाणभट्ट का अलंकारप्रिय होना। उनकी अपनी शैली अलंकृत शैली है, अतः हर वस्तु को अलंकृत रूप में ही वे प्रस्तुत करना चाहते हैं। यदि वाल्मीकि, व्यास, कालिदास आदि के प्रकृति-चित्रण वन में स्वयं उत्पन्न लताओं के रमणीय कुञ्ज हैं तो वाणभट्ट के प्रकृति-चित्र उपवन में माली द्वारा सिञ्चित एवं सुरुचिपूर्ण काट-छाँट कर पुष्पों के गुच्छों से अलंकृत लताकुञ्ज हैं। इसमें बाण की अद्‌भुत प्रतिभा से रमणीय अलंकृत शैली में उकेरे गये प्रकृति-चित्र अस्वाभाविक होते हुए भी स्वाभाविक रमणीयता का ह्रास न कर दुगुनी श्रीवृद्धि ही करते हैं। ऐसी मनोहारी रमणीय चारुता अन्यत्र दुर्लभ है।

वाणभट्ट ने प्रकृति के मनोरम चित्रों के साथ-साथ भयावह चित्र भी उतनी ही सजीवता व चारुता के साथ चित्रित किया है। सच्चा कवि वही होता है जो शोभन के साथ ही उसके अशोभन, कोमल के साथ कठोर—दोनों ही रूपों को एक-सी तन्मयता के साथ विना पक्षपात के ग्रहण करे। केवल रमणीय अथवा कोमल चित्र प्रस्तुत करने वाला कवि प्रकृति के प्रति पक्षपाती, विलासिताप्रिय कवि माना जाता है। अतः वाणभट्ट ने प्रकृति के सुन्दर और असुन्दर, कोमल और कठोर दोनों रूपों को चित्रित करके अपना स्वाभाविक प्रकृति-प्रेम अभिव्यक्त किया है। इसके उदाहरण विन्ध्याटवी के भयावह एवं कठोर वर्णन तथा जाबालि आश्रम एवं अच्छोद सरोवर के पवित्र एवं रमणीय वर्णन हैं। बाणभट्ट के प्रकृति-चित्र उपमा, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास, परिसंख्या

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आदि अलंकारों की प्रचुरता से सजे हुए हैं। पूर्णोपमा अलंकार के माध्यम से चित्रित विन्ध्याटवी का यह वर्णन पाठकों के चित्त को वरवस ही अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है—

'क्वचित् प्रलयवेलेव महावराहद्रंष्टासमुत्खातधरणिमण्डला, क्वचिद्दशमुख-नगरीव चटुलवानरवृन्दभुज्यमानतुङ्गशाखाकुला, क्वचिदचिरनिर्वृत्तविवाहभूमि-रिव हरित्कुशसमित्कुसुमपलाशशोभिता, क्वचिदुन्मत्तमृगपतिनादभीतेव कण्ट-किता।'

प्रस्तुत गद्यांश में द्व्यर्थक शब्दों की योजना करके पूर्णोपमा का सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है। यद्यपि ऐसे स्थलों पर वैचित्र्य की अनुभूति अवश्य होती है तथापि इनसे पाठकों की बुद्धि की तृप्ति होती है, हृदय की नहीं। वास्तव में बाणभट्ट शाब्दी क्रीडा और अलंकार-योजना में इतने तल्लीन हो जाते हैं कि वे भावपक्ष की उपेक्षा भी कर जाते हैं। श्लिष्ट उपमानों की झड़ी लगाते चले जाते हैं जिससे सामान्य पाठक के साथ ही व्युत्पन्न पाठक को भी कभी-कभी वुद्धि को व्यायाम करना पड़ता है। डॉ० भोलाशंकर व्यास ने बाण के प्रकृति-चित्रण के विषय में अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है—

'पर सुबन्धु की तरह बाण इन कलाबाजियों में सदा नहीं फँसते और पहले वे वर्ण्य-विषय को पूरी इमानदारी से वर्णित कर देते हैं तब श्लेष की जटिल पंक्ति का आश्रय लेते हैं।'

उदाहरणार्थ अच्छोद सरोवर का वर्णन पहले पूर्ण रमणीयता के साथ किया है, तदनन्तर श्लेष-अनुप्राणित उपमानों का प्रचुर प्रयोग किया है—

'यौवनमिवोत्कलिकाबहुलम्, उत्कण्ठितमिव मृणालवलयालङ्कृतम्, महा-पुरुषमिव मीनमकरकूर्मचक्रप्रकटलक्षणम्, षण्मुखचरितमिव श्रूयमाणक्रौञ्चव-निताप्रलापम्।'

इसके अतिरिक्त प्रातःकाल, सन्ध्याकाल, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि प्रकृति के रमणीय चित्रों का भी चित्रण किया है। निम्न पंक्तियों में प्रातःकाल की छटा मनोहारी है—

'एकदा तु प्रभातसन्ध्यारागलोहिते गगनतले, कमलिनी मधुरक्तपक्षपुटे वृद्धहंस इव मन्दाकिनीपुलिनादपरजलनिधितटमवतरति चन्द्रमसि, परिणतरङ्कु-रोमपाण्डुनि, व्रजति विशालामाशाचक्रवाले········सन्ध्यामुपासितुमुत्तराशा-लम्बिनि मानससरस्वतीतीरमिवातरति सप्तर्षिमण्डले।'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

इसी प्रकार चन्द्रोदय के अनन्तर छिटकी हुई चन्द्रिका की रमणीय शोभा का वर्णन भी अवलोकनीय है—

'गङ्गा सागरानापूरयन्ती हंसधवला धरण्यामापतज्ज्योत्स्ना हिमकरसरसि विकचपुण्डरीकसिते, चन्द्रकाजलपानलोभादवतीर्णो निश्चलमतिरमृतपङ्कलग्न इवादृश्यत हरिणः।'

इस प्रकार वाणभट्ट ने अनेक मनोहर कल्पनाओं को प्रकृति-चित्रण में अलंकृत शैली द्वारा आकार देकर एक विशेष प्रकार का चमत्कार उत्पन्न किया है। फिर भी यह सत्य है कि बाणभट्ट ने प्रायः अपनी रुचि एवं स्वभाव के अनुकूल अथवा तत्कालीन काव्यजगत् की मान्यता के अनुसार लम्बे-लम्बे समासों का प्रयोग प्रकृति-चित्रण जैसे सुकुमार क्षेत्र में किया है। श्लिष्ट वर्णनों के प्रसङ्ग में लघुकाय वाक्य अवश्य दिखाई देते हैं, परन्तु कहीं श्लिष्ट चित्र खण्डित न हो जाये, सम्भवतः इसी आशय से विशेषणों के रूप में एक विस्तृत वाक्य की रचना करके चित्र को एक सूत्र में बांधने का प्रयत्न किया है। ऐसे चित्रणों में विन्ध्याटवी वर्णन, जाबालिआश्रम, सिद्धायतन, उज्जयिनी, तारापीड, इन्द्रायुध, राजभवन, अच्छोदसरोवर, प्रभात, सन्ध्याकाल महाश्वेता, कादम्बरी आदि के वर्णन प्रमुख हैं।

बाण की रचनाओं में उत्प्रेक्षा का सशक्त चमत्कार उनके काव्य-सौन्दर्य को द्विगुणित कर देता है। कवि की विचित्र कल्पना प्रातःकालीन प्रकाश के स्वाभाविक प्रसार को दिशाओं के स्वाभाविक प्रसार-कल्पना में परिणत कर देती हैं जिससे काव्य-सौन्दर्य में निःसन्देह अभिवृद्धि होती है। सन्ध्याकाल का एक ऐसा ही उत्प्रेक्षामय चित्र अवलोकनीय है—

'क्वापि विहृत्य दिवसावसाने लोहिततारका तपोवनधेनुरिव कपिला परिवर्त्तमाना सन्ध्या तपोधनैरदृश्यत। अचिरप्रोषिते सवितरि शोकविधुरा कमलमुकुलकमण्डलुधारिणी हंससितदुकूलपरिधाना मृणालवलययज्ञोपवितिनी मधुमण्डलाक्षवलयमुद्वहन्ती कमलिनी दिनपतिसमागमव्रतमिवाचरत्।'

प्रस्तुत गद्यांश में सन्ध्या के मनोरम चित्र के साथ ही इसमें वर्णित अप्रस्तुत वर्णन भी आश्रम के जीवन और उसके वातावरण के लिए बहुत उपयुक्त बन गये हैं। डॉ० भोलाशंकर व्यास ने इस गद्यांश में नाटकीय पताकास्थानक या ड्रामेटिक आइरनी होने की सम्भावना प्रकट की है। इसके द्वारा बाणभट्ट ने महाश्वेता के भविष्य की घटना का संकेत किया है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

बाणभट्ट का यह विस्तृत वर्णन कथा में व्याघात अवश्य उत्पन्न करता है परन्तु बाण के प्रकृति-चित्रण पाठकों के लिए उत्प्रेक्षा, श्लेष, उपमा और विरोधाभास आदि अलंकारों के द्वारा एक नवीन आकर्षण भी उपस्थित करते हैं। इस कारण पाठक एक अनिर्वचनीय रमणीयता के आस्वाद में मग्न हो कथा में होने वाले व्याघात का अनुभव ही नहीं कर पाते। बाण ने पात्रों की मानसिक दशा के अनुरूप और कथा के वातावरण के अनुकूल प्रकृति के चित्रों का सूक्ष्म चित्रण किया है। महर्षि जावालि के आश्रम में निकलने वाले चन्द्र की तथा पुण्डरीक के प्रेम में व्याकुल महाश्वेता के विरह के वातावरण में चन्द्रोदय वर्णन उद्दीपन का काम करता है। पुण्डरीक के प्रेम में व्याकुल महाश्वेता चन्द्रोदय को देखकर और अधिक व्याकुलता का अनुभव करती है। चन्द्रापीड और कादम्बरी के प्रेम को दृढ़ बनाने में बाणभट्ट ने प्रकृति के सन्ध्या वर्णन और चन्द्रोदय वर्णन को आलम्बन रूप में ग्रहण किया है। इस प्रकार बाणभट्ट ने प्रकृति के आलम्बन व उद्दीपन दोनों रूपों का सफलतापूर्वक चित्रण किया है।

इस प्रकार यह निर्विवाद सत्य है कि कलाबाजी वाले स्थलों को छोड़कर अन्यत्र बाणभट्ट प्रकृति के आकर्षक, रमणीय एवं सफल चित्र प्रस्तुत करने में पूर्णतया सफल हैं। बाण ने वस्तु के रूप का सर्वाङ्गपूर्ण वर्णन, याथातथ्य निरूपण में भी प्रकृति का उपयोग किया है। मानवीकरण के द्वारा हृदय के आवेगों को अभिव्यक्ति प्रदान की है।

(१२) प्रश्न—काव्य-कला की दृष्टि से बाणभट्ट के वर्णन-वैशिष्टय की विवेचना कीजिए।

उत्तर—बाणभट्ट की काव्य-कला—बाणभट्ट से पूर्व काव्य-सिद्धान्तों को विवेचन करने वाली कोई भी कृति उपलब्ध नहीं है। आरम्भिक काव्य-सिद्धान्तकारों भामह और दण्डी की कृतियों में गद्य-साहित्य तथा उसके विभाजन सम्बन्धी नियमों का निबन्धन भी बाण की रचनाओं को आधार बनाकर ही किये गये हैं। भरत मुनि की कृति नाटयशास्त्र भामह और दण्डी से प्राचीन अवश्य है, परन्तु वह केवल नाट्य-रूपों से सम्बन्ध रखती है। उसमें गद्य-साहित्य के काव्य-रूपों की उपेक्षा ही की गयी है। सौभाग्य से बाण ने अपनी दो महान् कृतियों के प्रारम्भ में ही साहित्य के बारे में सामान्य रूप और गद्य-विधाओं के बारे में विशेष रूप से अपने विचारों को प्रतिपादित कर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

दिया है। ये विचार स्मरणीय श्लोकों में प्रकट किये गये हैं। अपनी कृतियों के मध्य में भी राजदरबार के साहित्यिक कार्यों की सूचनाएँ प्रसङ्ग से हट कर दी हैं।

शिक्षा समाप्त कर लौटे चन्द्रापीड के स्वागत एवं राजदरबार-प्रवेश के समय एक सज्जित कक्ष में आयोजित कला-विनोदों एवं साहित्यिक कर्मों का सजीव चित्र इन पंक्तियों में विद्यमान है—

'काव्यगोष्ठीमातन्वता, परिहासकथां विन्दता, विन्दुमतीं चिन्तयता, प्रहेलिकां भावयता, नरपतिकृतकाव्यसुभाषितानि पठता, द्विपदीं गृह्णता, कविगुणानुत्किरता...... ।'

'उत्कृष्टकविगद्यमिव विविधवर्णश्रेणिप्रतिपाद्यमानाभिनवार्थसञ्चयम्... ।'

बाण के युग में शैली को सर्वोच्च प्रधानता प्राप्त थी। रचना में हर वर्ण अर्थगुम्फित, लयात्मक पदों से ऐसा बँधा होना चाहिए कि नये तथा अनपेक्षित अर्थों के कारण श्रोता चमत्कृत हो जाय। भाषा का ऐसा अलंकरण विश्व के किसी भी गद्य-साहित्य में नहीं मिलता। इस चमत्कार हेतु समास, श्लेष, यमक और विरोधाभास, अतिशयोक्ति तथा रूपक आदि अलंकारों के सफल प्रयोग के साथ ही कौतुक एवं रोमांस के भावों को जगाने वाले बहु-अर्थी काव्य-प्रसङ्गों को भी प्रयुक्त करना होता है। संस्कृत भाषा में समानार्थी तथा भिन्नार्थी शब्दों की अत्यन्त समृद्ध शब्दावली और वाक्य-रचना की पद्धति में दो या तीन समस्त-पद वाले वाक्यों से सारा पृष्ठ भरा जा सकता है। भाषा के इस अद्वितीय गुण का बाण ने कुशलतापूर्वक उपयोग किया है। बाणभट्ट राजदरबारों में विशेष अवसरों पर आयोजित होने वाली काव्य-गोष्ठियों में प्रमुखतया भाग लेते थे और काव्य-कला में पारङ्गत थे। बाण अलंकृत साहित्यिक गद्य को अभिजात-कला मानते थे और इसके लिए व्यक्ति (श्रोता व वक्ता) का सुसंस्कृत होना जरूरी था। बाण के सहकर्मी सुबन्धु स्वयं अपने को श्लेषकार कहते हैं। प्राचीन साहित्य में इतने विशद रूप में यह कौशल किसी भी अन्य लेखक में नहीं मिलता। यद्यपि उस समय के ये गुण आज मान्यताओं के बदल जाने से अवगुण मान लिये गये हैं, परन्तु क्लासिकी अभिरुचि में शब्दाडम्बर को प्रतिभा का नाम देकर प्रशंसनीय स्वीकार किया जाता था। इतना ही नहीं, इसे गद्य का जीवन कहा जाता था। आगे चलकर यही प्रशंसा 'गद्य कवि की कसौटी है' के रूप में बदल गयी और आलोचना

Kritikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शास्त्र में आठवीं शताब्दी तक आते-आते यह तथ्य सिद्धान्त का रूप धारण कर चुका था।

बाणभट्ट ने अनलंकृत चमत्कारविहीन शैली में रचना करने वाले कवियों की भर्त्सना करते हुए उन्हें श्वान कहा है तथा अलंकृत काव्य-शैली में कविता करने वालों को शरभ कहा है—

'सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे।
उत्पादका न बहवः कवयः शरभा इव'॥

यह आलोचना बाण ने कवियों की कलाबाजियों को ध्यान में रखकर की है। उनकी दृष्टि में सत्काव्य वही है जिसमें रचना के भावपक्ष एवं कला-पक्ष दोनों ही समुचित रीति से परिपाक को प्राप्त हों। इसीलिए उन्होंने स्वयं आदर्श गद्यशैली का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहा है—

'नवोऽर्थो जातिरग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः।
विकटाक्षरबन्धश्च कृत्स्नमेकत्र दुर्लभम्'॥

अर्थात् एक आदर्श गद्य में नूतन अर्थ, परिष्कृत छन्द, श्लिष्ट स्वभावोक्ति, स्फुट रस और अक्षरों का दृढबन्ध (अपरिवर्तनीय पद)—ये सभी गुण किसी एक रचनाकार की रचना में सर्वथा प्राप्त नहीं होते। बाणभट्ट ने अपनी रचना में इन सभी गुणों का सफल प्रयोग करके दिखा दिया है। बाणभट्ट के गद्य-शैली की यह विशेषता है कि वे प्रसङ्गानुकूल शब्दावली का चयन करते हैं। कोमल प्रकृति-स्वरूप वर्णन में जहाँ उन्होंने कोमलकान्त पदावली का प्रयोग किया है वहीं कठोर भयावह प्रसङ्गों में कठोर, श्रुतिकटु आदि शब्दावली का प्रयोग किया है। 'पम्पा सरोवर' वर्णन का कोमल सरस चित्र देखिए—

'उत्फुल्लकुमुदवलयकल्हारम् अनेकजलचरशतसञ्चालनचलितवाचाल-वीचि-मालम्।'

ग्रीष्म ऋतु की प्रचण्डता का वर्णन कठोर पदावली का उदाहरण है—

'रुधिराहुतिभिरिव पारिभद्रस्तबकवृष्टिभिस्तर्पयन्तस्तारवान् विभावसुं .... दावदहनपच्यमानचटकाण्डखण्डखचिततरुकोटरकीटपटलपुटपाकगन्ध-कटवः।'

इस प्रकार की शब्द-योजना के माध्यम से अभीष्ट विषय का मनोहर, आकर्षक एवं स्वाभाविक चित्र खींचने में बाणभट्ट सफल चित्रकार सिद्ध होते

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हैं। वाणभट्ट की रचना में दीर्घकाय समासों की दीर्घ परम्परा प्राप्त होती है। उनके वाक्य कई पृष्ठ तक अविच्छिन्न गति से चलते हैं तब कहीं जाकर क्रिया-पद के दर्शन होते हैं। किन्तु यह स्थिति भी वाणभट्ट ने प्रसङ्ग द्वारा नियन्त्रित कर रखी है। राजप्रासाद, विन्ध्याटवी, सन्ध्या, निशा, इन्द्रायुध, महाश्वेता, कादम्बरी आदि के वर्णनों में जहाँ दीर्घकाय समासबहुल वाक्यावली का प्रयोग है वहीं मानवीय भावना एवं विरह-वर्णन आदि प्रसङ्गों में लघुकाय सरल पदावली का प्रयोग मिलता है। संवाद-योजना भी सरल वाक्यावली में है। अलंकार-योजना में शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार का प्रयोग श्लेष के साथ संकर करके अलङ्कारों में चार चाँद लगा दिये हैं। प्रकृति-चित्रण को सजीव चित्रित करने के लिए सानुप्रास पदावली का प्रयोग किया है—

'शुकशतमुख-नख-शिखरशकिलतफलस्फीतैः हारिहारीतरुचिरमणीयैः।'

कहीं-कहीं वाणभट्ट ने शास्त्रीय उपमाओं का श्लिष्ट वर्णन करके अर्थ-बोध में कठिनता अवश्य उत्पन्न की है, परन्तु यह उनके भाषा और विविध शास्त्रों पर अपूर्व अधिकार का प्रभाव है कि उन्होंने स्वच्छन्द होकर जहाँ जैसा वर्णन चाहा वहाँ वैसा आलंकारिक वर्णन कर डाला। इन्हीं शास्त्रीय उपमाओं और दीर्घकाय समासों को देखकर कुछ आलोचक बाणभट्ट को बाण ही कहने लगे। पाश्चात्य विद्वान् डॉ० वेवर ने बाण की गद्य-रचना को एक सघन जंगल और दीर्घकाय समास को हिंसक पशु कहा है। वास्तविकता यह है कि जब तक भारतीय साहित्य की तत्कालीन मान्यताओं से भलीभाँति परिचय प्राप्त नहीं किया जायेगा तब तक बाणभट्ट के प्रति किये गये आक्षेपों को सही नहीं माना जा सकता। डॉ० वरदाचारी ने बाणभट्ट की रचनाओं के प्रति अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है—

'यह सच है कि बाण द्वारा प्रयुक्त शब्दों के श्लेषों में शब्दों की खींचा-तानी हुई है और उन्होंने जिन कथानकों का संकेत किया है उनमें बहुत-से अप्रचलित हैं। वाण की रचना उनके लिए ही भयावह है, जिन्होंने संस्कृत साहित्य का समुचित रूप से अध्ययन नहीं किया है। अतः बाण के ग्रन्थों का रसास्वादन लेने में पाठक की अनभिज्ञता ही कारण है न कि बाण की रचना-शैली।'

वास्तव में किसी कलाकार की कृति की आलोचना बिना तत्कालीन

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मान्यताओं और साहित्यिक मापदण्ड को समझे नहीं की जा सकती। पाश्चात्य विद्वानों और उनके अनुयायियों ने तत्कालीन मान्यताओं और साहित्यिक मापदण्ड को बिना समझे ही अपने मापदण्ड पर बाण को परखा है। बाण के समय की गद्य-रचना के कुछ आदर्श थे। वे आदर्श हैं—(१) वक्रोक्ति-श्लिष्ट पद-प्रयोग, (२) सरस कल्पनाएँ, (३) समासबहुलता, (४) वर्णनों में दीर्घकाय काव्यावली का प्रयोग। इन विशेषताओं को गद्य-रचना का आदर्श मानकर परीक्षा करें तो बाण की रचना संस्कृत गद्य-साहित्य में सर्वोत्कृष्ट रचना मानी जायेगी। बाणभट्ट के वक्रोक्ति, सरस, श्लिष्ट, मनोरम कल्पनाएँ, अक्षय शब्दकोश, विवध दर्शन एवं शास्त्र सम्बन्धी पाण्डित्य, विषयानुसारिणी शब्द-योजना, रसाभिव्यक्ति, भावप्रवणता, स्वरमाधुर्य आदि विशेषताओं से प्रभावित होकर ही भारतीय विद्वानों ने मुक्त-कण्ठ से 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्' की घोषणा की है। बाण ने स्वयं उत्कृष्ट गद्य का लक्षण 'उत्कृष्टकविगद्यमिव विविधवर्णश्रेणिप्रतिपाद्यमानाभिनवार्थसञ्चयम्……' के रूप में किया है। बाण के युग में शैली को सर्वोच्च प्रधानता प्राप्त थी। हर वर्ण गुम्फित लयात्मक पदों में ऐसा बँधा होना चाहिए कि नये तथा अनपेक्षित अर्थों के कारण श्रोता विस्मित हो जाय। इसके लिए न केवल समास और श्लेष, यमक और विरोधाभास, अतिशयोक्ति और रूपक का सफल प्रयोग करना होता है अपितु कौतुक और रोमांस के भावों को जगाने वाले बहु-अर्थी आसंगों को भी प्रयुक्त करना पड़ता है।

बाणभट्ट ने अपनी रचना में माधुर्य-शैली का उत्कर्ष द्योतित करने के लिए पद्य जैसी गेयता गद्य के मध्य में सुभाषित अथवा सूक्ति के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इन सूक्तियों में काव्यात्मक गेयता का सरल एवं सरस रचना-प्रवाह देखकर सहृदय पाठक बाण की रचना में संगीत जैसा आकर्षण एवं पद जैसी गेयता का अनुभव करने लगते हैं। इस प्रकार बाण की गद्य-रचना की एक विशेषता उनकी काव्यात्मक संगीत-शैली भी है। गद्य-साहित्य की सभी विशेषताओं को यदि एकत्र देखना हो तो केवल एक बाणभट्ट की ही रचना में गद्य-रचना की सभी विशेषताएँ एकत्र देखने को मिल सकती हैं। अन्य कलाकारों की कृतियों में सभी तत्त्व एकत्र नहीं मिलते। मिलते भी हैं तो वे बाणभट्ट की भाँति सुनियोजित नहीं होते। इसीलिए प्रसिद्ध विद्वान् चन्द्रदेव ने कहा है—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

'श्लेषे केचन शब्दगुम्फविषये केचिद्रसे चापरेऽ-
लङ्कारे कतिचित्सदर्थविषये चान्ये कथावर्णने।
आसर्वत्र गभीरधीरकविताविन्ध्याटवीचातुरी
सञ्चारी कविकुम्भभिदुरः बाणस्तु पञ्चाननः' ॥

अतः यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि बाणभट्ट एक सर्वश्रेष्ठ कलाकार एवं गद्यसम्राट् हैं। उनकी गद्य-शैली परवर्ती कवियों के लिए एक आदर्श बनकर रह गयी है। तिलकमञ्जरीकार धनपाल, गद्यचिन्तामणि के रचयिता वादीभसिंह और अवन्तिसुन्दरी कथा के रचयिता सोड्ढल आदि कवियों ने बाण की रचना-शैली का अनुकरण किया है। परन्तु बाण के समस्त गुणों का अनुकरण करने में वे भी सफल नहीं हो सके। अतः यह निर्विवाद सिद्ध है कि बाणभट्ट एक संस्कृत गद्य-साहित्यिक शैली के नवीन आविष्कर्त्ता, गद्यसम्राट्, नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभासम्पन्न, अद्वितीय विद्वान् तथा संस्कृत गद्य कलाकार थे।

बाणभट्ट के इन्हीं रचना-शैली की विशेषताओं पर मुग्ध होकर विभिन्न विद्वानों ने बाणभट्ट की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इनमें से कुछ विद्वानों की सम्मतियाँ निम्न प्रकार से हैं—

भूषण भट्ट—कादम्बरी रसभरेण समस्त एव।
मत्तो न किञ्चिदपि चेतमते जनोऽयम् ॥

कीर्तिकौमुदीकार—युक्तं कादम्बरी श्रुत्वा कवयो मौनमाश्रिताः।
बाणध्वनावनध्यायो भवतीति स्मृतिर्यतः ॥

त्रिलोचन—हृदि लग्नेन बाणेन यन्मन्दोऽपि पदक्रमः।
भवेत्कविकुरङ्गाणां चापलं तत्र कारणम् ॥

धर्मदास—रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति।
तत्किं तरुणी ? न हि न हि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य ॥

अन्यच्च—जाता शिखण्डिनी प्राक् यथा शिखण्डी तथाऽवगच्छामि।
प्रागल्भ्यमधिकमाप्तुं वाणी बाणो बभूवेति ॥

त्रिविक्रम भट्ट—शश्वद्बाणद्वितीयेन न मदाकारधारिणा।
धनुषेव गुणाढ्येन निःशेषो रञ्जितो जनः ॥

गंगादेवी—वाणी-पाणि-परामृष्ट-वीणा-निक्वाण-हारिणीम्।
भावयन्ति कथं वान्ये भट्टबाणस्य भारतीम् ॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(१३) प्रश्न—बाणभट्ट के अलंकार-प्रयोग वैशिष्ट्य पर प्रकाश डालिए।

उत्तर—बाणभट्ट का अलंकार-प्रयोग—बाणभट्ट के युग तक 'कला-कला के लिए' का सिद्धान्त व्यावहारिक रूप ले चुका था। 'वक्रोक्तिः काव्यजीवितम्' के सिद्धान्तानुसार लोकव्यवहार से हटकर असामान्यार्थोक्ति काव्य की आत्मा रूप में प्रख्याति प्राप्त हो चुकी थी। इसके पीछे भी अभिव्यक्ति में कला-पक्ष की प्रधानता का ही उद्देश्य निहित था। काव्य-भाषा भी सामान्य व्यवहार की भाषा से भिन्न होती है। काव्य-भाषा में विशेषता का आधान करने वाला अतिशय नामक तत्त्व गुण और अलंकार इन दो भागों में विभक्त है। गुण का सीधा सम्बन्ध काव्य के भावपक्ष से है, जब कि अलंकार शब्दार्थं रूप काव्य-शरीर की रमणीयता बढ़ाने के लिए प्रयुक्त तत्त्व है। अलंकार काव्य में पृथक् रूप से वस्तु का आधान या पृथक् रूप से भाव की अभिव्यञ्जना न करके वस्तु और भाव को आकर्षक रूप प्रदान करके सहृदय संवेद्यता में सहायक होते हैं। बाण जैसे रससिद्ध कवि को भी, गद्य के स्पष्टता-प्रधान माध्यम में कल्पना की समृद्धि से उत्पन्न काव्यास्वाद को अर्थालंकारों तथा भाषा को लालित्य एवं ओज प्रदान करने के लिए शब्दालंकारों का आश्रय लेना पड़ा। अलंकारों की विच्छित्ति द्वारा वर्णन-प्रक्रिया का एक नया ढाँचा सामने आता है जो बाण के अनुभाव से पूर्णतया प्रभावित है। बाणभट्ट अलंकारों से आकृष्ट होकर भी उनकी परिधि से बाहर भी विचरण करते रहते हैं और सुन्दर गद्य का प्रतिमान प्रस्तुत करते हैं। बाण रस-साधना की पूँजी की रक्षा करते हुए अलंकारों की वैचित्र्य-मण्डित वीथियों की सर्जना करते रहते हैं।

बाणभट्ट वर्णनीय वस्तु के एक-एक अवयव का उन्मीलन कर उसे आकर्षक रंगों के आधान से सुन्दर बनाने में अलंकारों के प्रयोग में दक्ष हैं। वर्ण्य वस्तु के अवयवों के स्वरूपतः वास्तविक चित्र खींच करके अलंकारों के ललित विन्यास से उन्हें अधिक कमनीय बना देते हैं। एक वर्णन की उपस्थापना में अलंकार का अनेक बार प्रयोग करके एकरसता समुत्पादन कर पाठक को एक प्रकार की भावभूमि में लीन कर देने के पश्चात् दूसरे अलंकारों की क्रमशः प्रयोग-वृद्धि से एक ही वर्णन में विविध अलंकारों की छटा कोमल अभिव्यञ्जनाओं के साथ स्फुरण कर देते हैं। जब बाण की कल्पना बन्ध तोड़कर उड़ने लगती है तब वे उत्प्रेक्षा का अधिक प्रयोग करते हैं। उत्प्रे

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के अतिशय प्रयोग से विषय की कल्पनाप्रसूत सभी रेखाएँ उभर आती हैं, उसके पार्श्व के सभी पदार्थ दृग्गोचर हो जाते हैं तथा उसके सम्पर्क में आने वाले सभी पदार्थों पर उसके परिणाम की छाया दीखने लगती है। उत्प्रेक्षा द्वारा वर्णनीय वस्तु के अन्तराल में निलीन अदृश्य रूप की अवतारणा में बाणभट्ट सिद्ध कवि माने जाते हैं।

अनुप्रास का प्रयोग बाण के वाक्य-प्रयोग का वैशिष्ट्य है। कर्त्ता तथा कर्म में, क्रिया तथा कर्त्ता में, क्रिया तथा कर्म में आनुप्रासिक शब्दसाम्य उनके गद्य को अत्यधिक कमनीय बना देता है। यह विशेषता विशेषण-विशेष्य, कार्य-कारण, सम्बन्ध-सम्बन्धी विवेचनों में अति रमणीय व कमनीय बन गयी है—

'......निशामनैषीत्। कटाक्षमिव कालरात्रेः, कर्णोत्पलमिव कालस्य; अलङ्कारमहङ्कारस्य, कुमित्रं कोपस्य, देहं दर्पस्य, ससहायं साहसस्य, अपत्यं मृत्योः, आगमनमार्गं लक्ष्म्याः निमित्तमार्गं कीर्तेः कृपाणम्।'

यमक अलंकार के निरूपण में भी बाणभट्ट ने अनुप्रास की छटा अनुभावित की है। यथा—

'चिरदर्शनजातोत्कण्ठं सोत्कण्ठं कण्ठे जग्राह।'

वा—

'रक्षितप्रजापीडस्तारापीडो नाम'।
'यत्र दशवदनलक्ष्मी-विभ्रम-विरामो रामो महामुनिमगस्त्यः।
शूलं तूलं नु गाढं प्रहर हर हृषीकेशकेशोऽपि वक्रः
शक्तो नो शत्रुभङ्गे भय-पिशुनसुनासीरनासीरधूलिः'॥

श्लेष अलंकार के प्रयोग के अनेक प्रयोजन बाण की भाषा में विद्यमान हैं। प्रत्यक्षरश्लेष-विधान का उद्घोष गद्य में करने की सुबन्धु की दर्पोक्ति होने से प्रयत्नपूर्वक कवियों द्वारा श्लेष-प्रयोग किया जाना तो प्रमाणित होता है किन्तु बाण का श्लेष-प्रयोग चमत्कार की सृष्टि करता है। बहुधा परस्पर विरोधी प्रकरणों में अनेकार्थक शब्द का प्रयोग द्विगुणित सौन्दर्य उत्पन्न करता है। 'अपि' के प्रयोग के साथ विरोधाभास लक्षित कराते हुए श्लिष्ट पदों का प्रयोग भी बाण की मौलिक विशेषता है। इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

'यस्मिंश्च राजनि जितजगति पालयति महीं चित्रकर्मसु वर्णसङ्कराः, रतेषु केशग्रहाः, काव्येषु दृढबन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ता, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु मदविकाराः, चापेषु

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गुणच्छेदाः, गवाक्षेषु जालमार्गाः, शशि-कृपाण-कवचेषु कलङ्काः, रतिकलहेषु दूतप्रेषणानि, सार्यक्षेषु शून्यगृहाः न प्रजानामासन् ।'

बाण की रचनाओं में अर्थ-श्लेष का साभिप्राय प्रयोग वर्ण्य के गुणों में विरुद्धमति अपने एक अर्थ से उत्पन्न कर दूसरे अर्थ से उसका तुरन्त परिहार भी कर देता है। बाण की उपमाओं का भी वैशिष्टच अर्थ के उद्घाटन में चरितार्थ होता है। पात्रों के चरित्र व स्वरूप-चित्रण में उनकी चारित्रिक विशेषताओं को उन्मीलित करने वाले उपमाओं का प्रयोग किया गया है। केवल प्रारम्भिक परिचयात्मक विस्तृत वर्णनों में ही उत्प्रेक्षा, उपमा, निदर्शना, स्वभावोक्ति, दीपक आदि अलंकारों के माध्यम से वर्ण्य-विषय के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उभार कर सामने रख दिया है। गद्य में अलंकार-प्रयोग का यह चातुर्य केवल बाणभट्ट में ही विद्यमान है जहाँ मालोपमाएँ, मालोत्प्रेक्षाएं उत्कलिका शैली का अलंकार व गुण बन जाती हैं। इस प्रकार अलंकार-प्रयोग भाषा को समृद्ध एवं सुन्दर बनाने के साथ ही उसे अलंकृत कर कमनीय बना देता है। भाषा भावानुकूल, प्रसङ्गानुकूल, अर्थानुकूल बदलती रहती है। कहीं उसमें नृत्य की मधुर रुनझुन सुनाई पड़ती है तो कहीं प्रलयकाल की भीषणता साकार हो उठती है। उनकी निस्सीम चयनित शब्दावली, अर्थगम्भीरता, चित्रमयता, स्वाभाविकता, मार्मिकता, मधुरता, नाद-वैभवसम्पन्नता, भावप्रकाशन, समता अपनी सानी नहीं रखते। अभिधा, लक्षणा, व्यञ्जना का अलौकिक चमत्कार आदि से अन्त तक सुसंगठितता, सुव्यवस्थितता व सुशृङ्खलता इनकी शैली में सर्वत्र नृत्य करती है। संस्कृत-भाषा को उन्होंने हाथ की पुत्तलिका बना रखा है। काणे, कीथ, काले, आर० डी० करमाकर आदि विद्वानों ने बाण के पाणिनिसम्मत व्याकरण-ज्ञान की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

अपह्नुति, श्लेष (अर्थ), समासोक्ति, अप्रस्तुतप्रशंसा आदि अर्थालंकारों की संविष्टि अनुप्रासालंकार के साथ मणिजटित स्वर्णहार के समान भाषा को अलंकृत करती है। अलंकार-प्रयोग के क्षेत्र में बाण अलंकारवादी युग के प्रतिनिधि कवियों में से एक माने जाते हैं। वे भी प्रत्यक्षरश्लेषमयी भाषा का दावा करने वाले सुबन्धु की गद्य-परम्परा के अनुयायी थे। इसीलिए कीथ महोदय ने कहा है कि बाण अलंकारों का प्रयोग अविश्रान्त रूप से करते थे। स्वयं बाण ने कादम्बरी में अलंकार-प्रयोग के प्रति रुचि प्रगट करते हुए उसके काव्य में महत्त्व प्रतिपादित करते हुए कहा है कि—

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri

'हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिता कथाः ।
निरन्तरश्लेषघना सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव' ॥

बाण के प्रिय अलंकार हैं—दीपक, काव्यलिङ्ग, उत्प्रेक्षा, उपमा, श्लेष, विरोध, परिसंख्या और अनुप्रास । वैसे प्रायः साहित्यदर्पण या चन्द्रालोक में परिगणित सभी अलंकारों का प्रयोग कादम्बरी में बाण ने कहीं-न-कहीं अवश्य किया है । हर्षचरित में अलंकारों का प्रयोग बलात् आनीयमान और प्रयास-साध्य जैसा लगता है परन्तु कादम्बरी के अलंकारों से सर्वत्र रसोद्दीप्ति होती है। बाणभट्ट की भाषा में संगीतात्मकता स्पष्ट है । माधुर्यव्यञ्जक वर्णों के एकत्र सन्निवेश से लयात्मकता के साथ भावातिरेक होने से गति भी विद्यमान है। भाव को मूर्त्त करने की क्षमता है तथा ध्वनि को शब्दों द्वारा रूप देने की सामर्थ्य विद्यमान है ।

सुबन्धु से प्रारम्भ किये गये लिट् के प्रयोग का परिष्कार करते हुए बाणभट्ट ने अपनी भाषा में विविधता तथा कर्त्ता, कर्म पदों से आनुप्रासिक साम्य बनाते हुए लिट्-प्रयोग किया है । अनेक प्रसिद्धाप्रसिद्ध धातुओं के लिट् लकार के प्रयोग से भाषा में सौष्ठव लाया गया है । निम्न उद्धरणों में बाणभट्ट की भाषा सम्बन्धी विशेषताएँ दर्शनीय हैं—

'अथ चलितगजघटाकम्पितातपत्रवनमनेककल्लोलपरम्परापतितचन्द्रमण्डल-प्रतिबिम्बसहस्रं महाप्रलयजलजलमिव प्लावितमहीतलमद्भुतोद्भूतकलकल-मखिलं सचचाल दलं' । (हर्षचरित-सप्तम उच्छ्वास)

उपमा का उदाहरण —

'द्रक्ष्यामि व पुनस्तस्याः स्मेरसृक्कोपान्तमालोलतारकमुत्त्रस्तहरिणशावका-यतेक्षणं मुखम्' । (कादम्बरी)

महाश्वेता की तपःमूर्ति का एक चित्र—

'त्रयीमिव कलियुगध्वस्तधर्मशोकगृहीतवनवासाम्, देहवतीमिव मुनिजन-ध्यानसम्पदम् । धर्महृदयादिव विनिर्गताम्' । महाश्वेता के नाम को सार्थक सिद्ध करने हेतु बाणभट्ट ने एक-से-एक उपमान प्रस्तुत किये हैं । उपमानों पर भी असम्भाव्य क्रियाओं की सम्भावना कर उपमा तथा उत्प्रेक्षा की श्लिष्ट छटा उपन्न कर दी है । महाश्वेता का यह वर्णन सहृदय पाठक के मस्तक को चन्द्रापीड की भाँति उस दिव्य तपस्विनी के सम्मुख विनत कर देता है पर

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कादम्बरी का रूप-वर्णन सहृदय को क्षणभर के लिए चन्द्रापीड की ही तरह अचल बना देने वाला है।

निश्चय ही बाणभट्ट के वर्णन का यह चमत्कार उत्कृष्ट अलंकार-प्रयोग जन्य है। चाण्डालकन्या, जरद्द्रविड धार्मिक, शवरसेनापति, पुण्डरीक अथवा कपिञ्जल के वर्णनों को देखने से ज्ञात होता है कि बाण के कलाकार ने इनमें तीन शैलियों का प्रयोग किया है, पहले तो जाति (स्वभावोक्ति) का आश्रय लेकर वर्ण्य व्यक्ति के रूप की सारी रेखाएँ स्पष्ट खींच देता है, फिर उपमा या उत्प्रेक्षा के द्वारा उन रेखाओं में रंग भरता है। इन उपमाओं और उत्प्रेक्षाओं में एक तरफ तो उस पात्र के प्रति बाण की भावना को व्यक्त करती हैं, दूसरी ओर उस पात्र के स्वभाव का मनोवैज्ञानिक परिचय भी देती हैं। शूद्रक के लिए 'हर इव जितमन्मथः' कहकर बाण ने शूद्रक के हृदय के किसी प्राक्तन संस्कार के कारण नारी के प्रति आकर्षण का अभाव का स्मरण कराना चाहा है। उपमा के प्रयोग में कभी-कभी वह ऐसे साधारण धर्म को चुनते हैं जो बाहर से शब्द-साम्य को लेकर चलती हुई शाब्दी-क्रीड़ा जान पड़ती हुई भी अन्तःसाम्य की व्यञ्जना करते हैं। अप्रस्तुतों के चयन में सहजता का सर्वत्र ध्यान रखा गया है। इस प्रवणता, कला-सौन्दर्य, वक्रोक्ति-मय अभिव्यञ्जना-प्रणाली, सानुप्रासिक समासान्त पदावली, दीपक, उपमा और स्वभावोक्ति की रुचिर योजना—जिसके बीच-बीच में श्लेष, विरोधाभास और परिसंख्या को गूँथ दिया है।

(१४) प्रश्न—कादम्बरी में चित्रित प्रेम-भावना की विवेचना प्रस्तुत कीजिए।

उत्तर—प्रेम-भावना—कादम्बरी में बाणभट्ट ने प्रेम और सौन्दर्य-भावना को साकार मूर्त्त स्वरूप प्रदान कर दिया है। कादम्बरी में वर्णित प्रेम सज्जन पुरुष की भाँति 'लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्' की उक्ति को चरितार्थ-सी करती प्रतीत होती है। महाश्वेता एवं कादम्बरी में यही भाव दृष्टिगोचर होता है। प्रारम्भिक अवस्था में महाश्वेता और पुण्डरीक का तथा कादम्बरी और चन्द्रापीड का प्रेम वासनात्मक ही उद्भूत होता है परन्तु वही प्रेम विरहाग्नि में तप कर गम्भीरता एवं आदर्श का रूप ले लेता है। बाणभट्ट ने कादम्बरी में वासनात्मक प्रेम की असफलता दिखाकर आदर्श व मर्यादित प्रेम के सफलता की पुष्टि की है। वातावरण में अन्तर होने के साथ ही प्रकृति-चित्रण में भी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्पष्ट अन्तर आ गया है। जाबालि मुनि के आश्रम में चन्द्रोदय-वर्णन मनोरमता के साथ-साथ आश्रम के अनुरूप पवित्रता एवं शिष्टता का अनुसरण करके वर्णन किया गया है तो अच्छोद सरोवर पर चन्द्रोदय पुण्डरीक के लिए कठोर एवं प्राणघातक वर्णन किया गया है।

बाणभट्ट की प्रेम-भावना पर कालिदास की आदर्श प्रेम-भावना की स्पष्ट छाप दीख पड़ती है। क्योंकि कालिदास 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' में वासनाजन्य प्रेम की असफलता दिखाकर दीर्घ विरह एवं तपस्या के बाद पुनः शकुन्तला और दुष्यन्त के मध्य प्रगाढ़ प्रेम का दर्शन आदर्श प्रेम की सुदीर्घ सीमा एवं सफलता का द्योतन करता है। उसी प्रकार कादम्बरी में भी महाश्वेता और कादम्बरी क्रमशः प्रथम प्रणय में असफल होकर विरह और तपस्या एवं व्रत आदि के पालन के पश्चात् विशुद्ध प्रेम के रूप में अपने-अपने प्रेमियों (पुण्डरीक और चन्द्रापीड) को प्राप्त करती हैं।

इसके अतिरिक्त बाण ने भी कालिदास के समान ही प्रेम-भावना का पूर्व जन्म के संस्कारों से सम्बन्ध स्वीकार किया है। शाकुन्तल में कालिदास ने दुष्यन्त की विरहोत्कण्ठिता का अंकुर प्रकटित करते हुए कहा है कि—

'रम्याणि वीक्ष्य मधुरांश्च निशम्य शब्दान्
पर्युत्सुको भवति यत्सुखितोऽपि जन्तुः।
तच्चेतसा स्मरति नूनमबोधपूर्वं,
भावस्थिराणि जननान्तरसौहृदानि'॥

बाणभट्ट द्वारा वर्णित वैशम्पायन चरित्र पर कालिदास की प्रेम-भावना का स्पष्ट प्रभाव दीख पड़ता है। जब वैशम्पायन अच्छोद सरोवर का दर्शन करता है तो उसको अकारण ही उस स्थान से इतना अधिक आकर्षण उत्पन्न हो जाता है कि चन्द्रापीड की सेना के साथ न जाकर वहीं रुक जाता है। महाश्वेता का दर्शन होने पर उसे अपनी खोई हुई वस्तु प्राप्त होने जैसा अपूर्व अनुभव प्राप्त होता है। वह उसकी ओर सहज ही आकृष्ट हो प्रणय-याचना कर बैठता है। यह प्रणय-याचना वासनाजन्य होने के कारण महाश्वेता के शाप में परिणत हो असफल सिद्ध होती है। बाणभट्ट के प्रेम की उत्कृष्टता का रूप कालिदास के समान विवाह में ही प्राप्त होता है। इस प्रकार बाणभट्ट का आदर्श-प्रेम के प्रति पक्षपात स्पष्ट प्रतीत होता है। यदि 'दशकुमारचरित' में वर्णित प्रेम की तुलना बाणभट्ट के वर्णित प्रेमभावना से किया जाय तो यह स्पष्ट

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रतीत होता है कि दशकुमारचरित में वर्णित प्रेम वासनाजन्य एवं उच्छृंखलता से परिपुष्ट है, परन्तु बाण द्वारावर्णित प्रेम आदर्श एवं मर्यादित है। दण्डी के प्रेम-वर्णन में जहाँ यथार्थता का परिपोष हुआ है वहीं बाणभट्ट के प्रेम-वर्णन में आदर्श मर्यादा का पूर्ण निर्वाह किया गया है। दण्डी के प्रेम-वर्णन में स्वाभाविकता अधिक और उदात्तता कम है, इसीलिए वह अमर्यादित एवं उच्छृंखल अधिक हो गया है, जबकि बाणभट्ट का प्रेम-वर्णन उदात्त अधिक और स्वाभाविक कम जैसा प्रतीत होता है। बाणभट्ट का प्रेम-वर्णन आदर्श होने के साथ ही चिरस्थायी अथवा शाश्वत एवं स्थिर है, जो एक बार हो गया तो फिर वह जन्म-जन्मान्तरों तक चलता रहता है। यह जन्म-जन्मान्तर परिणामि प्रेम-भावना पाठकों को कुछ अस्वाभाविक एवं खटकती-सी प्रतीत अवश्य होती है परन्तु इसका उद्देश्य वासनाजन्य प्रेम की अपेक्षा मर्यादित आदर्श प्रेम-भावना की सफलता का द्योतन करना है। अतः बाणभट्ट का आदर्श एवं मर्यादा प्रेम के प्रति अनुराग अथवा पक्षपात स्पष्ट है।

बाणभट्ट के पात्रों का आदर्श प्रेम केवल एक ही व्यक्ति से सम्बन्धित होता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण महाश्वेता है। पुण्डरीक की मृत्यु हो जाने पर भी वह अपने प्रेमपथ पर अचल रूप से दृढ़ रहती है। पुण्डरीक के वैशम्पायन रूप में दूसरे जन्म में उपस्थित होने पर वह उसे नहीं पहचान पाने के कारण उसकी प्रणय-याचना को ठुकराकर उसे शुक होने का शाप दे देती है। कादम्बरी भी केवल चन्द्रापीड से ही प्रेम करती है और उसकी मृत्यु हो जाने पर वह उसके साथ सती होने को उद्यत हो जाती है, परन्तु आकाशवाणी द्वारा पुनर्मिलन का आश्वासन पाकर शव-रक्षण और शिव-आराधना में तत्पर हो जाती है। चन्द्रापीड भी कादम्बरी से अनन्य-प्रेम रखता है। पत्रलेखा भी परमसुन्दरी, रूपवती और चन्द्रापीड से प्रेम करने वाली है, परन्तु चन्द्रापीड को उसके इस प्रेम की भनक तक नहीं मिलती। बाणभट्ट ने इस त्रिकोणात्मक-संघर्ष को बड़ी ही चतुरता से बचाया है और एक व्यक्तिनिष्ठ प्रेम का परिपाक किया है।

बाण ने भारतीय परम्परा के अनुसार पहले स्त्रियों में ही कामविकार का दर्शन कराया है। भारतीय आदर्श प्रेम के अनुरूप एवं मान्यता के अनुसार स्त्रियों में ही प्रेम-भावना का स्रोत उद्भूत करते हुए वासनाजन्य प्रेम को ही आदर्श प्रेम का साधन स्वीकार किया है। आधुनिक कवि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के समान वे प्रेम को वासना से पृथक् अलौकिक प्रेम नहीं मानते। इसीलिए कादम्बरी में सञ्चारीभावों एवं सात्त्विकभावों का अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ वर्णन किया है। सांसों का तीव्रता से चलना, कुचों का फड़कना, पसीना आना, शरीर में कम्प उत्पन्न हो जाना तथा रोमाञ्च उत्पन्न होना—ये सभी रतिभाव के स्वाभाविक भाव महाश्वेता और कादम्बरी में समान रूप से दृष्टिगोचर होते हैं। इसके अतिरिक्त कवि ने हेतूत्प्रेक्षाओं के द्वारा कामभावना के विकार को और अधिक स्पष्ट करके चित्रित किया है। विरह-वर्णन में वाण के ऊपर प्राचीन परम्परागत विरह-वर्णन का प्रभाव स्पष्ट दीख पड़ता है। तथापि बाणभट्ट का विरह-वर्णन शैली की विशदता एवं कल्पना की उदात्तता के कारण सशक्त एवं विलक्षण प्रतीत होता है।

संक्षेप में बाणभट्ट की प्रेम-भावना के संयोग और वियोग दोनों ही पक्ष सशक्त, सजीव तथा सफल प्रतीत होते हैं। स्त्रियों के समान ही पुरुषों के विरह का स्पष्ट चित्र कादम्बरी में विद्यमान है। अतः यह कहा जा सकता है कि बाण ने कादम्बरी में भारतीय मर्यादित एवं आदर्श प्रेम-भावना का स्पष्ट चित्रण सफलता एवं रमणीयता के साथ किया है। निःसन्देह बाणभट्ट आदर्श प्रेम-भावना के प्रतिष्ठापक एवं कुशल कलाकार थे।

(१५) प्रश्न—बाणभट्ट के मानवीय सौन्दर्य-भावना की विवेचना कीजिए।

उत्तर—सौन्दर्य-भावना—संस्कृत गद्य-साहित्य में सौन्दर्य-चित्रण के क्षेत्र में बाणभट्ट एक अद्वितीय सिद्धहस्त कलाकार माने जाते हैं। उन्होंने कलम और तूलिका का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध बनाकर मणिकाञ्चन संयोग उपस्थित कर दिया है। उन्होंने सौन्दर्य-चित्रण हेतु न केवल मानव अपितु मानवेतर पात्रों को भी चुना है। प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ मानवीय सौन्दर्य का एकाकार करके उनमें सजीवता का आधान किया है। मानवीय सौन्दर्य-चित्रण में तो उन्होंने अपनी परिपक्वता का पूर्ण परिचय दिया ही है। उन्होंने स्त्री और पुरुष दोनों ही प्रकार के पात्रों के सौन्दर्य का समुचित चित्र उपस्थित किया है। इनका सौन्दर्य-चित्र उनकी काव्य-साधना का शृंगार बन गया है। स्त्री-पात्रों में चाण्डालकन्या, पत्रलेखा, महाश्वेता, कादम्बरी आदि नारीपात्र प्रमुख हैं। उत्प्रेक्षाओं और उपमाओं के सहारे पाठकों के सम्मुख बाणभट्ट ने

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने पात्रों का जो भव्य चित्र उपस्थित किया है उससे पाठक सहज ही मन्त्र-मुग्ध हो दिव्यलोक में विचरण करने लगता है।

स्त्रीपात्रों में सर्वप्रथम बाणभट्ट ने चाण्डालकन्या का सौन्दर्य-चित्रण प्रस्तुत किया है। शूद्रक के दरबार में हाथ में पिञ्जरा लिये उपस्थित चाण्डालकन्या का सौन्दर्य समस्त सामन्त-परिषद् को मुग्ध कर देने वाला है—

'चाण्डालदारकेणानुगम्यमानाम्, असुर-गृहीतामृतापहरण-कृत-कपट-पटु विलासिनीवेषस्य श्यामतया भगवतो हरेरिवानुकुर्वंतीम्, सञ्चारिणीमिवेन्द्र-नीलमणि-पुत्रिकाम्, गुल्फावलम्बिनीलकञ्चुकेनाच्छन्न-शरीराम्, उपरि रक्तां-शुक-विरचितावगुण्ठनाम्, नीलोत्पलस्थलीमिव निपतितसन्ध्यातपाम्, एक-कर्णावसक्त-दन्तपत्रप्रभाधवलितकपोल-मण्डलाम्, उद्यदिन्दुकिरणच्छुरित-मुख-मिव विभावरीम्, आकपिलगोरोचना-रचित-तिलक-तृतीय-लोचनाम्, ईशानु-चरित-किरातवेशामिव भवानीम्, उरःस्थलनिवास-संक्रान्त-नारायण-देहप्रभा-श्यामलितामिव श्रियम्, कुपित-हरहुताशन-दह्यमान-मदन-धूममलिनीकृतामिव रतिम्, उन्मद-हलि-हलाकर्षण-भय-पलायितामिव कालिन्दीम्······आलोहिता-ङ्गुलि-प्रभा-पाटलितनख-मयूखाम्, अतिकठिन-मणिकुट्टिम-स्पर्शमसहमानाम्, क्षितितले पल्लवभङ्गानिव निधाय सञ्चरन्तीम्, आपिञ्जरेणोत्सर्पिणां नूपुर-मणीनां प्रभाजालेन रञ्जितशरीरतया पावकेनेव भगवता रूपैकपक्षपातिना प्रजापतिमप्रमाणीकुर्वंता जातिसंशोधनार्थमालिङ्गितदेहाम्, ···शरदिव विकसित-पुण्डरीक-लोचनाम्, प्रावृषमिव घनकेशजालाम्······।'

इस प्रकार मूर्च्छा और निद्रा जैसे अमूर्त उपमानों से उसके लावण्य का सादृश्य निरूपण करके बाणभट्ट ने चाण्डालकन्या को विधाता की अलौकिक सृष्टि के रूप में चित्रित किया है। महाश्वेता का सौन्दर्य-वर्णन करते समय गौरवर्ण का परिपोष करने वाले सभी उपमानों व उत्प्रेक्षाओं का संकलन करके महाश्वेता के गौरवर्ण की अन्वर्थता को स्पष्ट किया है। महाश्वेता के सौन्दर्य-चित्रण में बाणभट्ट ने जिन उत्कृष्ट कल्पनाओं का निरूपण किया है वे पाठकों के हृदय को श्वेत कर देती हैं। महाश्वेता के अत्यन्त श्वेत कान्ति से घिरी हुई शरीर वाली होने के कारण उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग स्पष्ट नहीं दिखायी देते। उसे देख ऐसा प्रतीत होता था कि स्फटिक-गृह में बैठी हो अथवा क्षीरसागर में निमग्न हो अथवा सूक्ष्म वारीक रेशमी वस्त्र से ढकी हुई कोई मूर्ति हो अथवा दर्पणतल के अन्दर प्रविष्ट प्रतिमूर्ति हो अथवा मेघाच्छन्न

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शरद् ऋतु हो अथवा राहु के भय से चन्द्र की मूर्ति भगवान् शंकर की शरण में आ गई हो, अथवा शंकर के शरीर में लगने वाली विभूति ने ही शरीर धारण कर लिया हो, मानो महादेव के कण्ठ की नीलिमा का नाश करती हुई प्रत्यक्ष चाँदनी हो। वाणभट्ट ने इस आशय को प्रगट करते हुए कहा है— 'अन्तर्द्रष्टुरपि लोचनपथ-प्रविष्टेन श्वेतिमानमिव मनो नयन्तीम्, अतिधवल-प्रभा-परिगतदेहतया स्फटिकगृहगतामिव दुग्धसलिल-मग्नामिव, ······आविर्भूत-ज्योत्स्नामिव, हरकण्ठान्धकारविघट्टनोद्यमप्राप्ताम्······वेदत्रयीमिव कलियुग-ध्वस्तधर्मशोक-गृहीतवनसाम्······।'

इस प्रकार महाश्वेता के सौन्दर्य का चित्र अंकित करने के लिए उत्प्रेक्षाओं की वाणभट्ट ने मानों 'इतिश्री' ही कर दी है। वह शंखों को काटकर तराश कर बनी हुई-सी, मोतियों से निकाली गयी-सी, कमलडण्ठलों से अङ्गनिर्मिता, चन्द्रमा की रश्मि रूपी कूँची से साफ की गई, कलई से पोती गई, अमृत-फेन से स्वच्छ की गई या चन्द्रमण्डल को तराश कर बनाई गई-सी प्रतीत होती थी। वाणभट्ट ने इस भाव का चित्रण इन शब्दों में किया है—

'शङ्खादिवोत्कीर्णाम्, मुक्ताफलादिवाकृष्टाम्, मृणालैरिव विरचितावय-वाम्, दन्तिदलैरिव घटिताम्, इन्दुकरकूर्चकैरिवाक्षालिताम्······इयत्तामिव धवलिम्नः·· ··· ।'

वाणभट्ट ने कादम्बरी के सौन्दर्य का वर्णन अन्य पात्रों की अपेक्षा अधिक विस्तार से किया है। कादम्बरी के नख-शिख का चित्रण करते समय कवि ने अनेक मौलिक उत्प्रेक्षाओं, कल्पनाओं का आश्रय लिया है। कादम्बरी के नाखून पृथ्वीमण्डल के नक्षत्र जैसे, चरणतल विद्रुम-रस-नदी प्रवाहित करते हुए प्रतीत होते थे। ब्रह्मा के द्वारा कादम्बरी की रचना करते समय मानों दृढ़ता से दबाये हुए मध्यभाग से निपतित लावण्य की धारा जघन रूप शिलातल की टक्कर से दो भागों में विभक्त होती हुई दो जंघाओं के रूप में स्थित हो गयी-सी प्रतीत होती थी। उसके नितम्ब मानों सब लोगों के हृदय से गिरे हुए भार के कारण अत्यन्त विशाल अथवा भारी हो गये जैसे लगते थे। उसकी कटि मानो ऊँचे कुचों के कारण मुख न दिखायी पड़ने के दुःख से दुर्बल (पतली) हो गयी जैसी लगती थी। उसकी रोमपंक्ति से मानों तीनों लोकों को जीतने वाले कामदेव की विजयप्रशस्ति लिखी हो, उसके पृथुता स्तन मानों कामदेव का पादपीठ हो, उसके हाथ मानों लावण्यपूर जलाशय

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के चञ्चल मृणाल हों, उसके अधर प्रवाल-पंक्ति सदृश लाल थे, उसकी नाक रति की वीणा के रत्नकोण के समान अति सुन्दर थी।

महाकवि बाणभट्ट ने महाश्वेता के सौन्दर्य वर्णन में अप्रस्तुत उपमानों की योजना एक पवित्र भावना की सृष्टि के दृष्टिकोण से किया है और इसके साथ ही कादम्बरी के अंगों के सौन्दर्य-वर्णन से कामोद्दीपन का लक्ष्य भी सिद्ध हो गया है। कादम्बरी के लावण्यमय अंगों में साक्षात् कामदेव विराजमान प्रतीत होते हैं। महाश्वेता गौरत्व की इयत्ता होते हुए भी एक शान्त और पवित्र आदर की भावना को जागृत करती है, परन्तु कादम्बरी लावण्यता की इयत्ता के साथ-साथ कामवासना को उद्दीप्त करने में प्रेरक अथवा घृताग्नि संयोग की सृष्टि करती है। यथा—

'प्रजापतिकरदृढनिष्पीडितमध्यभागगलितं जघनशिलातल-प्रतिघाताल्लावण्य-स्रोत इव द्विधागतमूरुद्वयं दधानाम्, ...त्रिभुवन-विजय-प्रशस्तिवर्णावलीमिव लिखितां मन्मथेन रोमराजिमञ्जरीं बिभ्राणाम्। ......रक्तावदातस्वच्छ-कान्तिना च मदिरा-रस-पूर्णमाणिक्य-शुक्ति-सम्पुटच्छविना कपोलयुगलेन रति-परिवादिनीरत्नकोणचारुणा नासावंशेन च विराजमानाम्।'

बाणभट्ट ने केवल स्त्रियों का ही अपितु पुरुष-पात्रों के भी सौन्दर्य का मनोरम एवं हृदयाकर्षक वर्णन प्रस्तुत किया है। पुरुषों में सर्वप्रथम शूद्रक का सौन्दर्य-वर्णन राजोचित परिवेश में किया गया है और चन्द्रापीड के सौन्दर्य का वर्णन युवराजोचित तथा जाबालि, हारीत, पुण्डरीक एवं कपिञ्जल के सौन्दर्य का वर्णन तपस्विजनोचित परिवेश में किया गया है। राजोचित सौन्दर्य-वर्णनों में उदात्तता, रमणीयता एवं आदर्श कमनीयता का दर्शन होता है तो तपस्विजनोचित सौन्दर्य-वर्णन में शान्त, पवित्र एवं उदात्त सौन्दर्य का दर्शन मिलता है। शूद्रक के सौन्दर्य-वर्णन का राजोचित परिवेश उसके बाह्य एवं आभ्यन्तर सौन्दर्य का उद्बोधन करने वाला है। यथा—

'...नरपतिसहस्रमध्यवर्त्तिनमशनिभय-पुञ्जितकुलशैलमध्यगतमिव कनक-शिखरिणम्, अनेकरत्नाभरण-किरण-जालकान्तरितावयवमिन्द्रायुध-सहस्र-सञ्छादिताष्टदिग्विभागमिव जलधरदिवसम्, अवलम्बितस्थूलमुक्ताकलापस्य कनकशृङ्खला-नियमितमणिदण्डिकाचतुष्टयस्य गगन-सिन्धु-फेन-पटल-पाण्डुरस्य नातिमहतो दुकूलवितानस्याधस्तादिन्दुकान्तमणिपर्यङ्किकानिषण्णम्, उद्धूयमान-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुवर्णदण्डचामरकलापम्, उन्मयूख-कान्तिविजय-पराभवप्रणते शशिनीव स्फटिक-पादपीठे विन्यस्तवामपादम्...... ।'

चन्द्रापीड के सौन्दर्य-वर्णन में कवि ने एक स्वस्थ सुन्दर लोकाभिराम कमनीय युवराज का सजीव चित्र उपस्थित करते हुए कहा है—

'एवं तस्य सर्वविद्यापरिचयमाचरतश्चन्द्रापीडस्य त्रिभुवनविलोभनीयोऽमृत-रस इव सागरस्य, सकल-लोक-हृदय-नयनानन्द-जननश्चन्द्रोदय इव प्रदोषस्य, बहुविध-रागविकारभङ्गुरः सुरधनुःकलाप इव जलधरसमयस्य, मकरध्वजा-युधभूतः कुसुम-प्रसव इव कल्पपादपस्य, अभिनवाभिव्यज्यमानरागरमणीयः सूर्योदय इव कमलवनस्य, विविध-लास्य-विलासयोग्यः कलाप इव शिखण्डिनो यौवनारम्भः प्रादुर्भवन् रमणीयस्यापि द्विगुणां रमणीयतां पुपोष। लब्धावसरः सेवक इव निकटीबभूवास्य मन्मथः। लक्ष्म्या सह वितस्तार वक्षःस्थलम्। बन्धुजनमनोरथैः सहापूर्य्यतोरुदण्डद्वयम्। अरिजनेन सह तनिमानमजत मध्य-भागः।'

बाणभट्ट के सौन्दर्य-वर्णन की यह प्रमुख विशेषता है कि वह पात्र के देश-काल एवं अवस्था का सदा ध्यान रखते हैं तथा उसकी मर्यादा का कभी अतिक्रमण नहीं करते। उन्होंने सभी वर्ग के पात्रों का यथोचित यथार्थ का कहीं भी अपलाप नहीं किया है। जाबालि, हारीत, कपिञ्जल, पुण्डरीक आदि के सौन्दर्य में तपस्विजनोचित शान्त, गम्भीर एवं उदात्त पवित्रता का भाव उभरता है तो शवरसेनापति के शरीर-सौष्ठव से रौद्र एवं भय का सञ्चार होता है। जरद्द्रविड धार्मिक का घृणास्पद एवं हास्यास्पद मनोहर वर्णन पाठकों को हठात् अशिक्षित के कुप्रभाव का भान करा देता है। यथा—

'निःसंस्कारतया यत्किञ्चनकारिणा, खञ्जगतया मन्दं-मन्दं सञ्चारिणा, बधिरतया संज्ञाव्यवहारिणा, रागान्धतया दिवाविहारिणा, लम्बोदरतया प्रभूताहारिणा......क्षणमपि अमुक्तकालकम्बलखण्डखोलेन जरद्द्रविडधार्मिके-नाधिष्ठितां चण्डिकामपश्यत्।'

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि बाणभट्ट ने अपने सौन्दर्य-वर्णनों में रमणीयता, कमनीयता एवं पवित्रता के साथ प्रसंगोपात्त अरमणीयता आदि सभी प्रकार के विषयानुसारी सशक्त भावों का सजीव चित्र उपस्थित करने में प्रस्तुत और अप्रस्तुत उपमानों का आश्रय लेकर अथवा कल्पना करके काव्य में अद्भुत चमत्कार उत्पन्न कर दिया है। साथ ही यह तथ्य भी निर्विवाद

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सिद्ध हो जाता है कि बाण की रचना में स्त्रियों और पुरुषों के सौन्दर्य-वर्णन की विलक्षणता, आदर्शवादिता तथा पवित्रता एवं तल्लीनता दर्शनीय है। विषय व भयंकर वर्णनों की सफलता और सजीवता पाठकों के हृदय को वरवश आकृष्ट कर विषयानुसारिणी सौन्दर्य-वर्णन शैली के आनन्दसागर में निमग्न होकर काव्यानन्द का आस्वाद पाकर नित्याहार को भी भूल जाते हैं। तभी तो किसी प्रशंसक कवि ने कहा है—'कादम्बरी रसज्ञानामाहारोऽपि न रोचते।'

(१६) प्रश्न — कादम्बरी के आधार पर राजकीय शिक्षा-पद्धति पर प्रकाश डालिए।

उत्तर — राजकीय शिक्षा-पद्धति—महाकवि वाणभट्ट रचित कादम्बरी के अध्ययन से न केवल तत्कालीन ऐतिहासिक व सामाजिक स्थिति का पता चलता है अपितु सामाजिक शिक्षा-व्यवस्था का भी पर्याप्त परिचय मिलता है। उस समय राजकुमारों, सामन्तों एवं सम्भ्रान्त जनों के वालकों की शिक्षा के लिए अलग एवं सामान्य जनों की शिक्षा के लिए अलग व्यवस्था थी। राजा द्वारा राजकुमारों की शिक्षा के लिए अलग विद्यालय खोले जाते थे जिनमें अच्छे विद्वान् पंडित ढूंढ कर लाये जाते थे और वृत्ति पाते थे। शिक्षा-पद्धति गुरुकुल की ही थी। राजकुमारों की शिक्षा के लिए राजमहल से दूर उपवन के रमणीक वातावरण में पाठशाला का निर्माण किया जाता था और राजकुमार को समवयस्क सामान्तकुमारों के साथ वहीं रहकर विद्या-अध्ययन करना होता था। आश्रम में ऐसे कोई भी उपकरण नहीं होते थे जिनसे राजकुमारों का ध्यान अध्ययन से दूर हटे। राजकुमार से मिलने के लिए माता-पिता को स्वयं आना पड़ता था। विद्या-समाप्ति के पश्चात् ही राजकुमार राजमहल में प्रवेश करते थे।

महाराज तारापीड ने भी परम्परानुसार चन्द्रापीड के शैशवावस्था समाप्त हो जाने पर राजधानी के वाहर शिप्रा नदी के पावन तट पर अर्धकोस लम्बा एक विशाल विद्यामन्दिर बनवाया। यह विद्यामन्दिर हिमशिखरमाला सदृश ऊँचा और चूने के लेप से शुभ्र वर्ण की चहारदीवारी से परिवेष्टित था। चहारदीवारी के चारों ओर बाहर से एक चौड़ी खाई उसे घेरे हुए थी। अत्यन्त दृढ़ कपाट से उसके अन्यान्य द्वार बन्द थे तथा आने-जाने हेतु केवल एक मार्ग ही खुला हुआ था। विद्यामन्दिर में एक तरफ घोड़े-गाड़ियों के

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

रखने हेतु स्थान बनाया हुआ था एवं नीचे की भूमि में व्यायामशाला बनी हुई थी जहाँ राजकुमार नित्य व्यायाम किया करते थे। वह विद्यालय-भवन किसी देव-सदन से कम पवित्र नहीं था।

राजा तारापीड ने उस विद्याभवन में यत्नपूर्वक सभी विद्याओं के आचार्यों को एकत्रित करने के उपरान्त राजकुमार चन्द्रापीड को उनके सान्निध्य में शुभ दिन में वैशम्पायन के साथ प्रवेश कराया। उन दोनों को शिक्षा-समाप्ति के पश्चात् ही इस विद्यालय-भवन से बाहर निकलने का तथा गुरुजनों की आज्ञा का पालन करने का निर्देश भी दिया। शिक्षक-गण भी बालकों के मन का आकर्षण करने वाली खेल की सब चीजें वहाँ से हटाकर, सत्कुलोत्पन्न कुमारों को ही अधिक संख्या में साथी बनाकर तन्मयता एवं मनोयोग से इन कुमारों को शिक्षा प्रदान करते थे।

चन्द्रापीड भी अनन्यहृदय से कुछ ही दिनों में आचार्यों से सब विद्याओं को सीख गया। आचार्यगण कुमार की इस अद्भुत योग्यता से प्रेरित होकर बड़े ही उत्साह से उसे विद्या सिखाने में अपना कौशल दिखाने लगे। समस्त विद्याएँ व कलाएँ निर्मल दर्पण की परछाई की भाँति सहज ही चन्द्रापीड के निर्मल हृदय में प्रवेश कर गईं।

यहाँ बाणभट्ट ने उस समय के साहित्य और कला प्रधान पाठ्यक्रम का कुछ अधिक विस्तार से वर्णन किया है जिससे हम उस समय की शैक्षिक प्रगति का सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। व्याकरण, मीमांसा, न्याय, धर्मशास्त्र ये शास्त्रीय शिक्षा-क्रम के आवश्यक अंग थे। श्यूआन चुवाङ् ने नालन्दा के पाठ्यक्रम में भी इनका उल्लेख किया है। राजनीतिशास्त्र का भी इनके बाद उल्लेख है। गुप्तयुग की ज्ञान-साधना में कौटिल्य, बृहस्पति, शुक्र आदि के प्राचीन राजशास्त्रों का सविशेष पठन-पाठन होता था। उनके आधार पर कई नवीन ग्रन्थों की रचना भी की गयी। अर्थशास्त्र के प्रति संस्कृत रूप कामन्दक-नीतिसार का भी उसी समय निर्माण हुआ। विष्णुशर्मा ने अपने ग्रन्थ पञ्चतन्त्र में समस्त राजशास्त्रों और नीतिशास्त्रों के तन्त्रों को निचोड़ रूप में प्रस्तुत किया।

शास्त्रीय ज्ञान के साथ ही शारीरिक विकास-शिक्षा पर भी उस युग में विशेष ध्यान दिया जाता था। मल्लविद्या की शिक्षा सबके लिए आवश्यक थी। इसके लिए राजकुल में व्यायामशाला का विशेष प्रबन्ध होता था।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

राजकुमारों के लिए धनुष, चक्र, ढाल, तलवार, शक्ति, भाला, फरसा, गदा आदि की शिक्षा भी दी जाती थी। दण्डायुध और पाण्यायुध दो प्रकार के हथियार होते थे। समुद्रगुप्त की प्रयाग-प्रशस्ति में भी फरसा, बाण, सांगी, शक्ति, भाला, तलवार, तोमर, भिन्दिपाल, नाराच (धनुष), नावक के तीर (वैतस्तिक) का वर्णन मिलता है। यहाँ रथचर्या का सविशेष उल्लेख है। यद्यपि उस युग की युद्धविद्या में रथों की अपेक्षा हाथियों और घोड़ों की पीठ पर सवारी को विशेष महत्त्व दिया जाता था। हस्तिशिक्षा (हाथियों को सिखाना) और घोड़ों के लक्षण को जानना भी राजकुमारों के लिए आवश्यक था।

बाण के समय में ललित कलाओं की शिक्षा पर भी विशेष बल दिया जाता था। संगीत में निपुणता गुप्तयुग के नागरिक की विशेषता थी। वीणा, बाँसुरी, मृदंग, मंजीरा, दर्दुर (घटवाद्य) आदि वाद्यों में; भरत आदि के नृत्तशास्त्रों में एवं नारद आदि के गन्धर्ववेद में कुमारों को अभ्यास कराया जाता था। सर्व शिल्प और कलाओं का भी सामान्य उल्लेख किया गया है। विशेष शिल्पों में वास्तुविद्या और दारुकर्म (काष्ठकला), दन्त-व्यापार और यन्त्र-प्रयोग का नामोल्लेख है। गुप्तयुग की वास्तुविद्या का उत्कृष्ट ग्रन्थ 'मानसार' है जिससे वास्तु और स्थापत्य शिल्प की समृद्ध शब्दावली और प्रयोगों का पता चलता है। मानवीय हाथों से साधारणतः सम्भव कार्य से अधिक कार्य करने की युक्तियाँ भी उस युग में ढूँढ़ निकाली गयी थीं जिसे यंत्र-प्रयोग के नाम से जाना था। उदाहरण के लिए रहट जलघटीयन्त्र और फव्वारा धारायन्त्र कहा जाता था।

चित्रकर्म या चित्रकला की साधना उस युग में सर्व व्यापक थी। उज्जयिनी के महाप्रासाद चित्रशाला कहे जाते थे। काव्य व नाटकों से ज्ञात होता है कि सभी सुसंस्कृत स्त्री-पुरुष चित्रकर्म अवश्य सीखते थे। चित्र को आलेख्य या आलेखन भी कहा जाता था। बृहत्संहिता के एक ही श्लोक में आलेख्य और लेख्य दोनों शब्दों का प्रयोग दोनों के दो भिन्न अर्थ को इंगित करता है। लेख शब्द का गुप्तयुग में प्रचलित अर्थ लेखपत्र था। ये लेख-पत्र दो प्रकार के होते थे—राजकीय, जैसे शासनपत्र और जानपद, जैसे ऋणी द्वारा धनिक के प्रति लिखा हुआ ऋणपत्र। बृहत्संहिता से ज्ञात होता है कि उस समय लेख्य-विद्या का बहुत प्रसार था और इसके जानने वाले लेख्यविद्

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कहे जाते थे। विष्णुस्मृति के अनुसार राजाधिकरण में निवद्ध और अध्यक्ष द्वारा चिह्नित लेख्य राजसाक्षिक कहलाते थे। सब प्रकार के लेख्यों के विषय में पूरा परिचय राजा के लिए आवश्यक होता था, इसलिए लेख्य-विद्या की शिक्षा भी उसके लिए आवश्यक थी। रतितन्त्र या कामशास्त्र की भी शिक्षा राजकुमारों को दी जाती थी।

कादम्बरी में 'पुस्तक-व्यापार' शब्द भी प्रयुक्त हुआ है परन्तु इसका अर्थ छपी पुस्तकों की विक्री से न होकर मिट्टी के खिलौनों और मिट्टी की विभिन्न कारीगरी से है। वाण की मित्रमण्डली में कुमारदत्त पुस्तकर्म में उस्ताद माना जाता था। पुस्त का शब्दार्थ लेख्य था और पुस्तकृत् ही लेप्यकार कहा जाता था। राज्यश्री के विवाह के अवसर पर मिट्टी की मछली, कछुए, मगर, फल, वृक्ष आदि वनाने के लिए लेप्यकार बुलाये गये थे। उसी प्रकार का एक शब्द सुरुंगोपभेद भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। सुरंग का भेदन युद्धविद्या से सम्बन्ध रखता है। उस समय जो पहाड़ी दुर्ग होते थे उनमें बाहर की परिखा, उन पर बने हुए संक्रम या पुल और परकोटे को पार करके पहले कई लम्बे-चौड़े चौक (अजिर) मिलते थे जिनमें हाथी, घोड़े और फौज के रहने के लिए विस्तृत भूमि होती थी। फिर एक छोटे दरवाजे से जिसमें एक वार एक ही आदमी जा सके, ऐसा एक अँधेरा रास्ता कुछ दूर तक जाता था जिसमें ऊपर की ओर रक्षा-पुरुष वैठाये जाते थे और अन्त में एक चक्करदार रास्ता जिसे गरेरी (सीढ़ी) कहा जाता था, पहाड़ काटकर बनाया जाता था। उसके ऊपरी सिरे पर लोहे का एक तवा रखकर उसे युद्ध के समय गरम करते थे। यही मार्ग सुरुगा या सुरंग कहा जाता था। युद्ध में इसका भेदन करना आवश्यक होता था। सुरंग के बाद पहाड़ी की चोटी पर लम्बे-चौड़े मैदान में राजप्रासाद बनाया जाता था।

उज्जयिनी के वर्णन में वहाँ के नागरिकों को सब देशों की भाषा तथा लिपियों का ज्ञाता कहा गया है। अवश्य ही इन विषयों की शिक्षा का प्रबन्ध तत्कालीन पाठ्यक्रम में रहता होगा। इसके साथ ही गुप्त संदेश-प्रेषण हेतु संज्ञालिपियों का भी व्यवहार होता था। इन संज्ञालिपियों का उल्लेख अर्थशास्त्र में भी आया है। साहित्य के क्षेत्र में काव्य, नाटक, कथा, आख्यायिका, महाभारत, रामायण, इतिहास, पुराण आदि की शिक्षा दी जाती थी, जिसकी साधना राजसभा में सम्राट् और उनकी पंडित-मण्डली किया

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

करती थी। गान्धर्व-कला का गन्धर्ववेद से अलग द्यूत-कला के साथ उल्लेख किया गया है। सम्भवतः यह शास्त्र गधरव कही जाने वाली गणिकाओं के विषय में विविध जानकारी से सम्बन्ध रखता था। ज्योतिष, आयुर्वेद, रत्न-परीक्षा, पुरुष-लक्षण, घोड़े-हाथियों के लक्षण, विष उतारना, तैरना, कूदना, वृक्षों पर चढ़ना आदि व्यावहारिक जीवन की बातें भी शिक्षा के आवश्यक अङ्ग होने के कारण राजकुमारों की शिक्षा के पाठचक्रम में सम्मिलित थे।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि बाणभट्ट के समय में राजकीय शिक्षा गुरुकुल-प्रणाली पर आधारित थी। गुरुकुल सदा शान्त वातावरण में बनाये जाते थे और नगर से दूर होते थे। राजकीय गुरुकुलों में मन्त्रियों और सम्भ्रान्त कुलों के लड़कों को ही राजकुमारों के साथ शिक्षा दी जाती थी। विद्यार्थियों को सामान्य गुरुकुलों की भाँति ही शिक्षा-समाप्ति के पश्चात् घर जाने की अनुमति मिलती थी। माता-पिता को उनसे मिलने स्वयं आना पड़ता था परन्तु इसके लिए भी एक समय निश्चित होता था। चन्द्रापीड ६ वर्ष की अवस्था में आश्रम में आया था और १७ वर्ष की अवस्था में शिक्षा समाप्ति के पश्चात् ही नगर में प्रवेश किया। गुरुकुलों में सामान्य छात्रों की भाँति राजकुमारों को दण्ड दिया जाता था। गुरु-सेवा और गुरु-भक्ति का नियम उन्हें भी पालन करना पड़ता था। इससे छात्रों की विनीतता, शिष्टता एवं गुरुभक्ति का पता चलता है। गुरुकुलों में सर्वतोन्मुखी शिक्षा-व्यवस्था थी। सभी व्यावहारिक उपयोगी विद्याओं की शिक्षा की व्यवस्था थी। छात्रों के भोजन, फल, दूध आदि का प्रबन्ध गुरुकुल की ओर से होता था जो राजकीय सहायता रूप में प्राप्य था।

(१७) प्रश्न—कादम्बरी के आधार पर अधोलिखित वर्णनों पर संक्षिप्त प्रकाश डालिए—१. विदिशा-वर्णन, २. विन्ध्याटवी-वर्णन, ३. पम्पा-वर्णन, ४. प्रातः-वर्णन, ५. सन्ध्या-वर्णन, ६. इन्द्रायुधवर्णन, ७. राजकुल (अन्तःपुर)-वर्णन, ८. लक्ष्मीदोष-वर्णन।

उत्तर—विदिशा-वर्णन—वेत्रवती नदी के द्वारा चतुर्दिक् परिवेष्टित, तीनों भुवन में अत्यन्त सुन्दर विदिशा नामक नगरी राजा शूद्रक की राजधानी थी। विकराल कलिकाल के भय से भागा हुआ सतयुग इस विदिशा नगरी में शरणार्थी बनकर रह रहा था—ऐसा वहाँ के निवासियों में सत्त्वगुण-प्रधान

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वृत्तिको देखने से लगता था। मालवा जनपद की युवतियाँ उस वेत्रवती की उर्मिमालाओं के साथ निर्भय जलक्रीडा करती थीं। इतिहास की दृष्टि से वेत्रवती और विदिशा के साथ मालवों का उल्लेख महत्त्वपूर्ण माना जाता है। बाण के समय (७वीं शती) तक मालवा का विस्तार विदिशा से उज्जयिनी तक था तथा वहाँ के निवासी मालव कहे जाते थे। इस प्रदेश का प्राचीन नाम अवन्ति प्रदेश था। कालिदास ने उज्जयिनी के स्थान पर अवन्ति जनपद का ही उल्लेख किया है, मालव शब्द उनके ग्रन्थों में नहीं है। मालव मूलतः पंजाब के निवासी थे और अपने साथी क्षुद्रकों के साथ मिलकर सिकन्दर से युद्ध में लोहा लिया था। फिर वे अपने मूल स्थान से उत्क्रान्त होकर राजस्थान की ओर आये और जयपुर के कर्कोट नगर को अपना केन्द्र बनाया। यह दूसरी शती ई० पूर्व की स्थिति थी। वे यहाँ से क्रमशः और भी दक्षिण की ओर बढ़े। दक्षिणी जयपुर से उज्जयिनी तक के प्रदेश में मालवों का विस्तार तीसरी शती और छठी शती ई० के मध्य पूरी तरह हुआ। बाणभट्ट ने विदिशा के वैभवशाली होने का उल्लेख इस प्रकार किया है—

'तस्य च राज्ञः कलिकाल-भयपुञ्जीभूत-कृतयुगानुकारिणी, त्रिभुवनप्रसव-भूमिरिव विस्तीर्णा, मज्जनमालवविलासिनीकुचतटास्फालन-जर्जरितोर्म्मि-मालया जलावगाहनागत-जयकुञ्जर-कुम्भ-सिन्दूर-सन्ध्यायमानसलिलया, उन्मद-कलहंस-कुल-कोलाहल-मुखरितकूलया वेत्रवत्या परिगता विदिशाभिधाना नगरी राजधान्यासीत्।'

इस राजधानी में शूद्रक समस्त चिन्ताभार से मुक्त अनेक द्वीपों से आये अनेक राजाओं से सम्मानित होकर, बृहस्पति के सदृश विद्वान् जो वंश-परम्परा से नीतिशास्त्र-पारंगत, निर्मलचित्त थे, सदा उसके दरबार में नीति-विश्लेषण किया करते थे। समस्त कलाओं की आलोचना में परिपक्व क्षत्रिय राजाओं से घिरा हुआ, समय को जानने वाले ज्योतिर्विदों से सेवित, राजा शूद्रक सदा काव्य, नाटक, आख्यानक, आख्यायिका, चित्रकर्म, व्याख्यान आदि कृत्यों में प्रवीण जनों के साथ सुखपूर्वक वास करता था।

(२) **विन्ध्याटवी-वर्णन**—'कादम्बरी' में शूद्रक की सभा चाण्डालकन्या द्वारा उपहार रूप में प्रदत्त वैशम्पायन नामक तोता समस्त सभासदों की जिज्ञासा को शान्त करने हेतु आत्मकथा का आरम्भ अपने जन्मभूमि

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

विन्ध्याटवी के वर्णन से करता है। विन्ध्याटवी प्राकृतिक सौन्दर्य से सम्पन्न एक जंगल है जो पूर्व और पश्चिम के समुद्र तटों तक फैला हुआ मध्य देश को अपने वैभव से अलंकृत करता है। उसे पृथ्वी की मेखला कहना अधिक समीचीन होगा। यह वन अनेक फूलों व फलों से लदे हुए वृक्षों से भरा था। उसमें कहीं तो कुरर नामक पक्षी मरिच के वृक्षों के कोमल पत्ते नोंचकर खा रहे थे, कहीं हाथियों के बच्चे तमाल के पत्तों को तोड़कर मसल कर पृथ्वी पर डाल दिया था जिससे सुगन्ध निकल रही थी। उसमें चारों ओर लाल-लाल पल्लवों की छटा छायी हुई थी, मानो ललाई लिये हुए केरली स्त्रियों के कपोल हों या वन-विहारिणी किसी देवी के चरणों का अलक्तक रस चारों ओर बिखरा हो। स्थान-स्थान पर अनेक लतामण्डप सुशोभित थे। किसी में तोतों ने अनार के दाने बिखेर रखे थे, किसी में बन्दरों ने कक्कोल के फल और पल्लव गिरा दिये थे। किसी में पक्षियों ने अपने आराम करने के लिए लवंग के पल्लवों की साथरी (शय्या) बना रखी थी। किसी अरण्यानी में पूग वृक्षों पर ताम्बूल की लताएँ लिपटी हुई थीं। मानो वन-लक्ष्मी ने उन लतामण्डपों को अपना वासगृह बना रखा हो जिसमें फूलों की रेणु बिखरी हो। जिनमें हाथियों का मद-सलिल बहा करता था ऐसे इलायची के जंगलों का घना अँधेरा उस वन में छाया हुआ था। शबर-सेनापति इस जंगल में शेरों का शिकार करते थे। भैंसों से भरी वह अरण्यानी अत्यन्त भीषण भयावह लगती थी। उस जंगल में बाण, अशन, श्रीद्रुम, वरुणा, अगुरु, तिलक, ताड़, मैनफल, तमाल, नेत्र, कीचक, वेंत, शमी, पलाश आदि के अनेक वृक्ष भरे हुए थे। सिंह व गैंडे जैसे हिंसक जानवर दहाड़ते व इधर से उधर घूमा करते थे। सायंकाल मोरों का नृत्य अत्यन्त मनोहारी लगता था। सब जगह बड़े-बड़े पहाड़ खड़े थे। जगह-जगह असंख्य छोटी ताल-तलैया कल्लोल करती दिखाई देती थीं। रीछ, खरगोश, चाँवरी गायें और हिरन बन में चोकड़ी भरते थे। विन्ध्याटवी की उपमा तमाल के नील वृक्षों से नारायण मूर्ति से की जा सकती थी। वानरों से आक्रान्त वह मानों पार्थ के रथ की पताका थी। चंचल तारक मृगों का पीछा करते हुए व्याधों से वह अम्बर-श्री जैसी सुहावनी थी। कुश, चीर नामक तृण, जटा और वल्कलों से ज्ञात होता था कि उसने कोई व्रत धारण किया हो। एक ओर उसमें बहुल-पत्रों का संचय था तो दूसरी ओर सप्तपर्णों की शोभा देखने योग्य थी।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एक ओर हिंस्र जीवों का आतंक छाया हुआ था तो दूसरी ओर शान्त तपस्वि मुनिजनों से पुष्पवती पवित्र भी थी।

बाणभट्ट ने अपने विन्ध्याटवी-वर्णन में विन्ध्य के जंगलों की उपमा मेघ-माला, शिव, लक्ष्मी, विष्णु, यमराज के वाहन, युद्ध में धनुष-बाण चढ़ाकर सिंहनाद करती हुई सेना, खड्गधारिणी दुर्गा, कर्णीसुत (चौर्यकला के प्रवर्त्तक) की कथा में प्रसिद्ध विपुल और अचल नामक साथियों से, नीलकण्ठ भगवान् शिव आदि से की है। अनेक पौराणिक कथानकों को भी विन्ध्याटवी के उपमान रूप में प्रयोग किया है। यथा—

'प्रेताधिप-नगरीव सदासन्निहितमृत्यु-भीषणा महिषाधिष्ठिता च, समरोद्यतपताकिनीव बाणासनारोपितशिलीमुखा विमुक्तसिंहनादा च कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालङ्कृता च, कर्णीसुतकथेव सन्निहितविपुलाचला शशोपगता च, कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव प्रनृत्तनीलकण्ठा पल्लवारुणा च, अमृतमथनवेलेव श्रीद्रुमोपशोभिता वारुणीपरिगता च, प्रावृडिव घन-घनश्यामला अनेकशतह्रदालङ्कृता च, चन्द्रमूर्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणाध्यासिता च, राज्यस्थितिरिव चमरमृग-बालव्यजनोपशोभिता समदगज-घटा-परिपालिता च, गिरितनयेव स्थाणुसङ्गता मृगपरितसेविता च, जानकीव प्रसूतकुशलवा निशाचरपरिगृहीता च, कामिनीव चन्दन-मृगमदपरिमलवाहिनी रुचिरागुरु-तिलकभूषिता च······ ।'

(३) **पम्पासरोवर-वर्णनम्** — वैशम्पायन शुक ने मुनिजनों के आश्रमों का वर्णन सुनाते हुए विन्ध्याटवी में स्थित पञ्चवटी के समीप अगस्त्याश्रम का वर्णन सुनाया। तत्पश्चात् महाराज शूद्रक को वह पञ्चवटी स्थित विख्यात पम्पा नामक सरोवर का आँखों देखा हाल सुनाता हुआ कहता है—

उस अगस्त्य आश्रम से कुछ ही दूर पर पम्पा नामक सरोवर था। अगस्त्य जब समुद्र को पी गये तो उसके देवता वरुण ने ब्रह्मा को उकसा मानों एक नया सागर ही वहाँ बनवा दिया। सरोवर का शान्त धरातल देख ऐसा लगता था जैसे गगन तल पर उतर आया हो। पम्पा सरोवर की उत्पत्ति की दूसरी कल्पना—आदिवराह ने जब पृथ्वीमण्डल को समुद्र से बाहर निकाला था तो उसी पर यह पानी भरा रह गया, माना जाता है। इस सरोवर में शबरों की उद्दाम युवतियाँ खुलकर निर्बाध जलक्रीडा किया करती थीं। उस सरोवर में नाना भाँति के कमल और कोकावेली खिली

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

थीं। कमलों से उछटे हुए मधुबिन्दु पानी पर तैर रहे थे। बड़े सौगन्धिक कमल उन पर मँडरा रहे भौंरों से साँवले हो रहे थे। जलक्रीडा की अनुरागिणी वनदेवियाँ अपने केशकुसुमों से मानों जल को सुशोभित कर चली गई थीं। कहीं मुनिजन अपने कमण्डलु जल में डुबका रहे थे। नीले कमलों के मध्य हंसों के झुण्ड केवल बोली से ही पहचाने जा रहे थे। कहीं किनारे वर वनराज पुलिन्द की सुन्दरी नारियाँ अपनी चन्दन-चर्चित देह से अभिषेक कर रही थीं। किनारों पर केतकी के पुष्प लगे थे जिनके केसर की धूल बालू पर बिछी थी। पास के आश्रम से तपस्वी आकर अपना वल्कल धो रहे थे जिनका कसैला रंग धुल-धुल कर सरोवर के जल को रंगीन बना रहा था। तट के वृक्षों के हिलते हुए पल्लवों के झकोरों से जल में सुकुमार लहरें उठ रहीं थीं। सरोवर के चारों ओर वनमालाएँ सुशोभित थीं। कुछ में तमाल की वीथियों का अन्धकार छाया हुआ था। कहीं फल-फूलों से भरी मुण्डी बेलें छायी हुई थीं जिन्हें देखकर ज्ञात होता था कि बालि के भय से भागे हुए सुग्रीव ने उन्हें साफ कर दिया हो। तपस्वी जन देव-पूजा हेतु फल-पुष्प लेने को उस वन में आते थे। जल में भींगे हुए पक्षी ऊपर उड़कर पंख फड़फड़ाते तो उनकी बूँदें वृक्षों के सुकुमार पत्तों पर झरती थीं। वे वन पुष्पों की सुगन्ध से वनदेवियों के श्वास के सुवास जैसा भ्रम उत्पन्न करते थे। घोर अन्धेरा होने के कारण दिन में ही चकवा-चकई दो किनारों से पुकारते हुए बीच वालों को बिरही राम का मूर्तिमन्त शाप जैसा प्रतीत होते थे।

(४) **प्रभात-वर्णनम्**—एक दिन प्रभात वेला की रक्तिमा से रंजित आकाश की सुषमा का अवलोकन कर ही रहा था कि इतने में उस महावन में मृगया के कोलाहल की ध्वनि गूँज उठी। आकाश में चन्द्रमा एक ओर बूढ़े हंस की भाँति आकाशगंगा का तट छोड़कर पश्चिमी समुद्र के किनारे उतर रहा था। दिशाओं के छोर तक फैला हुआ पीला क्षितिज क्रमशः अधिक विस्तृत होता जा रहा था। चन्द्रमा की किरणें हाथी के रुधिर से रंजित सिंह के बालों के समान पहले कुछ अधिक लाल थीं, फिर उनका रंग लाक्षा के तन्तुओं के समान हो गया। धीरे-धीरे आकाश के तारे ओझल होने लगे मानो किसी ने पद्मराग की शलाकाओं से बनी झाड़ू फेर कर गगनतल के फर्श पर बिखरे सभी फूलों को समेट दिया हो। सप्तर्षिमण्डल उत्तर दिशा में दिखाई पड़ रहा था मानो वह मानसरोवर के तीर पर सन्ध्योपासन के

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

निमित्त उतरा हो। पश्चिमी समुद्र का तट धीरे-धीरे उषाकाल में धवलित हो गया था। उस पर जो सीपियों के खुले हुए सम्पुटों से बिखरे हुए मोती सूर्य की किरणों द्वारा समेट कर आकाश से गिराये हुए नक्षत्रों की भाँति चमक रहे थे।

वन में ओस की बूँदें वृक्षों से टप-टप करती धरती पर गिर रही थीं। पक्षी जाग गये। माँद में सोये हुए सिंह अंगड़ायी लेने लगे। हथिनियाँ मदमत्त यूथपति को जगाने लगीं। वृक्षों पर खिले हुए रात के फूलों को प्रभात वेला में अरण्य स्वयं अपनी पल्लवाञ्जलि में भरकर उदयगिरि के शिखर पर उगते हुए भगवान् सूर्य को अर्पित करने लगा। तपोवनों में मुनियों द्वारा वृक्षों के नीचे प्रारम्भ किये गये अग्निहोत्र की धूमशिखाएँ वृक्षों के शिखर भाग को छूती हुई धर्म की फहराती हुई पताका अथवा वनदेवताओं के महलों के शिखर पर बैठी हुई धूसर वर्ण की पारावत-पंक्ति की सुषमा प्रगट कर रही थी।

उस समय प्रभात काल की शीतल मन्द सुगन्ध वायु बहने लगी। कहीं उसने ओस की बूँदों का स्पर्श किया तो कहीं कमल के वनों को गुद-गुदाया। कहीं रतिखिन्न शबरी के स्वेदविन्दुओं से चुहल की। इधर जुगाली करते हुए जंगली भैंसों के मुँह से टपकते हुए फेनबिन्दुओं को उड़ा ले गयी, उधर फहराते हुए पल्लवों वाली लता रूपी नर्तकियों को सुकुमार लास्य सिखाने लगी। कहीं खिलते हुए कमल-वन के मकरन्द की वर्षा करने लगी। कहीं फूलों की सुगन्ध से भौंरों को छका डाला। रात्रि के अन्त में उत्पन्न शीत के कारण स्वयं जड़ बनी हुई मन्थर गति से चल पा रही थी। कहीं कमल-वनों में पुष्पों के खिलने से छूटे हुए भौंरें मंगल पाठकों की भाँति गुञ्जारने लगे और हाथियों के गण्डस्थल के पास डिण्डिम घोष के लिए जा पहुँचे। दूसरी ओर वे कुमुद-वनों के बन्द होते पुष्पों में अपने पंख समेट कर मुँद गये। वनमृगों ने प्रभात की ठण्डी वायु से जाग कर आँखें खोलीं। उनकी आँखों की बरौनियाँ मानो किसी ने हलका लाल रंग पोत दिया हो। कुछ-कुछ निद्रा से अलसाई हुई पुतलियाँ कनखियों से देख रहीं थीं। रेहाली धरती में सोने के कारण उनकी रोमराजि मटमैली हो रही थी। जब दिन कुछ और चढ़ा तो वनचर इधर-उधर आने-जाने लगे। पम्पा सरोवर में बतखों का शोर बढ़ने लगा। जंगली हाथियों के कान फड़फड़ाने की आवाज

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

सुनकर मोर नाचने लगे, मानो उसने उनके नृत्य में ताल का काम किया। धीरे-धीरे मँजीठिया रंग की किरणें आकाश में ऊपर छा गयीं, जैसे सूर्य रूपी हाथी के मस्तक पर लगा हुआ रंगीन चँवर हो। सूर्य का बालातप पम्पा सरोवर के वृक्षों की चोटी पर से होता हुआ पर्वत के शिखर पर पहुँच गया।

जब प्रातःकाल बिलकुल स्पष्ट दिखाई पड़ने लगा और दिन के अष्टम भाग में सूर्य की कान्ति निखर गई तब तोतों के झुण्ड मनचाही दिशाओं की ओर जाने के लिए उड़ चले। यद्यपि बच्चे उस वृक्ष पर ही बने रहे फिर भी वह वृक्ष नीरव बना रहा। तभी अचानक उस महावन में मृगया का कोलाहल भय का आतंक वनवासियों के मन में भर गया। सारा जंगल हाथियों के बच्चों की चिंघाड़ से, वनैले सूअरों की घर्घर ध्वनि तथा सिंहों की दहाड़ से गूँज उठा। मैं अपने पिता की गोद से चिपका हुआ यह दृश्य देख रहा था।

(५) **सन्ध्यावर्णनम्** — महाकवि बाणभट्ट ने प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से प्रभात-वर्णनों की अपेक्षा सन्ध्याकाल के वर्णन में अधिक रुचि दिखाई है। कादम्बरी में चार स्थानों पर सन्ध्याकाल के मनोरम चित्र अंकित किये गये हैं। पहला दृश्य जाबालि मुनि के आश्रम में सन्ध्याकाल का है। दूसरा दृश्य उज्जयिनी का है। तीसरा व चौथा दृश्य अच्छोद सरोवर का है। चारों वर्णन परिस्थिति के अनुरूप वातावरण प्रस्तुत करने वाले हैं। यहाँ पर केवल जाबालि मुनि के आश्रम में सन्ध्याकाल का चित्र उपस्थित किया जाता है जिसका वर्णन शूद्रक की राजसभा में वैशम्पायन तोता इस प्रकार करता है—

यह सब होते-होते दिन ढल गया। स्नान के बाद मुनियों ने अर्घ्य देते समय सूर्य को जो लाल चन्दन का अङ्गराग पृथ्वी पर अर्पण किया, उसे ही मानो सूर्य ने ग्रहण कर अपने शरीर में लगा लिया हो और वह लाल हो गया। दिन छोटा हो गया, मानो वह्निपात करने वाले मुनियों के द्वारा सूर्य का आतप-तेज पी लिया गया हो। सायंकाल उदित होते हुए सप्तर्षियों को किरण रूपी चरणों का स्पर्श न हो जाय, इस भय से सूर्य अपनी किरणों को समेट कर आकाश में एक ओर लटक गये और पश्चिमी समुद्र में पड़ती हुई उनकी लाल-लाल परछाईं जलशायी विष्णु का आसन मधुबिन्दु बिखेरने वाला लाल कमल हो। सूर्य की किरणें पृथ्वी को छोड़कर पर्वत की चोटियों पर कमलवनों से उड़कर सन्ध्या को आश्रम-वृक्षों पर आश्रय लेने वाले

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पक्षियों की भाँति विराजमान हो गयी। लाल धूप के टुकड़े अभी भी कहीं-कहीं वृक्षों पर अवशिष्ट थे, मानो मुनियों ने अपने लाल वल्कल टाँग रखे हों।

सूर्य के अस्त हो जाने पर पश्चिमी समुद्र के तल से विद्रुम-वल्ली की तरह उठती हुई सन्ध्या दिखायी पड़ी। आश्रम में कहीं मुनिजन ध्यान करने लगे, कहीं होमधेनुओं के दूहने की ध्वनि सुनायी देने लगी, कहीं हवनकुण्ड की वेदी पर ऋषिकुमार हरी-हरी कुशा बिछाने लगे और ऋषिकन्याएँ दिग्देवताओं के लिए बलि प्रदान करने लगीं। पाटल सन्ध्या थोड़ी दूर तक घूम-घाम कर वापस आयी कपिला गौ की भाँति मुनिजनों को दीख पड़ी। सूर्य के अन्यत्र प्रवास के लिए चले जाने पर शोकमग्न कमलिनी मानो पति-समागम हेतु व्रत पालन करने लगी। कमल की मूँदी हुई कलिका ही उसका कमण्डलु था, पास का हंस ही श्वेत दुकूल, मृणाल श्वेत यज्ञोपवीत और उन पर गुञ्जार करती हुई भ्रमरपंक्ति अक्षमाला थी।

सूर्य के पश्चिमी समुद्र में गिरने पर आकाश ने वेग से उठे हुए जलकण के समान तारागण को धारण कर लिया। थोड़े ही समय में आकाश में सिद्ध-कुमारियों से बिखेरे हुए सन्ध्या की पूजा के पुष्पों से चित्रित के समान आकाश ताराओं से युक्त हो गया। थोड़े ही समय में ऊपर मुख किये हुए मुनियों से ऊपर को प्रक्षिप्त प्रणामाञ्जलि जल से समस्त सन्ध्या का राग मानो प्रक्षालन किये गये के समान हो गया।

(६) **इन्द्रायुध-वर्णन**—बाणभट्ट ने यथार्थ वर्णन में मानवेतर पात्रों का भी सहयोग लिया है। इन्द्रायुध अश्व पारसीक देश के राजा द्वारा तारापीड को उपहारस्वरूप प्राप्त हुआ था। वह अयोनिज ही समुद्र से उत्पन्न हुआ था। उसमें उच्चैःश्रवा के सभी लक्षण विद्यमान थे। चन्द्रापीड की आज्ञा से जब वह आश्रम में लाया गया तो चन्द्रापीड ने उसे देखा। उसे दोनों ओर से दो पुरुष लगाम की सुनहली कड़ियों को पकड़े हुए पद-पद पर खींचकर रोकने का प्रयत्न कर रहे थे। वह प्रणाम में बहुत बड़ा था। कोई पुरुष हाथ उठाकर ही उसकी पीठ छू सकता था। उसकी गम्भीर हिनहिनाहट का शब्द भुवन में भर जाता था। वह कभी सिर को नीचे करता, कभी ऊपर उठाता और वेग रुकने के कारण क्रुद्ध होकर नाक से घुर-घुर शब्द करता था। उसके शरीर पर इन्द्रधनुषी रंग-बिरंगी रेखाएँ झलकती थीं, मानो विचित्र रंगों की पालान डाली गयी हो। वह घनीभूत वेग की प्रतिमूर्ति था।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अपने थूथन को बार-बार इधर से उधर चलाकर सूँ-सूँ शब्द करता हुआ नाक से भीतर गयी वायु को बाहर फेंकता-सा प्रतीत हो रहा था। उसके कड़वे स्वभाव को वश में लाने के लिए लोहे की कटीली लगाम के क्षोभ से उसके मुख से अधिक फेन गिर रहा था। उसका लम्बा मुँह मांस कम होने के कारण पत्थर में उत्कीर्ण-सा लगता था। मस्तक पर खड़ी कनौतियों के बीच में पद्मराग मणि लगी थी जिसकी किरणें लाल चँवर-सी लगती थीं। गले में चमकती हुई सुनहली जंजीर की रस्सी कई बार घुमा कर लपेटी गई थी। गरदन के पीछे लाल अयाल के बाल सुशोभित थे। वह सुनहली कुटिल पत्रलता के भंगुर रत्नमालाओं से झंकृत और बड़े-बड़े मोतियों से जडाऊ अश्वालंकार पहने था जिसमें पन्ने भी जड़े हुए थे। चञ्चलता के कारण उसके बैंगनी खुरों की टाप बार-बार धरती पर पडती हुई मृदङ्ग-सी बजती थी। पार्श्वभाग खराद पर तराशा हुआ, पिंडलियाँ टाँकी से उत्कीर्ण, छाती चौड़ी, गर्दन लम्बी, मुँह पतला, जघन भाग दोहरा था। उसके शरीर पर अशोक के झुग्गों जैसी ललाई झलक रही थी। मुँह पर श्वेत टीका भस्म लगाये किसी व्रती जैसा लगता था। वह चक्रवर्ती नरेश का वाहन होने योग्य था।

(७) **अन्तःपुर-वर्णन**—अन्तःपुर के भीतरी भाग में भुक्त्वास्थानमण्डप में काले अगुरु का धुआँ छाया हुआ था। वहाँ यामकुञ्जर पहरे पर तैनात थे। जैसे राजद्वार पर और महल के प्रथम कक्ष्या में व्यवस्था होती थी, अन्तःपुर की व्यवस्था भी वैसी ही थी। भवन में तमाल की वीथियों और रक्ताशोकों की शोभा थी। आभ्यन्तरास्थानमण्डप की छत से मुक्ताकलाप लटक रहे थे। स्नानभूमि में धारागृह बने हुए थे। पास में सोने की यष्टियां थीं, जिन पर भवन-मयूर सन्ध्या के समय बैठते थे। धवलगृह के ऊपरी भाग में चन्द्रशालिका के खम्भों पर उत्कीर्ण शालभंजिकाओं की मूर्तियाँ गृहदेवता-सी जान पड़ती थीं। राजा-रानी के निजी आवास के द्वार पर दण्डपाणि प्रतीहारी नियुक्त होते थे। राजकुल के वस्त्रकर्मान्त (तोशखाना) आदि भाण्डारों के लिए नाना श्रेणियों में काम करने वाले शिल्पी अनेक प्रकार की नयी-नयी वस्तुएँ बनाकर लाते थे। वे सभी वस्तुएँ भाण्डागार में संचय कर रखी जाती थीं। धवलगृह के आँगन की वीथियों में सुन्दर नृत्य के प्रयोग किये जा रहे थे। भवन-पुष्करिणी के कमलों की सुगन्धि फैल रही थी। दानशाला में याचकों को सम्पत्ति बांटी जा रही थी। नाटयशाला में पताका

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

और अंकों से समन्वित नाटकों का आयोजन हो रहा था। उसमें एक स्थान पर बाणविद्या के अभ्यास हेतु शस्त्राभ्यास-भूमि बनी हुई थी। कोशगृह में नाना स्थानों से सञ्चित किया हुआ कोश यथाविभाग रखा हुआ था। धवल-गृह की चित्रशालिकाओं के भित्तिचित्र ऐसे लगते थे मानो सारी त्रिलोकी ही उनमें अंकित हो। अन्तःपुर के मध्य भाग में पुराणपुरुष अर्थात् वृद्ध कञ्चुकी और वामन पुरुष या बौने विविध कार्यों के लिए नियुक्त थे। वहाँ बड़ा श्वेत चँदोवा तना हुआ था। कुछ राजकन्याएँ बाल अवस्था से ही राजकुल के अन्तःपुर में प्रतिपालित होती थीं और उन्हें गान्धर्व विद्या का विशेष अभ्यास कराया जाता था। उनकी व्युत्पत्ति और कला देखने के लिए राजकुल विशेष उत्कण्ठित रहता था। राज्याभिषेक के समय अनेक व्यक्तियों को नाना प्रकार के उपहारों का वितरण किया जाता था। विविध प्रकार के आसवों को भरकर रखने और पान करने के लिए भाँति-भाँति के बरतन और विशेष चषक आदि का संग्रह किया गया था। आभूषण गृह में बहुसंख्यक नक्षत्रमाला नामक हार संगृहीत थे। मार्जन गृह में स्नान, चूर्ण, धूप, विलेपन, अंगराग आदि तैयार रहते थे। ताम्बूल भवन में लवली, लवंग, इलायची, कंकोल का संग्रह किया जाता था। वहाँ अनेक प्रकार के चाटु संलापों और सुभाषितों का रसास्वादन किया जाता था और प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए ताली भी बजायी जाती थी। राजकुल के रत्नालय में रखे गये मणियों के जड़ाऊ गहनों का लेख्यपत्र लिपिक तैयार किया करते थे। अलंकार व आभूषणों के लिए विशेष प्रकार से शुद्ध किये हुए शृंगी कनक नामक सोने का भण्डार रखा गया था।

(८) **राजलक्ष्मी-दोषवर्णन**—पूर्व काल में जब समुद्र से लक्ष्मी का जन्म हुआ तो क्षीरसागर के पारिजात पल्लवों से राग, चन्द्रमा के कोर से टेढ़ापन उच्चैःश्रवा से चञ्चलता, कालकूट से मोहनशक्ति, मदिरा से मद; कौस्तुभ मणि से कठोरता लेकर उन-उन वस्तुओं के विरह में अपना जी बहलाने के लिए उनके चिह्नों के साथ यह बाहर आयी। यह किसी की जान-पहचान नहीं मानती। मिल जाने पर भी इसका रखना कठिन है। गुणों के दृढ़ पाशों से बाँधने पर भी यह भाग जाती है। शूरवीरों की चमचमाती तलवारों की कैद से भी निकल जाती है। न जान-पहचान मानती है, न कुल देखती है, न रूप पर ध्यान देती है, न कुल-मर्यादा मानती है। यह शील,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पाण्डित्य, विद्या, धर्म, त्याग और विशेषता—किसी का भी विचार नहीं करती। आचार का पालन नहीं करती। सत्य को यह क्या समझे? लक्षण का यह क्या प्रमाण माने? यह तो गन्धर्व नगर के चित्र की भाँति देखते ही देखते ओझल हो जाती है। मन्दराचल के घूमने से क्षीरसागर में जल में जो भँवर इसके जन्मकाल में उत्पन्न हुआ था, उस चक्कर का संस्कार आज भी इसमें विद्यमान है। तभी तो यह चक्कर देती रहती है। कमलिनी के जो काँटे इसके पैर में गड़े थे उसके कारण आज भी यह कहीं टिक कर पैर नहीं रखती। रईसों के घरों में यह बड़े प्रयत्न से रखी जाती है, फिर भी उनके हाथियों के गण्डस्थलों से पतित मद पी-पीकर यह गिर-गिर पड़ती है। निष्ठुरता सीखने के लिए ही मानो तलवार की धार में बसती है। विश्व रूप रखने के लिए ही मानो इसने नारायण मूर्ति का आश्रय ले रखा है। इसका कोई भरोसा नहीं।

यह लक्ष्मी मूल, दण्ड, कोश और मण्डल का संग्रह करने वाले राजा को भी छोड़कर असज्जनों के पास चली जाती है, जैसे लता कुत्सित विटपों पर चढ़ जाती है। वह रत्नों को उत्पन्न करने वाली होती हुई भी तरङ्ग और बुद्बुद नामक मणिदोषों के कारण विश्वसनीय नहीं है। स्वल्प स्वत्व वाले व्यक्तियों को यह उन्मत्त कर डालती है। जिसके पास सरस्वती है उस व्यक्ति को ईर्ष्यावश छूती भी नहीं। गुणगान से अशुचि वस्त्र की भाँति यह दूर भागती है। कुलीन को साँप की तरह यह लाँघ कर चली जाती है। शूर को काँटे की तरह यह बचा जाती है। दाता को दुःस्वप्न की भाँति भुला देती है। विनीत को पापी समझकर उसके पास नहीं आती। मनस्वी को पागल जानकर उसका उपहास करती है। इसने अपने विरोधी चरित्र का एक इन्द्रजाल जैसा जगत् में फैला रखा है। यह जल से उत्पन्न होकर भी तृष्णा को बढ़ाती है। यह ज्यों-ज्यों उन्नत होती है, स्वभाव में नीचता लाती है। अमृत की सहोदरा होते हुए भी इसका फल कड़वा है। यह जहाँ रहती है वहीं विग्रह उत्पन्न करती है। स्वल्प जन इसे विशेष प्रिय हैं। कैसी भी स्वच्छ हो, यह कालुष्य उत्पन्न करती ही है।

यह चंचला ज्यों-ज्यों अधिक चमकती है त्यों-त्यों दीपशिखा की भाँति इसमें से काजल-सा मलिन कर्म ही निकलता है। यह तृष्णा रूपी विषवेलि को बढ़ाने वाली जलधारा है। इन्द्रिय रूपी हिरनों को फँसाने के लिए अहेरी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गान-सी है। सच्चरित्र रूपी चित्र को छिपाने वाली धूमलेखा है। मोह की गाढ़ी निद्रा के लिए हिण्डोला है। धनमद की पिशाची के लिए घर की टूटी अटारी है, शास्त्र-चक्षु के लिए रतौंधी है, सब प्रकार के अविनय के आगे फहराने वाली झण्डी है। विषयों के मद की आपानभूमि, भ्रूविकारों के अभिनय की संगीतशाला, शिष्टाचार को दूर भगाने के लिए उत्सारण-वेत्रलता यह लक्ष्मी है। लोकापयश रूपी व्रणों को फैलाने के लिए सूखी खुजली का यह स्थान है। यह लक्ष्मी कपट नाटक की प्रस्तावना है, कामरूपी हाथी की पताका है और धर्म रूपी चन्द्रमा को ग्रसने के लिए राहुजिह्वा के समान है।

इस अपरिचिता नवेली लक्ष्मी ने जिसका कसकर आलिंगन न किया हो या जिसे ठगा न हो, ऐसा इस संसार कोई नहीं। यह चित्र में लिखी होने पर भी अपनी चञ्चलता दिखाने से नहीं चूकती। मिट्टी की पुतली रूप में होने पर भी कुछ-न-कुछ इन्द्रजाल करेगी ही। पत्थर में उत्कीर्ण होने पर भी ठगौरी किये बिना न रहेगी। यह विचार मात्र से वंचना फैलाने वाली है। यह देववश राजाओं को भी ग्रसकर दुःखी कर डालती है और वे बहुत प्रकार के अविनय के अधिष्ठान बन जाते हैं। इस प्रकार यह लक्ष्मी महान् अनर्थंकरी है। अभिषेक के समय ही यह आते ही मंगलकलशों के जल से राजा के दाक्षिण्य को धो देती है। कुशसम्मार्जनी मानो क्षमा को दूर देती है। बाणभट्ट ने इसके प्रभाव का वर्णन इस प्रकार किया है—

'तथाहि—अभिषेकसमय एव चैषां मङ्गलकलशजलैरिव प्रक्षाल्यते दाक्षिण्यम्, अग्निकार्यधूमेनेव मलिनीक्रियते हृदयम्, पुरोहितकुशाग्र-सम्मार्जनीभिरिवापनीयते क्षान्तिः, उष्णीषपट्ट-बन्धेनेवावच्छाद्यते जरागमनस्मरणम्, आतपत्रमण्डलेनेवापवार्य्यते परलोकदर्शनम्, चामरपवनैरिवापह्रियते सत्यवादिता, वेत्रदण्डैरिवोत्सार्य्यन्ते गुणाः, जयशब्दकलकलैरिव तिरस्क्रियन्ते साधुवादाः, ध्वजपट-पल्लवैरिव परामृश्यते यशः। केचित् श्रम-वश-शिथिल-शकुनिगल-पुट-चपलाभिः खद्योतोन्मेषमुहूर्त्त-मनोहराभिर्मनस्विजनगर्हिताभिः सम्पद्भिः प्रलोभ्यमानाः, धन-लव-लाभावलेपविस्मृतजन्मानोऽनेकदोषोपचितेन दुष्टासृजेव रागावेशेन बाध्यमानाः विविध-विषय-ग्रास-लालसैः पञ्चभिरप्यनेक-सहस्रसंख्यैरिवेन्द्रियैरायास्यमानाः, प्रकृतिचञ्चलतायाः लब्धप्रसरेण एकेनापि सहस्रतामिवोपगतेन मनसा आकुलीक्रियमाणा विह्वलतामुपयान्ति।'

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कादम्बरी-कथासारः

वेत्रवत्या सरिता परिगतायां विदिशाऽभिधानायां नगर्यां शूद्रको नाम राजा नवे वयसि वर्तमानोऽपि वनितासम्भोगसुखपराङ्मुखः सुहृत्परिवृतः सङ्गीतकमृगयादिव्यापारपरः महीं शासति स्म। एकदा नातिदूरोदिते भगवति सप्तसप्तावास्थानमण्डपगतं तं काचिच्चाण्डालकन्या पञ्जरस्थमेकं शुकं तस्य पुरतः निधायाऽपससार। स वैशम्पायनाख्यः शुकोऽपि विदितसकलशास्त्रार्थः नैकविधविषयविचक्षणः दक्षिणं चरणमुन्नमय्य व्यक्तायां वाचि कृतजयशब्दः राजानमुद्दिश्येमामार्यां पपाठ—

स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाऽग्नेः।
चरति विमुक्ताऽऽहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम्॥

परमं विस्मयमापन्नो राजा तं शुकमन्तःपुरे प्रवेशयामास। कृतदिवसकृत्यः सः विहिताहारं शुकं सभामध्ये आनाय्य तस्यादितः प्रभृति अखिलोदन्तं पप्रच्छ। ततश्च शुकः वैशम्पायनः मुहूर्त्तमिव ध्यात्वा सादरमब्रवीत्—देव! अस्ति मुनिजनसेविता पवित्रा विन्ध्याटवी नाम अरण्यानी। तत्र गोदावर्या परिगतं महामुनेरगस्त्यस्याश्रमपदमासीत्। तस्य नाऽतिदूरे पम्पाऽभिधानं पद्मसरः। तस्यैव पश्चिमे तीरे महाञ्जीर्णे शाल्मलीतरोरेकस्मिन् जरठकोटरे निवसतः पश्चिमे वयसि वर्तमानस्य मे पितुरहमेवैको विधिवशात्सूनुरभवम्। जायमानस्य ममाऽतिप्रबलया प्रसववेदनया जननी उपरता। मातृहीनं च मां मत्पिता मातेव विविधविधिभिरपोषयत्। दुर्दिष्टवशान्मृगयाप्रसङ्गेनागतस्य मातङ्गनामकस्य शबरसेनापतेरनुगतेन केनचिज्जरच्छवरेण तं शाल्मलीवृक्षमारुह्य शुकशावकैः सह मत्पितरं गृह्य अपगतासुरकारि अवनितले अपातयत् च। अहमपि पितुः पक्षपुटसंस्थितः तेनैव सह भूतले अवशिष्टपुण्यतया शुष्कपत्रनिचये अपतम् येन मेऽङ्गानि नाशीर्यन्त। अचिरादेव निर्गतेषु सकलशबरबलेषु पिपासाऽऽकुलतयाऽहं सलिलमन्वेषमाणः स्नानार्थमागतेन मुनिकुमारैः अनुगम्यमानेन हारीतनामकेन मुनिकुमारेण दृष्टः सानुकम्पं स्वपितुः जाबालिमहामुनेराश्रममुपनीतः। स च मुनिः मामवलोक्य 'स्वस्यैवाऽविनयस्य फलमनेनाऽनुभूयत' इत्यवोचत्। मुनिवृन्दैः पृष्टः स महामुनिः सन्ध्याकृत्यं विधाय सकलं मदुदन्तं रजन्यामेवमब्रवीत्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अवन्तिदेशे सकलभुवनललामभूतोज्जयिनी नाम नगरी। तत्र परिहृतप्रजापीडो महापराक्रमस्तारापीडो नाम राजा बभूव। तस्य साध्वी कुलाऽलङ्कारभूता विलासवती नामा महिषी, निखिलशास्त्रकलाऽवगाह-गम्भीरबुद्धिर्ब्राह्मणवंशावतंसः शुकनासाऽभिधः महामात्यश्च। निरपत्यतयाऽऽसादितविषादौ तौ राजदम्पती सन्तानार्थं शास्त्रीयं लौकिकं च कृत्यजातं सततमकुरुताम्। एवं च गच्छति काले कदाचिद्राजा निशि स्वप्ने विलासवत्या वदने सकलकलापरिपूर्णमण्डलं कलाधरं प्रविशन्तमद्राक्षीत्। महामात्येन शुकनासेनाऽपि तथैव केनचिद्दिव्याऽऽकृतिना द्विजेन स्वसहधर्मिण्या देव्या मनोरमाया उत्सङ्गे निहितं मकरन्दबिन्दुसीकरवर्षि पुण्डरीकमवालोकि। ततश्च कतिपयदिवसापगमे विलासवत्याश्चन्द्रापीडो नाम मनोरमाया वैशम्पायनाऽभिधानः सूनुरजायत। सहैव पोष्यमाणौ उत्तरोत्तरवृद्धिमापन्नौ तौ कुमारौ अन्योन्यमतीव सौहार्द्रमवापतुः। जातसंस्कारावुभौ राजनिर्मिते विद्यामन्दिरे दशवर्षं यावत् सकलशास्त्र-कलाकलापेषु च निष्णातौ।

ततश्च चन्द्रापीडः पित्रा प्रेषितमयोनिजमिन्द्रायुधनामकमश्वरत्नमारुह्य वैशम्पायनेनाऽनुगम्यमानः विद्यामन्दिरात् स्वनगरं प्रविश्य पितरौ आनन्दवर्द्धनमकारयत्। राजमाता विलासवत्या प्रेषिता पत्रलेखाभिधा राजकन्या कुलूतेश्वरदुहिता चन्द्रापीडेन मातुराज्ञया ताम्बूलवहितया स्वीकृता। कतिपयदिवसानन्तरं एकदा प्रशंसितवाग्विलासः शुकनासः चन्द्रापीडं राजार्होपदेशविशेषेण संस्कृततरं चकार। तदनु यौवराज्येऽभिषिक्तश्चन्द्रापीडः पित्रादेशेन वैशम्पायनेन पत्रलेखया च समं दिग्विजयाय प्रातिष्ठत। ततश्च हायनत्रितयेन प्राचीमवाचीं प्रतीचीमुदीचिं च दिशं विजित्य महीमण्डलं बभ्राम। एवमेव किराताना सुवर्णपुरं नाम निवासस्थानं स्वायत्तीकृत्य जग्राह। तत्र च स पर्यटनपरिश्रान्तस्य निजबलस्य विश्रामहेतोः कतिपयान् दिवसानतिष्ठत्।

एकदा चन्द्रापीड इन्द्रायुधमारुह्य मृगयाप्रसङ्गतः शैलशिखरादुत्तीर्णं किन्नरमिथुनमद्राक्षीत्। अदृष्टनरदर्शनभयात्पलायमानस्य तस्य जिघृक्षया स इन्द्रायुधं तदभिमुखं प्रेरयन्निजबलात्सुदूरमनुससार। तुरङ्गमस्य महाजवतया मुहूर्त्तमात्रेण पञ्चदशयोजनमितेऽध्वनि समतिक्रान्तेऽपि पश्यत एवाऽस्य तत्किन्नरयुगलमभिमुखापतितमचलतुङ्गशिखरमारुरोह। ततश्चानुतापतापितश्चन्द्रापीडः पिपासाऽऽकुलः सलिलमन्विष्यमाणः अतिमनोहरं अच्छोदं नाम विशालं सरो ददर्श। तत्र मज्जनादिकं विधाय स कच्चित् क्षणं विशश्राम। तत्र सः श्रवणसुभगं

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri

वीणातन्त्रीझङ्कारमिश्रमानुषं गीतशब्दमनुसरन् भगवतः शूलपाणेः सिद्धायतनमवाप। तत्र राजकुमारो गायन्तीममानुषाकारामष्टादशवर्षदेशीयमिव प्रतिपन्नपाशुपतव्रतां कन्यकां ददर्श। गानाऽवसाने तस्याः प्राप्ताऽतिथिसत्कारेण तेन स्वपरिचयं पृष्टा साऽब्रवीत्—महाभाग! दक्षप्रजापतिसुतायाः अरिष्टायाः तनयो गन्धर्वराजो हंसश्चन्द्रमयूखसम्भूतवंशप्रसूतां गौरीनाम्नीं कुमारीमुद्वहत्। तयोश्चाऽपत्यरूपेणैकैव मन्दभागिन्यहमुत्पन्ना। प्राप्तहर्षाऽतिशयाभ्यां मातापितृभ्यां मम महाश्वेतेत्यन्वर्थमभिधानमकारि। समयक्रमेण प्राप्तयौवनाऽहं जातुचिदस्मिन्कासारे स्नातुमागता। ततश्च कुतोऽप्यमानुषलोकोचितं कुसुमसौरभमजिघ्रम्। तदनुसरणक्रमेण साऽहं मज्जनार्थं समायातं सवयसाऽपरेण मुनिदारकेणाऽनुगतमतिमनोहरं मारसमाकारं मुनिकुमारं, तेन च श्रवणभारीकृतामदृष्टपूर्वां कुसुममञ्जरीं चाऽपश्यम्। अस्या एव अयमामोद इत्यवागच्छम्। ततोऽहं कोऽयं तपोधनयुवा? किं नाम्नस्तरोरियमनेनाऽवतंसीकृता कुसुममञ्जरीति तत्सहचरेण कुतुकाऽतिशयेन जिज्ञासिते सः अवोचत्—भद्रे! अस्त्यलौकिकरूपसम्पन्नो मीनकेतुसन्निभो महामुनिः श्वेतकेतुर्नाम। कमलवनेषु सततसन्निहिता विकचपुण्डरीकोपविष्टा भगवती कमलालया तमालोक्य मन्मथविकृतचित्ततया पुण्डरीकं नाम एकं कुमारं जनयामास। तं कुमारं भगवती लक्ष्मीः 'भगवन्! गृहाण तवाऽयमात्मज' इत्युक्त्वा तस्मै श्वेतकेतवे ददौ। स च तस्य बालजनोचितः सर्वाः क्रियाः सम्पाद्य पुण्डरीकसम्भवतया 'पुण्डरीक' इति नाम चक्रे। कालक्रमेणोपनीय तं गृहीतसकलविद्याकलापमकार्षीत्। प्राप्ततारुण्योऽयमेव स लक्ष्मीतनयः। नन्दनकाननदेवतयाऽस्मै सादरमुपहृता सेयं कुसुममञ्जरीति। इत्यपसृत्य स कुमारः 'कुतूहलिनि! किमनेन प्रश्नायासेन? रुचिता चेद्गृह्यतामियम्' इत्यभिधाय समुपसृत्य स्वश्रवणादुन्मुच्य तां कुसुममञ्जरीं मदीये श्रवणपुटे निदधन्मत्स्पर्शसुखेन करतलाद् गलितमप्यक्षमालां नाऽज्ञासीत्। अहमपि भूतलमसम्प्राप्तामेव तां गृहीत्वा स्वकण्ठाभरणतामनयम्। ततश्च स्वसखस्य मन्मथविकारेण जातकोपस्तत्सहचरः कपिञ्जलो नाम तापसकुमारः नानाविधवचननिचयेन तमुपादिशत्। ततश्च स्तोकमुपजातलज्जः स मामुपेत्य तामक्षमालामयाचत। अहं चात्मकण्ठादुन्मुच्य स्वकीयामेकावलीं तस्मै समर्प्य स्नातुमवातरम्। तदन्वहं जनन्या समं स्नात्वा मुहुर्मुहुस्तमेव चिन्तयन्ती स्वभवनमयासिषम्।

कियत्कालान्तरं ताम्बूलकरङ्कवाहिनी तरलिका नाम मदीया परिचारिका

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तेन मुनिकुमारेण मत्संस्तवार्थं कृतं प्रश्नादिकं समाधाय तेन मदर्थं दत्तं पत्रमादाय मह्यं समर्पितवती। ततोऽहं तत्राभिलिखितामिमामार्यामपश्यम्—

दूरं मुक्तालतया विससितया विप्रलोभ्यमानो मे।
हंस इव दर्शिताशो मानसजन्मा त्वया नीतः॥ इति।

अहं च तां दृष्ट्वा स्मरविक्रियया विह्वलताऽतिशयमभ्यगमम्। सायं तत्सहचरस्तापसकुमारो मां मुनिकुमारस्योपदेशशतेनाऽपि निवारयितुमशक्यां मदनविकारेण शोचनीयां दशां प्रत्यपीपदत्। अत्रान्तरे मदीयं स्वस्थवृत्तं ज्ञातुं समागतायां जनन्यां जनसम्मर्दभीरुः स सत्वरं मित्रत्राणार्थं मां सम्प्रार्थ्य गतः। ततश्च गतायां जनन्यां मुनिकुमारदशाश्रवणेन हर्षविषादयोरनन्तरे निमज्जन्त्यहं समुदिते यामिनीपतावुत्कलिकाकुला तरलिकाद्वितीया जवातिशयेन गच्छन्ती विलपन्तं कपिञ्जलं मुनिकुमारकं चोपरतमपश्यम्। शोकभारान्मरणोन्मुखायां मयि बाहुभ्यां मुनिकुमारं सकुत्क्षिपन् शुभलक्षणोपेतः कश्चिन्महापुरुषः 'वत्से महाश्वेते! न परित्याज्यास्त्वया प्राणाः, पुनरपि तवाऽनेन सह भविष्यति समागमः' इत्येवं मां पितेवाऽऽभिधाय गगनतलमुदपतत्। ततश्चातिशयविकलः कपिञ्जलोऽपि 'दुरात्मन्! क्व मे वयस्यमपहृत्य गच्छसी'त्युक्त्वा तमेवानुसरन्नन्तरिक्षमुदचलत्। अहं तु तद्वचनप्रत्ययेनैव तनुममुञ्चन्ती जननीजनकाभ्यामसकृदाकारिताऽपि व्रतमेतत्समवलम्ब्याऽत्रैव स्थिताऽस्मि।

निशम्यैतच्चन्द्रापीडस्तां भूयो भूयः सान्त्वयित्वा पप्रच्छ चैनां—'तव सा परिचारिका तरलिका क्व गते'ति। सा पुनरवदत्—'गन्धर्वराजचित्ररथात् दक्षप्रजापतितनयायां मदिरादेव्यां कुमारी कादम्बरी मदीयाऽभिन्नहृदया प्रियवयस्या समजायत। आकर्ण्य शोचनीयं मदुदन्तं सा सशोकायां महाश्वेतायां नाहमात्मनः पाणिं ग्राहयिष्यामीति प्रतिज्ञामधारयत्। ततश्च पाणिग्रहणार्थं तामनुनेतुं गन्धर्वराजेन कृताऽनुरोधादहमद्यैव तरलिकां कादम्बरीसविधे विसृष्टवती।

द्वितीयेऽहनि प्रातरेव तरलिकया सममागतः कादम्बर्याः वीणावाहकः केयूरनामकः परिचारकस्तस्याः पाणिपीडनेऽसम्मतिमावेदयत्। तदनन्तरं कादम्बरीप्रबोधनाय हेमकूटं गच्छन्त्या महाश्वेताया अनुरोधाच्चन्द्रापीडोऽपि तया सह हेमकूटमासाद्य गन्धर्वराजकुलमवाप्य कन्याऽन्तःपुरं लोकातिशयलावण्यां कादम्बरीमपश्यदुभयोर्मिथोऽनुरागश्च समजायत। चन्द्रापीडप्रणयपरतन्त्रा कादम्बरी दिव्यं दुकूलयुगलं शेषनामकं निजहारं च स्ववयस्यायाः मदलेखायाः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हस्तेन चन्द्रापीडाय प्रजिघाय। एवं कादम्बरीप्रणयपरवशः चन्द्रापीडो महाश्वेतायाः अनुज्ञां प्राप्य निजस्कन्धावारमासाद्य सुहृदे वैशम्पायनाय सर्वं वृत्तान्तं ज्ञापयत्। ततश्च द्वितीयेऽहनि प्रत्यूष एव समागतेन कादम्बर्य्या वैक्लव्याऽतिशयज्ञापकेन केयूरकेण पत्रलेखया च समं हेमकूटं गतश्चन्द्रापीडो हिमगृहस्थितां मदनपरवशां कादम्बरीं ददर्श। तया सह क्षणं व्यङ्ग्यार्थगर्भं ललितं संलप्य तदनुरोधात्पत्रलेखां तत्रैवावस्थाप्य स्कन्धावारं प्रत्यावृत्तः। तत्र च पितुः पत्रमवाप्य सेनापतितनयं मेघनादं केयूरकानीतया पत्रलेखया सह भवताऽऽगन्तव्यमिति निर्दिश्य सुहृदादिसाधनमक्लेशयता भवता मेघनादेन सममागन्तव्यमित्युक्त्वा वैशम्पायनं स्कन्धावारभरे नियुज्य प्रातिष्ठत। चन्द्रापीडः पथि द्रविडधार्मिकाधिष्ठितां चण्डिकां पश्यन्नुज्जयिनीमाजगाम। कतिपयदिवसानन्तरं मेघनादेन सममायाता पत्रलेखा कादम्बर्य्या विप्रलम्भाऽवस्थामुपालम्भगर्भितामुक्तिं च सविस्तरं चन्द्रापीडाय न्यवेदयत्।

इति कादम्बर्य्याः पूर्वार्द्धकथासारः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कादम्बरी-कथासार

वेत्रवती नदी के तट पर बसी विदिशा नाम की अति समृद्ध नगरी में प्राचीन काल में शूद्रक नाम से विख्यात राजा शासन करते थे। वह युवावस्था में विद्यमान होने पर भी वनितासम्भोगसुख से पराङ्मुख होकर साहित्य-संगीत-कलादि साधनों से अपना मन बहलाया करते थे। उनकी सभा में विवध कलाकारों और विद्वानों का समादर होता था। एक सूर्योदय के कुछ ही समय पश्चात् जब राजदरबार लगा था, एक चाण्डालकन्या पिञ्जरे में बन्द एक तोते को साथ लेकर राजा का दर्शन करने आयी। प्रतीहारी द्वारा उसे दरबार में उपस्थित किये जाने पर उसने पिञ्जरा राजा के सामने 'यह अद्भुत तोता रत्न रूप में उपहारस्वरूप आपको भेंट करती हूँ' कहकर राजा को प्रणाम करके दूर हट जाने पर वह तोता भी अपना दाहिना चरण ऊपर करके आशीर्वाद मुद्रा बनाते हुए व्यक्त मानुषी वाणी में जय शब्द का उच्चारण करते हुए इस आर्या छन्द का पाठ किया—

'स्तनयुगमश्रुस्नातं समीपतरवर्ति हृदयशोकाग्नेः।
चरति विमुक्ताहारं व्रतमिव भवतो रिपुस्त्रीणाम् ॥' इति।

इस आर्या को सुनकर सभी दरबारी और राजा परम विस्मय को प्राप्त हुए। तभी मध्याह्न सन्ध्या हेतु सभा-विसर्जन हो गयी। मध्याह्नकृत्य समाप्त कर भोजनादि से निवृत्त हो शुक के भी आहारादि से निवृत्त हो जाने पर पुनः दरबार लगने पर राजा ने शुक को दरबार में उपस्थित किये जाने का आदेश दिया। दरबार में शुक के उपस्थित किये जाने पर राजा ने उससे उसका पूर्ववृत्त प्रारम्भ से जानने की इच्छा व्यक्त की। शुक थोड़ी देर तक स्मरण करता हुआ सविनय कहना प्रारम्भ किया—

'महाराज! मुनिजनों द्वारा सेवित विन्ध्याटवी नाम की एक अरण्यानी पवित्र स्थली है। वहाँ गोदावरी नदी के किनारे ही महर्षि अगस्त्य का पवित्र आश्रम है। उससे थोड़ी दूर पवित्र जल वाला पम्पा नाम से विख्यात पवित्र सरोवर है। उसके पश्चिमी तट पर उपवन में एक विशाल एवं प्राचीन शाल्मली का वृक्ष है। उस शाल्मली वृक्ष के एक पुराने कोटर में वृद्धावस्था को प्राप्त मेरे

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पिता को वृद्धावस्था में पुत्र रूप में प्राप्त हुआ। मेरे जन्म के समय अति प्रसव-वेदना के कारण मेरी माँ का देहान्त हो गया। मातृहीन मुझको मेरे पिता ने माता और पिता दोनों का स्नेह देते हुए अनेक प्रकार से पालन-पोषण किया। दुर्भाग्यवश एक दिन सवेरे ही उस महावन में शबरों का एक दल आखेट करने आ धमका। उस महावन का शान्त वातावरण महान् कोलाहल से गूँज उठा। उन्हीं में से एक वृद्ध शबर पेड़ के ऊपर चढ़ गया और अन्य शुक-शावकों के साथ मेरे पिता को भी पंखविहीन कर पृथ्वी पर गिरा दिया। भयवश मैं भी पिता के पंखपुट में चिपटा हुआ उनके साथ ही भूमि पर आ गिरा। परन्तु भाग्य ने मेरा जीवन बचाया और मैं पत्तों के ढेर के ऊपर गिरने से बच गया। मेरे पिता भी मर चुके थे। प्राणरक्षार्थ मैंने उन्हीं पत्तों की शरण ली। शबरसेना के वापस चले जानेपर जब मैं बाहर निकला तो प्यास से बेचैन हो इधर-उधर जल की तलाश में सहमा-सहमा-सा भ्रमण कर ही रहा था कि तभी स्नान करने के लिए मुनिकुमारों के साथ आये हुए हारीत नामक मुनिकुमार ने मुझे देखा। दयावश अपने कमण्डलु के जल से मेरी प्यास बुझाया और स्नेहवश मुझे अपने साथ ही जाबालि मुनि के आश्रम पर ले आया। कुलपति जाबालि ने मुझे देखकर कुछ क्षणों तक ध्यान करके मेरी ओर देखते हुए कहा—यह अपने ही अविनय का फल भोग रहा है। यह सुन समस्त मुनिमण्डली को बड़ा आश्चर्य हुआ तथा सबने मेरा पूर्व वृत्त जानने की इच्छा व्यक्त की। तब सायं सन्ध्या समाप्त कर रात्रि की विश्राम बेला में जाबालि मुनि ने समस्त मुनिकुमारों एवं मुनिजनों की जिज्ञासा को शान्त करने हेतु मेरा पूर्व वृत्त इस प्रकार कहना प्रारम्भ किया—

'अवन्ति देश में त्रिभुवनललामभूता उज्जयिनी नाम की एक नगरी है। वहाँ प्रजा की पीड़ा का हरण करने वाला तारापीड नाम का राजा शासन करता था। उसकी पतिव्रताओं में अलंकारभूता विलासवती नाम की पट्टरानी थी। सर्वशास्त्रकलाविद् गम्भीर बुद्धि ब्राह्मणकुलावतंस शुकनास नाम का महामात्य था। अनपत्यता दुःख से तप्त राजा और रानी सतत सन्तान-प्राप्ति हेतु शास्त्रीय और लौकिक कृत्यों का सम्पादन करने में तत्पर रहते थे। समय इसी प्रकार बीतता रहा। एक दिन राजा ने स्वप्न देखा कि पूर्ण चन्द्रमा का मण्डल विलासवती के मुख में प्रवेश कर रहा है। दूसरे दिन राजा ने यह स्वप्न शुकनास को सुनाया। शुकनास ने कहा—महाराज ! यह शुभ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

स्वप्न है। शीघ्र ही आपके मनोरथ पूर्ण होंगें। मैंने भी आज स्वप्न में दिव्य आकृति वाले किसी ब्राह्मण को अपनी ब्राह्मणी मनोरमा की गोद में मकरन्द-कणों की वर्षा करने वाले कमलफूल को डालते हुए देखा। निश्चय ही दोनों कुलों की एक साथ अभिवृद्धि होने वाली है।

कुछ दिन पश्चात् विलासवती से राजा तारापीड को चन्द्रसदृश चन्द्रापीड और शुकनास को मनोरमा से वैशम्पायन नामक अतिसुन्दर पुत्र प्राप्त हुआ। उत्तरोत्तर वुद्धि वृद्धि को प्राप्त करते हुए राजपुत्र और महामात्यपुत्र दोनों आपस में गाढ मित्र बन गये। उपनयनादि संस्कार हो जाने के पश्चात् दोनों मित्र साथ ही राज-विद्यामन्दिर में आचार्यों के सान्निध्य में दश वर्षों तक समस्त शास्त्रों एवं कलाओं की शिक्षा ग्रहण किये। शिक्षा-समाप्ति के उपरान्त राजा द्वारा भेजे गये अयोनिज अश्व इन्द्रायुध पर सवार होकर वैशम्पायन के साथ सैनिकों व परिजनों के साथ महल में प्रवेश कर माता और पिता को पुत्रसुख प्रदान किया। कुछ क्षण के अनन्तर ही राजमाता द्वारा भेजी गई कुलूतेश्वर की पुत्री पत्रलेखा राजकुमार की सेवा के लिए परिचारिका के साथ उपस्थित हुई और चन्द्रापीड ने उसे ताम्बूलकरङ्कवाहिनी रूप में स्वीकार कर लिया। धीरे-धीरे दोनों में अन्तरङ्ग सख्य उत्पन्न हो गया।

कुछ दिनों उपरान्त जब यौवराज्याभिषेक का अवसर आया तो महामात्य शुकनास ने चन्द्रापीड को लक्ष्मी के दोषों और अन्य दोषों से सचेत रहने का उपदेश किया। इसके युवराज पद पर अभिषिक्त चन्द्रापीड पिता के आदेश से वैशम्पायन और पत्रलेखा के साथ सेना लेकर दिग्विजय को प्रस्थान किया। तीन वर्षों में ही उसने पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण चारों दिशाओं को जीत कर सम्पूर्ण पृथ्वीमण्डल का भ्रमण किया। तत्पश्चात् वह किरातों के निवास-स्थान सुवर्णपुर को अपने अधीन कर ग्रहण किया। वहाँ थकी हुई अपनी सेना को विश्राम देने हेतु कुछ दिनों के लिए रुक गया।

एक दिन चन्द्रापीड इन्द्रायुध पर सवार हो अकेले ही आखेट को निकल गया। उसने शैलशिखर से उतरते हुए किन्नरमिथुन को देखा। किन्नर-मिथुन भी पहले मानव-प्राणी न देखने के कारण भयभीत हो भाग चले। चन्द्रापीड उनको पकड़ने के लिए इन्द्रायुध को उनकी ओर दौड़ाता हुआ अपने स्कन्धावार से बहुत दूर निकल गया। तेज घोड़ा दौड़ाते हुए पन्द्रह योजन मार्ग पार करने के पश्चात् वह किन्नरमिथुन आंखों से ओझल हो गया।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

किन्नरमिथुन के हाथ से निकल जाने से खिन्न चन्द्रापीड प्यास से व्याकुल जल की तलाश करते हुए अति मनोहर अच्छोद नामक सरोवर पर पहुँचा। वहाँ मज्जनादि करके कुछ क्षण विश्राम किया। अनन्तर दूर कहीं किनारे से कानों को सुख देने वाली वीणा के तारों की झंकारों पर थिरकती संगीत की लहरी सुनायी दी। उसका अनुसरण करते हुए वह भगवान् शिव के सिद्धायतन पर पहुँचा। वहाँ राजकुमार ने गाती हुई अष्टादशवर्षीया पाशुपत व्रत धारण किये कन्या को देखा। गाना समाप्त होने के पश्चात् वह उसके समीप पहुँचा और आतिथ्य ग्रहण करने के पश्चात् उसका परिचय व वृत्तान्त जानने की जिज्ञासा की। उस सुन्दरी ने अपना परिचय इस प्रकार देना प्रारम्भ किया—

'महाभाग ! दक्ष प्रजापति की पुत्री अरिष्टा के पुत्र गन्धर्वराज हंस ने गौरी नाम की कुमारी कन्या को विवाह कर लाया। उन दोनों को सन्तान रूप में मैं ही एक मात्र सन्तान प्राप्त हुई। अति प्रसन्न होकर माता-पिता ने मेरा नाम महाश्वेता रखा। लाड़-प्यार में पलती हुई एक दिन युवावस्था प्राप्त होने पर माता के साथ ही सरोवर में स्नान करने आयी। वहाँ मैंने कहीं से आती हुई अमानवीय लोक के पुष्प की सुगन्ध को सूँघा। उस गन्ध का अनुसरण करते हुए आगे चलकर मैंने स्थान करने आये समान वय वाले मुनिकुमार से अनुगत कामदेव के तुल्य अति मनोहर मुनिकुमार को देखा जिसने अपने कानों में अदृष्टपूर्व कुसुममञ्जरी धारण कर रखा था। मैंने जान लिया कि यह सुगन्ध इसी कुसुममञ्जरी से आ रही थी। यह तपस्वी युवक कौन हो सकता है ? यह फूल किस वृक्ष का है ? इस प्रकार के कुतूहल को शान्त करने की इच्छा से उसके साथी युवक से जिज्ञासा की। वह थोड़ा हँसता हुआ बोला—

भद्रे ! अलौकिक रूपसम्पन्न साक्षात् कामदेव के सदृश श्वेतकेतु नाम के महामुनि हैं। कमलवनों में सदा निवास करने वाली कमलासना भगवती लक्ष्मी ने उन महामुनि को देखकर कामविकार चित्त से पुण्डरीक नामक एक पुत्र को जन्म दिया। उस पुत्र को लक्ष्मी ने महर्षि श्वेतकेतु को 'यह आपका पुत्र है, इसे ग्रहण कीजिए' ऐसा कहकर समर्पित कर दिया। उन्होंने उसके सभी बालजनोचित संस्कार सम्पन्न कर कमल से जन्म होने के कारण उसका नाम पुण्डरीक रखा। कालक्रम से उसका उपनयन संस्कार कर समस्त विद्याओं

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

एवं कलापों का वेत्ता बना दिया। युवावस्था को प्राप्त यह वही लक्ष्मीपुत्र पुण्डरीक है। नन्दन-कानन की वनदेवता के द्वारा सादर यह कुसुममञ्जरी इसे प्रदान की गयी है। कुसुममञ्जरी के विषय में मेरी जिज्ञासा जानकर वह युवक 'भद्रे ! इस प्रश्नायास से क्या लाभ ? अगर यह तुम्हें अच्छी लगती हो तो ग्रहण करो' ऐसा कहते हुए पास आकर कानों से उतारकर उस कुसुम-मञ्जरी को मेरे कानों में लगा दिया। ऐसा करते समय उसके हाथों से रुद्राक्ष की माला गिर पड़ी जिसे वह मेरे स्पर्शसुख में भूला हुआ न जान सका। मैंने भी उसे भूतल में गिरने से पहले ही उठाकर अपने गले में धारण कर लिया। तत्पश्चात् अपने मित्र के मन्मथ-विकार से क्रुद्ध हुआ उसका सहचर कपिञ्जल नामक वह तापसकुमार नानाविध वचनों से उसको उपदेश किया। तदनन्तर वह कुछ सलज्ज होकर मेरे पास आकर उस अक्षमाला को वापस करने की याचना की। मैं भी अपने कण्ठ से एकावली उतारकर उसे समर्पण कर स्नान करने को जल में उतर गई और स्नान कर अपनी माँ के साथ बार-वार उसी युवक का चिन्तन करती हुई अपने घर चली गयी। कुछ काल बाद मेरी ताम्बूलवाहिनी दासी तरलिका ने उस मुनिकुमार द्वारा मेरे संस्तव हेतु प्रेषित एक पत्र लाकर मुझे दिया, जिसमें यह आर्या लिखी हुई थी—

'दूरं मुक्तालतया बिससितया प्रलोभ्यामनो मे ।
हंस इव दर्शिताशो मानसजन्मा त्वया नीतः ।।' इति ।

मैं उस आर्या को पढ़कर कामजनित विकार से और भी व्याकुल हो उठी। सायंकाल को उस मुनिकुमार के सहचर द्वारा सैकड़ों उपदेशों द्वारा समझाने पर भी अनिवार्य मदनविकार से शोचनीय दशा को प्राप्त हुई। इसी बीच मेरी माता को मेरा समाचार जानने आया जानकर कपिञ्जल अपने मित्र की रक्षार्थ मुझसे प्रार्थना कर चला गया। माँ के चले जाने पर रात्रिवेला में तरलिका के साथ जब मैं सरोवर पर पहुँची तब तक पुण्डरीक की मृत्यु हो चुकी थी और कपिञ्जल वहाँ बैठा रो रहा था। उसके शोक में मैंने भी मरने का निश्चय किया तो एक दिव्य महापुरुष ने इसी शरीर में पुनः मिलन की बात कहकर मुझे मरने से रोक दिया। तभी से मैं उसकी प्रतीक्षा में यहाँ बैठी हूँ। माता-पिता के द्वारा बुलाने पर घर वापस नहीं जाती। अपनी दासी तरलिका के बारे में चन्द्रापीड को महाश्वेता ने बताया कि गन्धर्वराज चित्ररथ देव की दक्षकन्या मदिरा से उत्पन्न कादम्बरी मेरी प्रिय सहेली है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

उसने मेरी दशा सुनकर आजीवन कुमारी रहने का निश्चय कर रखा है। मैंने उसे समझाने-बुझाने हेतु तरलिका को भेजा है।

दूसरे दिन कादम्बरी के वीणावाहक केयूरक के साथ आयी तरलिका से कादम्बरी के हठ को जानकर चन्द्रापीड को अपने साथ लेकर महाश्वेता स्वयं उसे समझाने गयी। वहाँ कादम्बरी और चन्द्रापीड प्रथम दर्शन में ही एक दूसरे के प्रति आसक्त हो गये। दो-तीन दिन वहीं अतिथि रूप में बिताकर चन्द्रापीड अपने स्कन्धावार लौट आया। उसके अगले ही दिन केयूरक आकर चन्द्रापीड को कादम्बरी की विकलता का समाचार सुनाया, जिसे सुनकर वह पत्रलेखा के साथ वहाँ गया तथा पत्रलेखा को कुछ दिन के लिए वहीं छोड़कर स्कन्धावार लौट आया। यहाँ उसे पिता का सन्देश मिला और वह सेनापतिपुत्र मेघनाद को पत्रलेखा को साथ लेकर पीछे से आने का आदेश देकर राजधानी लौट आया। कुछ दिनों पश्चात् पत्रलेखा भी लौट आयी और कादम्बरी की विरह-अवस्था का वर्णन किया।

इति कादम्बर्य्याः पूर्वार्द्धकथासारः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रमुख पद्यखण्ड-व्याख्या

(१) रजोजुषे जन्मनि सत्त्ववृत्तये स्थितौ प्रजानां प्रलये तमःस्पृशे ।
अजाय सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने नमः ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—कविकुलललाभूत महाकवि बाणभट्ट अपने गद्यकाव्य ग्रन्थ कादम्बरी की निर्विघ्न परिसमाप्ति हेतु अपने इष्ट देवों के पूजा क्रम में सर्वसत्ता शक्तिमान् परमेश्वर की प्रार्थना सबसे प्रथम करते हुए कहते हैं—

अन्वयः—प्रजानां जन्मनि रजोजुषे स्थितौ सत्त्ववृत्तये प्रलये तमःस्पृशे (अत एव) सर्गस्थितिनाशहेतवे त्रयीमयाय त्रिगुणात्मने अजाय नमः ।

व्याख्या (संस्कृत)—प्रजानां = सांसारिकाणां जीवानां पदार्थानां वा, जन्मनि = प्रादुर्भावकाले, रजोजुषे=रजोगुणालम्बिने हिरण्यगर्भाय विरञ्चिरूपिणे; स्थितौ = प्रजानां परिपालनसमये, सत्त्ववृत्तये = सत्त्वगुणयुक्ताय विष्णुरूपिणे; तथा प्रलये = प्रजानां संहारसमये, तमःस्पृशे = तमोगुणयुक्ताय रुद्ररूपिणे, सर्गः = सृष्टिः, स्थितिः = पालनं, नाशः = संहारः, तेषां हेतवे = निमित्तकारणाय, त्रयीमयाय = ब्रह्मविष्णुशिवस्वरूपाय, त्रिगुणात्मने — त्रिगुणं = माया; आत्मनि = स्वस्मिन्, यस्य तस्य=मायावते, अजाय = जन्मादिषड्विकाररहिताय नित्याय कूटस्थाय परब्रह्मणे, नमः = नमस्कारः (अस्तु इति शेषः) ।

व्याख्या (हिन्दी)—संसार के समस्त पदार्थों के सृष्टिकाल में रजोगुणालम्बि ब्रह्मस्वरूप वाले, स्थितिकाल में सत्त्वगुणविशिष्ट विष्णु रूप वाले; संहार काल में तमोगुणविशिष्ट महेश्वर रूप वाले; जन्म, स्थिति और विनाश के निमित्तकारणरूप ब्रह्मा-विष्णु-शिव तीन रूपों वाले, त्रिगुणात्मा, अजरूप परमेश्वर को मेरा नमस्कार है ।

विशेष—ईश्वर के एक रूप के अनेकत्व का प्रतिभास मात्र यहाँ कराते हुए महाकवि ने निमित्त भेद से स्वरूपभेदत्व दर्शाते हुए भी उसे अजन्मा, अविकारी और एक ही सिद्ध किया है । यथा—'अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां बह्वी प्रजाः सृजमानां सरूपाम्' इस शास्त्रोक्ति से सिद्ध होता है । यहाँ पर वंशस्थ वृत्त है—'जतौ जरौ तु वंशस्थमुदाहृतम्' । यथासंख्य अलंकार है ।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(२) जयन्ति बाणासुरमौलिलालिता दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः ।
सुरासुराधीशशिखान्तशायिनो भवच्छिदस्त्र्यम्बकपादपांसवः ।।

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—महाकवि बाणभट्ट 'ज्ञानमिच्छेत्तु शंकरात्' इस उक्ति को प्रमाण मानकर पृथक् से काव्यविधानोपयोगि ज्ञानप्राप्ति हेतु शिव की चरण-धूलि का उत्कर्ष दिखाते हुए कहते हैं—

अन्वयः—बाणाऽसुरमौलिलालिताः दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः सुराऽसुराधीशशिखान्तशायिनः भवच्छिदाः त्र्यम्बकपादपांसवः जयन्ति ।

व्याख्या (संस्कृत)—त्रयम्बकस्य ये पादपांसवः = चरणधूलयः, बाणासुरमौलिलालिताः—बाणासुरस्य=एतदाख्य-असुराधिपस्य परमशिवभक्तस्य, मौलिना = मुकुटेन मस्तकेन वा, लालिताः=प्रणामकाले आदरेण स्वीकृताः प्रसादरूपेण, दशास्यचूडामणिचक्रचुम्बिनः—दशास्यः = रावणः, तस्य चूडामणयः = किरीट-रत्नानि, तेषां चक्रम् = व्यूहम्, चुम्बन्ति = प्रणामकाले स्पृशन्ति, ये तथोक्ताः, सुरासुराधीशशिखान्तशायिनः—सुष्ठु परब्रह्मणि रमन्ते ये ते सुराः = देवाः, तद्भिन्नाः असुराः = दैत्याः, तेषामधीशाः = स्वामिनः, तेषां शिखाः = चूडाः, तासाम् अन्तेषु = अग्रभागेषु, शयितुं = नमनकाले स्थातुं, शीलं येषां ते तथोक्ताः, तथा भवच्छिदः = संसारनिवर्त्तकाः—मोक्षोपयोगितत्त्वज्ञानोत्पादनद्वारा सांसारिकदुःखविच्छेदिनः, ते तथोक्ताः पादपांसवः, जयन्ति = सर्वोत्कृष्टत्वेन वर्तन्त इत्यर्थः ।

व्याख्या (हिन्दी)—बाणासुर के मुकुट से उपसेवित, लंकापति रावण के मस्तकों के मणि-समूह का स्पर्श करने वाली, दैत्यों और देवताओं के स्वामियों के शिरों के समीप रहने वाली, संसार के त्रिविध ताप को दूर करने वाली भगवान् शिव के चरणों की धूलियाँ अत्यन्त उत्कर्षाधायक होने के कारण वन्दनीय हैं ।

विशेष—त्र्यम्बक शब्द की व्युत्पत्ति हलायुध कोश में त्रीणि 'अम्बकानि नेत्राणि यस्य स तथोक्तः शिवः' 'अम्बकं नयनं दृष्टिः' (इति हलायुधः) रूप में की गयी है । इसकी अन्य व्युत्पत्तियां इस प्रकार हैं—

१—त्रयाणां लोकानां अम्बकः पिता इति त्रयम्बकः शिवः ।

२—त्रीन् वेदान् अम्बते शब्दायते 'अवि शब्दे' इत्यस्मात् 'कर्मण्यणि संज्ञायाम्' इत्यनेन के कनि वा सः शिवः ।

यहाँ पर 'जय' शब्द उत्कर्ष-प्राप्ति एवं उत्कर्ष-प्रतिपादन से नमस्कार

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

व्यञ्जना द्वारा प्राप्त होता है। जैसे कि—उत्कर्ष विशेषानुपादान होने से सर्व-प्रतियोगि सिद्ध होता है। इस प्रकार त्र्यम्बक के सर्वोत्कृष्टत्व ज्ञान में तुला-वित्तिवेद्यत्व न्याय से अथवा प्रकारान्तर से त्र्यम्बक की अपेक्षा सभी पदार्थों की अपकृष्टता बोध में सर्वान्तःपाति अपने में भी आराध्य की अपेक्षा अपकृष्ट का ज्ञान होता है। 'अपकृष्टत्वज्ञानबोधानुकूलो व्यापारः स्वरादिपठितनमः-शब्दार्थं इति' मञ्जूषाकार के वचनानुसार यहाँ नमस्कार स्फुट ही है। यहाँ उत्कर्षकथन कार्यं प्रति वाणासुरमौलिलालितादि चार प्रकार के एक कार्य-सम्पादन में हेतु-कथन से समुच्चय अलंकार तथा अनेक 'ल' 'च' 'श' वर्णों के स्वरूपतः क्रमतः साम्य से वृत्त्यनुप्रास है।

(३) अकारणाविष्कृतवैरदारुणादसज्जनात् कस्य भयं न जायते।
विषं महाहेरिव यस्य दुर्वचः सुदुःसहं सन्निहितं सदा मुखे ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—कादम्बरी के प्रारम्भ में मंगलपाठानन्तर बाणभट्ट असज्जनों की निन्दापूर्वक उनकी प्रवृत्ति से सावधान कराते हुए 'दुर्जनं प्रथमं वन्दे सज्जनं तदनन्तरम्' की नीति का पालन करते हैं। यथा—

अन्वयः—अकारणाऽऽविष्कृतवैरदारुणात् असज्जनात् कस्य भयं न जायते। महाहेः मुखे सुदुःसहं विषम् इव यस्य (मुखे सुदुःसहं) वचः सदा सन्निहितम् (भवतीति शेषः)।

व्याख्या(संस्कृत)—अकारणम् = अनिमित्तमेव, आविष्कृतम् = उद्भावितम्, यद्वैरम् = निन्दादिना विरोधः, तेन दारुणात् = भीषणस्वभावात्, असज्जनात् = दुष्टपुरुषात्, कस्य = सज्जनपुरुषस्य, भयं = त्रासः, न जायते = नोत्पद्यते अपितु सर्वस्योत्पद्यते। महाहेः=महासर्पस्य, विषम् = गरलम्, इव यस्य = दुर्जनस्य, मुखे = वदने, सुदुःसहं = अतीवोद्वेगजनकत्वेनासहनीयम्, दुर्वचः = कटुवाक्यम्, सदा = निरन्तरम्, सन्निहितम् = समीपस्थम्, विद्यते। एवञ्च करिष्यमाणकाव्येऽस्मिन् कदाचित्कोऽपि कट्वालोचकः दुर्जनः मह्यं द्रुह्येत तस्मान्मे भयं भवतीत्याशयः।

व्याख्या (हिन्दी)—बिना कारण ही विरोध प्रगट करने वाले दुष्ट प्रकृति के निन्दकों से भला कौन सज्जन पुरुष भयभीत नहीं होगा? क्योंकि इनके मुख में महासर्प के विष के समान सदा कटुवचन सन्निहित रहते हैं।

विशेष—बाणभट्ट का आशय है कि यद्यपि कादम्बरी काव्य की रचना में पूर्ण सावधानी रखी जा रही है फिर भी परछिद्रान्वेषी समालोचकों का भय

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लगा ही हुआ है। वे कोई-न-कोई दोष ढूंढ ही लेंगे। इसमें पूर्वार्द्ध में अर्थापत्ति और उत्तरार्द्ध में उपमा अलंकार है। जैसा कि दर्पणकार ने कहा है—'दण्डापूपिकयाऽन्यार्थागमोऽर्थापत्तिरिष्यते।'

तथा च—'साम्यं वाच्यमवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमा द्वयोः।'

इसी प्रकार दोनों का अन्योन्य मिथानपेक्ष होने से संसृष्टि अलंकार है। छन्द वंशस्थ है।

(४) कटु क्वणन्तो मलदायकाः खलास्तुदन्त्यलं बन्धनशृङ्खला इव।
मनस्तु साधुध्वनिभिः पदे पदे हरन्ति सन्तो मणिनूपुरा इव॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—इस छन्द में महाकवि बाणभट्ट प्रथम दुर्जन की कटु वाणी की निन्दा के पश्चात् सन्तजन की साधु वाणी की प्रशंसा प्रस्तुत करते हुए कहते हैं—

अन्वयः—कटु क्वणन्तः मलदायकाः खलाः (कटु क्वणन्तः) बन्धनशृङ्खला इव अलं तुदन्ति। सन्तस्तु मणिनूपुरा इव साधुध्वनिभिः पदे पदे मनो हरन्ति।

व्याख्या (संस्कृत)—कटु = दुःश्रवं, यथा स्यात्तथा क्वणन्तः = रटन्तः कुत्सितं शब्दायमानाश्च, मलदायकाः = मिथ्याकलङ्काविष्कारिणः स्वसंसक्तदेशे मलोत्पादकाश्च, खलाः = दुर्जनाः, बन्धनशृङ्खला इव = मनुष्यादेर्बन्धनलोहनिगडा इव (शृङ्खला पुंस्कटीवस्यबन्धेन च निगडे त्रिषु' इति मेदिनी), अलम् = अत्यर्थं, तुदन्ति = चित्तं बन्धनदेशश्च पीडयन्ति। तु = किन्तु, सन्तः = सत्पुरुषाः, मणिनूपुराः इव = तत्खचितमञ्जीराणीव, पदे पदे = शब्दे शब्दे, सर्वत्रैवेत्यर्थः, प्रतिपदक्षेपं च, साधुध्वनिभिः = सन्तोषप्रदायिवचनैः मनोहारिशब्दैश्च, मनः = चित्तम्, हरन्ति = आकर्षन्ति।

व्याख्या (हिन्दी)—कठोर शब्दों में खनकती हुई, संलग्न अङ्गों में वेदना के साथ ही काला चिह्न बना देने वाली तथा उन्हें घावों से भर देने वाली लोहे की बेड़ियों के समान कटुभाषी तथा व्यर्थ ही कलंकित करने वाले दुष्ट भी हृदय को अपने वचन-वज्र से घावों से भर देते हैं। इसके विपरीत सज्जन पुरुष पद-पद पर मणिनूपुरखचित मञ्जीरादि की मधुर ध्वनि सदृश अपनी मधुर वाणी से लोगों का चित्त आकृष्ट कर लेते हैं।

विशेष—यहाँ पूर्वार्द्ध में दुर्जनों की निन्दा और उत्तरार्द्ध में सज्जनों की प्रशंसा की गयी है। तात्पर्य यह है कि कवि को 'सहृदयमनःप्रीतये' की अपेक्षा

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होती है न कि दुर्जनों की निन्दा की। यहाँ पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में पूर्णोपमा अलंकार है।

(५) सुभाषितं हारि विशत्यधो गलान्न दुर्जनस्यार्करिपोरिवामृतम्।
तदेव धत्ते हृदयेन सज्जनो हरिर्महारत्नमिवातिनिर्मलम्॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—यहाँ पर महाकवि बाणभट्ट सुभाषित का दुर्जन और सज्जन व्यक्ति के हृदय पर पड़ने वाले प्रभाव का निरूपण करते हुए कहते हैं—

अन्वयः—सुभाषितं हारि (अपि) दुर्जनस्य गलात् अर्करिपोः (गलात्) अमृतम् इव अधः न विशति। तत् एव सज्जनः हरिः अतिनिर्मलम् महारत्नम् इव हृदयेन धत्ते।

व्याख्या (संस्कृत)—सुभाषितम्—सुष्ठु भाषितम् = प्रशस्तसन्दर्भसुकाव्यानि (कर्त्तृ), हारि = मनोहरम्, अपि, दुर्जनस्य = असज्जनस्य, गलात् = कण्ठात्, अर्करिपोः = राहोः, गलात् = कण्ठात्, पीयमानं अमृतम् = पीयूषम्, इव, अधः न विशति = प्रवेशं न प्राप्नोति। यथा राहोः गलादधःस्थानाभावेन पीयमानस्यापि चन्द्रस्यामृतं न क्वचित्तिष्ठति तथा दुर्जनस्यापि हृदयशून्यत्वेन परिश्रमेण पाठ्यमानः सुकाव्यादि बोधयोग्यं न भवति इति स्पष्टार्थः। किन्तु तदेव सज्जनः = सहृदयः गुणग्राहकः पुरुषः, हरिः = विष्णुः, अतिनिर्मलम् = अतिस्वच्छम्, महारत्नम् = कौस्तुभमणिमिव (तदेव हारि सुभाषितम्), हृदयेन = चेतसा, धत्ते = गृह्णाति, स हृदयगतत्वान्न तत् कदाचिदपि विस्मरतीत्याशयः।

व्याख्या (हिन्दी)—जैसे राहु के गले से नीचे अमृत नहीं उतर पाया, वैसे ही निर्मल मनोहारी सुभाषित सूक्तियाँ (उपदेशादि) भी दुष्टों के गले से नीचे नहीं उतर पातीं। परन्तु उसी सुभाषित को सज्जन पुरुष जिस प्रकार भगवान् विष्णु सदा अपने हृदय पर कौस्तुभमणि को धारण किये रहते हैं, उसी प्रकार अपने हृदय में धारण कर लेते हैं।

विशेष—आशय यह कि सत्काव्य का प्रभाव सहृदय सज्जनों के हृदय पर ही पड़ता है, हृदयहीन अरसिक दुष्ट कटुवालोचक पर नहीं। यहाँ सज्जन की उपमा विष्णु से और दुर्जन की उपमा राहु से दी गयी है। महाकवि बाणभट्ट का अभिप्राय है कि दुष्ट व्यक्ति भले ही अज्ञान के कारण मेरे इस काव्य को त्याग दें परन्तु सज्जन सहृदय आमूल इस ज्ञायमान रसपूर्ण काव्य

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

का रसास्वादन कर सत्कार करेंगे। यहाँ भी पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध का परस्पर निरपेक्ष होने से पूर्णोपमा अलंकार है।

(६) स्फुरत्कलालाप-विलासकोमला करोति रागं हृदि कौतुकाधिकम्।
रसेन शय्या स्वयमभ्युपागता कथा जनस्याभिनवा वधूरिव॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—महाकवि बाणभट्ट कादम्बरी कथा के प्रारम्भ में कथा-काव्य की अन्य काव्यभेदों की अपेक्षा अधिक रसज्ञता सिद्ध करने की इच्छा से कथा-प्रशंसा प्रस्तुत करते हैं—

अन्वयः—स्फुरत्कलालापविलापकोमला शय्यां स्वयम् अभ्युपागता अभिनवा वधूः इव कथारसेन जनस्य हृदि कौतुकाधिकं रागं करोति।

व्याख्या (संस्कृत)—स्फुरन्तः = प्रकाश्यमानाः, स्फुटं प्रतीयमानाः, ये कलालापाः = गीतवाद्यादिचतुःषष्टिविद्यासम्बन्धिवचनानि, तेषां विलासेन = विन्यासेन, प्रयोगपाटवेन, कोमला = मृद्वी, संग्रामवर्णनादिवदौद्धत्यरहितेत्यर्थः, वधूपक्षे तु—स्फुरन्तौ = द्योतयन्तौ, कलालापविलासौ = मधुरवचनव्यापारौ, ताभ्यां कोमला = हृदयाकर्षिणी ('कोमलं मृदु सुन्दरे' इति विश्वः), तथा रसेन = शृङ्गारादिना, शय्यां = शब्दगुम्फं, स्वप्राकरणिकत्वेनावान्तरप्रबन्धानां सम्बन्धमिति तात्पर्यम्, स्वयं = आत्मना, अभ्युपागता = सान्निध्यं प्राप्ता, वधूपक्षे तु—रसेन = आश्लेषप्रेम्णा, स्वयं = आत्मनैव, शय्यां = तल्पं शयनीयम्, अभ्युपागता = प्राप्ता, अभिनवा = नवीना, कथा = गद्यपद्यमयप्रबन्धः, अभिनवा वधूः = युवतिर्भार्येव, जनस्य = सहृदयस्य पुंसः, हृदि = चेतसि, कौतुकं = कुतूहलम्, अधिकं = बहुलं, रागं = श्रवणस्य आश्लेषस्य च प्रीतिं, करोति = जनयति।

व्याख्या—(हिन्दी) जैसे उत्साहपूर्ण मधुर वचनों तथा भावभंगियों से रमणीय नवोढा अपने आप शय्या पर आकर मधुर रस से नायक के हृदय में उत्कट रति-भावना जगा देती है उसी प्रकार फड़कते हुए कथोपकथनों की वक्रता से अत्यन्त रमणीय शब्दों की लड़ियों में उतरी हुई नवीन कथा भी अपने रस की मधुरता से लोगों के हृदयों में उत्सुकतापूर्ण आसक्ति उत्पन्न कर देती है।

विशेष—कवि का अभिप्राय है कि मेरे द्वारा रचित यह कादम्बरी कथा सर्वथा सहृदय-हृदयाकर्षण में समर्थ है। यद्यपि यहाँ 'रस' शब्द का साक्षात्

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रयोग होने से 'रसस्योक्तिः स्वशब्देनेत्यादि' दर्पणोक्त वचन के अनुसार रसदोष की प्रतीति होती है तथापि जहाँ स्वरूप से अनुभूयमान रस की ही तद्-तद् शब्दों द्वारा प्रतिपादन करने से रसदोष होता है, व्यञ्जना द्वारा लभ्य रस में नहीं, अतः यहाँ रसदोष की कल्पना नहीं की जा सकती। यहाँ साधारण-धर्मादि सद्भाव के कारण पूर्णोपमा अलंकार है।

(७) हरन्ति कं नोज्ज्वलदीपकोपमैर्नवैः पदार्थैरुपपादिताः कथाः।
निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयो महास्रजश्चम्पककुड्मलैरिव ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—महाकवि बाणभट्ट कथाकाव्य की प्रशंसा के क्रम में कथा-रचना शिल्प की उत्तमता पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं—

अन्वयः—उज्ज्वलदीपकोपमैः नवैः चम्पककुड्मलैः निरन्तरश्लेषघनाः सुजातयः महास्रजः इव उज्ज्वलदीपकोपमैः नवैः पदार्थैः उपपादिताः निरन्तर-श्लेषघनाः सुजातयः कथाः कं न हरन्ति?

व्याख्या (संस्कृत)—उज्ज्वलाः = प्रकटाः, दीपकाऽलङ्कारविशेषाः उपमाऽलङ्कारविशेषाश्च येषु तैः तथोक्तैः उज्ज्वलदीपकोपमैः, नवैः = स्वमनीषयैव निर्मितत्वेनापूर्वैः पदार्थैः शब्दाभिधेयैः तैः, उपपादिताः = विनिर्मिताः, निरन्तरेण = अव्यवधानेन प्रतिपदेन वा प्रायेण सर्वत्रैव वर्तमानेन, श्लेषेण = तदाख्येनालङ्कारेण, घनाः = बहुलतराः, दुर्बोधाः इत्यर्थः, सुष्ठु = शोभना, जातिः = छन्दविशेषः, यासु ताः सुजातयः, कथाः = गद्यपद्यादिप्रबन्धाः, दीपकाः प्रदीपा उपमा सादृश्यानि येषां तैः उज्ज्वलप्रदीपसदृशैरित्यर्थः, निरन्तरं = अव्यवधानं, यः श्लेषः = संयोगः, तेन घनाः = सान्द्राः, तथा सुष्ठु = शोभना, जातयः = जातीपुष्पाणि, यासु ताः तथोक्ताः, उपादेयपदार्थभूतैः चम्पककुड्मलैः = हेमपुष्पकमुकुलैः, उपपादिताः = सम्पादिताः ग्रथिताः, महास्रजः = महा-माला इव, कं जनं, न हरन्ति = न वशीकुर्वन्ति, अपितु सर्वमेवेत्यर्थः।

व्याख्या (हिन्दी)—चम्पा की नवीन कलियों से अत्यन्त घनी गूँथी हुई तथा दीपक के समान उज्ज्वल कान्ति वाली चमेली की बड़ी माला के समान अत्यन्त प्रशस्त दीपक और उपमा आदि अलंकारों तथा अपूर्व शब्दों एवं अर्थों से गुम्फित अत्यन्त क्लिष्ट गद्य-पद्यमयी कथा भला किसके मन को नहीं हर लेती? सबके मन को हर लेती है।

विशेष—कवि का अभिप्राय है कि निसर्ग सौन्दर्य का प्रभाव सर्वत्र अमोघ

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

होता है। चम्पा और चमेली के पुष्पों की माला के समान यह मेरी कादम्बरी कथा भी काव्य-गुणों एवं अलंकारों से पूर्ण समस्त लोक के मन बरबश हरण करने में समर्थ है। यहाँ पूर्णोपमा, अर्थापत्ति और दोनों के भङ्गाङ्गिभावानु-प्रवेश से संकर नामक अलंकार है।

(८) उवास यस्य श्रुतिशान्तकल्मषे सदा पुरोडाशपवित्रिताऽधरे।
सरस्वती सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—महाकवि बाणभट्ट अपने कुल की विद्वत्ता व कौलीन्य का परिचय देते हुए उसे विद्यासम्पन्न व नैष्ठिक कर्मकाण्डी बताते हैं—

अन्वयः—यस्य (कुवेरस्य) श्रुतिशान्तकल्मषे पुरोडाशपवित्रिताऽधरे सोमकषायितोदरे समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे मुखे सरस्वती सदा उवास।

व्याख्या (संस्कृत)—यस्य = कुवेरनामकद्विजवरस्य, श्रुतिशान्तकल्मषे—श्रुतिभिः = वेदैः तदध्ययनैः, शान्तम् = विलीनं, कल्मषं = पापम्, यस्मिन् तस्मिन् = नित्यवेदाध्ययनेन वाचनिकपापरहिते, पुरोडाशपवित्रिताऽधरे—पुरोडाशेन = अग्निहोत्रादौ देवेभ्यो हुतहविरवशिष्टेन हविषा ('पुरोडाशो हविर्भेदे हविशेषे च कीर्त्तितः' इति विश्वः), पवित्रितौ = भक्षणसमये स्पर्शेन पावनीकृतौ, अधरौ = ओष्ठौ, यस्य तस्मिंस्तथोक्ते, सोमकषायितोदरे—सोमेन = सोमयागेन, सोमनामकलतारसपानेन, कषायितं = पुष्टम्, उदरं यस्य तस्मिन् तथोक्ते, समस्तशास्त्रस्मृतिबन्धुरे—समस्तानि = सकलानि, यानि शास्त्राणि = व्यासादिरचितानि ब्रह्मसूत्रादीनि, स्मृतयश्च = मन्वादिरचितनिबन्धाः, तैः = तदध्ययनैः, बन्धुरं = मनोहरं, तस्मिंस्तथोक्ते, मुखे = वदने, सरस्वती = वाग्देवी, सदा = सततं, सर्वस्मिन् काले, उवास = करोति स्म। अनेनास्य महात्मनः प्रत्यहं वेदाध्ययनशीलत्वं नित्याग्निहोत्रादिकर्मानुष्ठापकत्वं समग्रशास्त्रज्ञातृत्वञ्च स्पष्टीकृतम्।

व्याख्या (हिन्दी)—निरन्तर वेदपाठ से निष्कलुष, यज्ञ के हविष्यान्न-भक्षण से पवित्र अधर, अन्तर्भाग सोमपान से कषायित तथा समस्त शास्त्रों एवं स्मृतियों के अध्ययन से मनोहर मुख में जिनके सरस्वती सदा निवास करती थी।

विशेष—इससे बाणभट्ट का कुल एक नैष्ठिक व विद्यासम्पन्न ब्राह्मण परिवार था, इस बात का पता चलता है। इनके पूर्वज विद्या के गुरु तथा गुरुकुल के कुलपति भी थे।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(९) विवृण्वतो यस्य विसारि वाङ्मयं दिने दिने शिष्यगणा नवा नवाः।
उषस्सु लग्नाः श्रवणेऽधिकां श्रियं प्रचक्रिरे चन्दनपल्लवा इव ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—महाकवि बाणभट्ट अपनी कादम्बरी-कथा के प्रारम्भ में अपने गौरवशाली कुल-परम्परा का परिचय देते हुए अपने पूर्वज अर्थपति का परिचय इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं—

अन्वयः—नवाः नवाः शिष्यगणाः दिने दिने उषस्सु विसारि वाङ्मयं विवृण्वतः यस्य कर्णे लग्नाः चन्दनपल्लवा इव अधिकां श्रियं प्रचक्रिरे।

व्याख्या (संस्कृत)—नवाः नवाः=नूतनाः नूतनाः, शिष्यगणाः=छात्रसमूहाः, दिने दिने=प्रतिदिनम्, उषस्सु=प्रातःसमयेषु, विसारि=विसरणशीलं, विस्तृतं, वाङ्मयं=चतुर्दशविद्यात्मकं शास्त्रम्, विवृण्वतः=व्याख्यानेनार्थं स्पष्टीकुर्वतः, पाठयतः, यस्य=गुरोः अर्थपतेः, कर्णे=श्रवणे, शास्त्रविचाराकर्णने योषितां कर्णे वा, लग्नाः=आसक्ताः सन्तः, चन्दनपल्लवा इव=मलयजकिसलयानि इव, अधिकाम्=अत्यर्थां, प्रचुरां, श्रियं=शोभां, प्रचक्रिरे=जनयामास। इह वाच्योपमालङ्कारः।

व्याख्या (हिन्दी)—नये-नये छात्रगण प्रतिदिन उषाकाल में ही जिन अर्थपति के कानों की शोभा को विस्तृत शास्त्रचर्चा से कानों में लगे चन्दन-पल्लव की भाँति सुशोभित करते थे।

विशेष—महाकवि बाणभट्ट के पूर्वज अर्थपति भी कुलपति थे जिनके यहाँ मेधावी छात्र प्रतिदिन प्रातःकाल ही आकर आपस में शास्त्रों का व्याख्यान किया करते थे। यहाँ वाच्योपमा अलंकार है।

(१०) विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्त्तिभिः।
मखैरसंख्यैरजयत् सुरालयं सुखेन यो यूपकरैर्गजैरिव ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—पूर्ववत्।

अन्वयः—यः विधानसम्पादितदानशोभितैः स्फुरन्महावीरसनाथमूर्त्तिभिः यूपकरैर्गजैरिव असंख्यैः मखैः सुखेन सुरालयम् अजयत्।

व्याख्या (संस्कृत)—यः=अर्थपतिः, विधानसम्पादितदानशोभितैः—विधानेन=वेदप्रतिपादितमार्गेण, सम्पादितं=विहितं, यद्दानं=विप्रेभ्यः सुवर्णादिवितरणं, तेन शोभितैः=मण्डितैः, अन्यत्र तु—विधानेन=मदाविर्भावार्थं दीयमानपुष्टिकरभक्षणेन, सम्पादितं=निष्पन्नं, यद्दानं=मदजलं,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तेन शोभितैः = मण्डितैः, स्फुरन्तः = देदीप्यमानाः, ये महावीराः = हवनवह्नयः, तैः सनाथाः = युक्ताः, मूर्त्तयः = स्वरूपाणि, येषां तैः ('होमाग्निस्तु महाज्वालो महावीरः प्रवर्गवत्' इति भानुचन्द्रोद्धृतकोशः), अन्यत्र तु — स्फुरन्तः = सक्रियाः, ये महावीराः = महाशूराः, तैः सनाथाः = अधिष्ठिताः, मूर्त्तयः = शरीराणि, येषां तैः, यूपाः = यज्ञपशुबन्धनाय स्थाणुविशेषाः, त एव कराः = हस्तविशेषाः, येषां तैः, अन्यत्र तु — यूपा इव कराः = शुण्डादण्डाः, येषां तैः गजैः = करिभिरिव, असंख्यैः = अगण्यैः, मखैः = यज्ञैः, सुखेन = अक्लेशेन, सुरालयं = स्वर्गम्, अजयत् = स्ववशमकरोत् ।

व्याख्या (हिन्दी) — जिस प्रकार राजा मदवर्धक पौष्टिक भक्ष्य द्वारा उत्पन्न मदजल से सुशोभित, युद्धोत्साही, महावीरों से अधिष्ठित तथा यज्ञस्तम्भ के समान सूँड़ों वाले असंख्य बलिष्ठ युद्ध के हाथियों द्वारा इन्द्र जैसे पराक्रमी राजा का भी देश सरलता से जीत लेता है; वैसे ही अर्थपति ने विधि-विधान से दिये गये दान से सुशोभित, प्रज्ज्वलित होमाग्नि से सम्पन्न तथा यज्ञस्तम्भों से प्रतिष्ठित असंख्य यज्ञों द्वारा स्वर्ग को भी अपने अधीन कर लिया था ।

विशेष — यहाँ कार्य द्वारा हस्तिसैन्य की सहायता से अन्य राजा के देश को विजय करने वाले किसी राजा के व्यवहार का अर्थपति के व्यवहार पर समारोप होने से समासोक्ति अलंकार है । यहाँ समासोक्ति अलंकार पूर्णोपमा द्वारा अनुप्राणित है ।

(११) दिशामलीकालकभङ्गतां गतस्त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः ।
चकार यस्याध्वरधूमसञ्चयो मलीमसः शुक्लतरं निजं यशः ॥

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग — महाकवि बाणभट्ट ने प्रस्तुत श्लोक में अपने यशस्वी पिता चित्रभानु की कीर्ति का वर्णन किया है ।

अन्वयः — दिशाम् अलीकाऽलकभङ्गतां गतः त्रयीवधूकर्णतमालपल्लवः यस्य मलीमसः सन् अध्वरधूमसञ्चयः निजं यशः शुक्लतरं चकार ।

व्याख्या (संस्कृत) — दिशां = पूर्वादीनां, वधूस्वरूपाणामिति यावत्, अलीकेषु = ललाटेषु ('अलीकमप्रिये भाले' इति हैमः), ये अलकाः = चूर्णकुन्तलाः, तेषां भङ्गतां = रचनाविशेषत्वं गतः, त्रयी = वेदत्रयी ऋग्यजुःसामरूपेत्यर्थः, सैव वधूः = स्नुषा, तस्याः कर्णे = श्रवणे, तमालपल्लवः =

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तापिच्छद्रुमकिसलयस्वरूपः ('तापिच्छोऽपि तमालः स्यात्' इत्यमरः), मलीमसः = प्राकृतिकमलिनः, यस्य = चित्रभानोः, अध्वरधूमसञ्चयः = यज्ञधूमराशिः, निजं = स्वीयं, यशः = प्राकृतिकस्वच्छां सुकीर्ति, शुक्लतरं = अतिशयेनोज्ज्वलतां, चकार = विदधे ।

व्याख्या (हिन्दी)—दिशा रूपी कामिनियों के ललाट में अलकों के कुटिल केशरचना तुल्य तथा श्रुति रूप स्त्रियों के कानों में तमालपल्लव रूप जिन चित्रभानु के मलिन यज्ञधूमसमूह ने अपने वंश की कीर्ति को और अधिक उज्ज्वल कर दिया ।

विशेष—यहां पर श्लोक के प्रथम चरण के द्वारा अजस्र यज्ञसमूह सम्पादन द्वारा यज्ञधूम का दिगन्तव्यापित्व ध्वनित होता है तथा नियमपूर्वक यज्ञ-विधान से धर्माचार-तत्परता का भी द्योतन होने से गुणजनित सुकीर्ति के विस्ताराधिक्य का पोषण होता है । यहां पर दिशाओं पर वधूत्व का आरोप आर्थ है, अध्वरधूमसञ्चय पर केशरचना का आरोप शाब्द है, अतः यहां एकदेशविवर्ति रूपक अलंकार है । इसी प्रकार धूमसञ्चय पर तमालपल्लवत्वारोप तथा वेदत्रयी पर वधूत्वारोप निमित्त होने से परम्परितरूपक है । मलिन-धूमसञ्चय द्वारा शुक्लतर यश की उत्पत्ति कारणगुणविपरीत कार्यगुणोत्पत्ति से विषम नामक अलंकार है । सभी के परस्पर अङ्गाङ्गीभाव होने से संकर नामक अलंकार है ।

(१२) द्विजेन तेनाक्षतकण्ठकौण्ठयया महामनोमोहमलीमसान्धया ।
अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया निबद्धेयमतिद्वयी कथा ।।

ससन्दर्भ-प्रसङ्ग—प्रस्तुत श्लोक में महाकवि बाणभट्ट अपने ज्ञान और वैदुष्य के लाघव का ज्ञापन करते हुए अहंकारराहित्य एवं ग्रन्थ की मौलिकता का प्रदर्शन करते हैं ।

अन्वयः—द्विजेन तेन अक्षतकण्ठकौण्ठयया महामनोमोहमलीमसान्धया अलब्धवैदग्ध्यविलासमुग्धया धिया अतिद्वयी इयं कथा निबद्धा ।

व्याख्या (संस्कृत)—तेन द्विजेन = ब्राह्मणेन चित्रभानुसुतेन बाणेन, अक्षतं = अविनष्टं, कण्ठकौण्ठयं = वचनव्यापारे गलस्य मान्द्यं, यस्याः सा तया, महान् = उत्कृष्टः, यो मनोमोहः = शिशुत्वेन चित्तवैकल्यं, तेन मलीमसान्धया—मलिना = प्रशंसितुमयोग्या, अत एव अन्धा=सदसत्प्रतिपादनासमर्था,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तया, तथा अलब्धः = अप्राप्तः, यो वैदग्ध्यविलासः = वैदुष्यचातुर्यं, तेन हेतुना मुग्धा = तथा वैदुष्यचातुर्यासत्त्वेनात्यन्तकोमलयेत्यर्थः, धिया = प्रज्ञया, इयं = मद्बुद्धिस्था कादम्बरीरूपा, गर्हितत्वे द्वयीं बृहत्कथां वासवदत्तां च अतिक्रान्तेति अतिद्वयी = उत्तमत्वे अद्वितीया, कथा = गद्यपद्यादिप्रबन्धः, निबद्धा = ग्रथिता।

व्याख्या (हिन्दी)—उस ब्राह्मण बाणभट्ट ने जिससे कण्ठ की कुण्ठता नष्ट नहीं हुई है, बढ़े हुए चित्त के अज्ञान से मलिन दर्शन-शक्ति में विकल, निपुणता के विलास को न पाने से मूढ, ऐसी अपनी बुद्धि से भी बृहत्कथा और वासवदत्ता को अतिक्रमण करने वाली इस कादम्बरी रूप कथाग्रन्थ की रचना की है।

विशेष—यहाँ बाणभट्ट का आशय है कि उन्होंने पूर्व में अपरिणतबुद्धि से इस कथावस्तु को ग्रहण कर अपनी मन्द बुद्धि के अनुसार ही कथा रूप में प्रस्तुत किया है, अतः इसमें त्रुटियों एवं कमियों की सम्भावना अधिक है। अतः बुद्धिमानों को शैशवचापल्यजनित दोषों को क्षमा कर सुधार लेना चाहिए। यहाँ पर छेकानुप्रास अलंकार की छटा है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रमुख गद्यखण्ड-व्याख्या

(१) आसीदशेष-नरपति-शिरः-समभ्यर्चित-शासनः पाकशासन इवापरः, चतुरुदधिमालामेखलाया भुवो भर्त्ता, प्रतापानुरागावनत-समस्त-सामन्तचक्रः, चक्रवर्तिलक्षणोपेतः, चक्रधर इव करकमलोपलक्ष्यमाण-शङ्ख-चक्र-लाञ्छनः, हर इव जितमन्मथः, गुह इवाप्रतिहतशक्तिः, कमलयोनिरिव विमानीकृतराजहंसमण्डलः, जलधिरिव लक्ष्मीप्रसूतिः, गङ्गाप्रवाह इव भगीरथपथप्रवृत्तः, रविरिव प्रतिदिवसोपजायमानोदयः, मेरुरिव सकलोपजीव्यमानपादच्छायः, दिग्गज इवानवरतप्रवृत्तदानार्द्रीकृतकरः, कर्त्ता महाश्चर्य्याणाम्, आहर्त्ता क्रतूनाम्, आदर्शः सर्वशास्त्राणाम्, उत्पत्तिः कलानाम्, कुलभवनं गुणानाम्, आगमः काव्यामृतरसानाम्, उदयशैलो मित्रमण्डलस्य, उत्पातकेतुरहितजनस्य, प्रवर्त्तयिता गोष्ठीबन्धानाम्, आश्रयो रसिकानाम्, प्रत्यादेशो धनुष्मताम्, धौरेयः साहसिकानाम्, अग्रणीर्विदग्धानाम्, वैनतेय इव विनतानन्दजननः, वैन्य इव चापकोटिसमुत्सारितसकलाऽरातिकुलाचलो राजा शूद्रको नाम ।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यांश में महाकवि बाणभट्ट ने कादम्बरी कथा के प्रारम्भ में कथामुख प्रस्तुत करते हुए विदिशानरेश राजा शूद्रक का उदात्त परिचय प्रस्तुत किया है ।

व्याख्या—(संस्कृत)—आसीदिति भूतक्रियापदस्य 'राजा शूद्रको नाम' इति दूरस्थेन कर्त्तृपदेनान्वयः कार्यः । राजानं शूद्रकं विशिनष्टि—अशेषेत्यादिभिः पदैः । समग्रैः नृपतिभिः सादरं स्वीकृतं शासनं यस्य सः तादृशः, सुरराजाद्भिन्नो द्वितीय इन्द्रसदृशः, भूमण्डलचतुर्दिक्षु विद्यमानाः समुद्राः एव काञ्ची यस्यास्तथाभूतायाः पृथ्व्याः भर्त्ता=पालकः, स्वप्रतापेन अनुरागेन च वशीकृतं कृत्स्नं सामन्तचक्रं यस्य स तादृशः, सामुद्रिकशास्त्रोक्तैः करतललौहित्यादिभिः सार्वभौमलक्षणैः युक्तः, विष्णुः सदृशं स्वपाणिपद्मतले शङ्खचक्राकाररेखोपरेखास्वरूपं चिह्नं यस्य स तादृशः, भगवान् शिवसदृशं पराभूतः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मन्मथः = कामवासना, यस्य सः तादृशः, कार्तिकेयतुल्यं अप्रतिहता = केनाप्यकुण्ठिता, शक्तिः = प्रभावोत्साहमन्त्रजनितं सामर्थ्यं, आयुधविशेषश्च, यस्य सः तादृशः, कमलयोनिः = विधाता ब्रह्मा तुल्यं, विमानीकृतराजहंसमण्डलः— विगतः = पराजयेन विनष्टः, मानः = अहङ्कारः, येषां तथाभूतानां राजहंसानां = अत्युच्चमहीपतीनां, मण्डलं = गणः, येन सः तादृशः, यथा जलधिः लक्ष्म्याः = रमायाः, शोभायाः, प्रसूतिः = निर्गमस्थानम्, तथा राजा शूद्रकोऽपि नीतिचातुर्यात् धनसम्पत्तेः उद्भवस्थानम्, यथा देवनदी गङ्गा महाराजभगीरथस्य पथस्यानुगामिनी आसीत् तथा सोऽपि पूर्वजानां सदाचारपथानुगामी, रविः = दिवाकरः, तत्सदृशं प्रतिदिनं उत्पद्यमानसम्पत्तेरुद्रेकः यस्य स तादृशः, सुमेरुगिरेरिव सोऽपि सकलोपजीव्यमानानां स्वाश्रितानां रक्षणादिभिः प्रदत्तपादच्छायः, ऐरावतादीनां दिग्गजानामिव सोऽपि अनवरतदानादिधर्मकार्यैः स्वकरम् आर्द्रीकृतः, अतिप्रबलरिपुपराजयाद्यद्भुतावहानन्यकृतकार्याणां निर्वाहकः, यज्ञानां अनुष्ठाता, सर्वशास्त्राणां = वेदादीनां, आदर्शः = दर्पणः तुल्यः, नृत्यगीतादिचतुःषष्टिकलाविद्यानां शिक्षाप्रदानाज्जन्मस्थलमिव, दयादाक्षिण्यगाम्भीर्यादीनां गुणानां कुलभवनं = वंशपरम्परागताश्रयस्थानम्, काव्यानां = दृश्यश्रव्यादीनां, ये अमृतरसाः = सुधातुल्यश्रृङ्गारादिरसाः, तेषां आगमः = उद्भवस्थानम्, पूर्वाद्रौ दिवाकर इव मित्रगणानां अभ्युन्नतिस्थानम्, अहितजनस्य = वैरिजनस्य, विनाशव्यञ्जको धूमकेतुरिव, मधुरकथापरिषत्स्थापनानां प्रवर्द्धकः, रसिकानां = विदग्धजनानां, आश्रयः = अवलम्बनस्थानम्, धनुष्मतां = धनुर्धारिणां मध्ये प्रशस्तधनुर्धरश्रेष्ठत्वात्, प्रत्यादेशः = निराकृतिः इव, साहसिकानां = संग्रामादौ हठविधायिनां मध्ये, धौरेयः = धुरन्धरः, विदग्धानां = पण्डितानां मध्ये, अग्रणीः = अग्रगण्यः, वैनतेयः — गरुड इव, विनतेभ्यः आनन्दवर्द्धनः = हर्षस्य जनकः, वैन्यः = पृथुरिव, चापकोट्या = धनुषस्य अग्रभागेन, समुत्सारिताः = विनाशिताः, स्थानान्तरं प्रापिताः समग्ररिपवः, कुलाचलानां = महेन्द्रादिकुलपर्वतानामिव येन स तादृशः।

व्याख्या (हिन्दी)—प्राचीन काल में शूद्रक नाम का एक राजा था। सभी राजागण बड़ी श्रद्धा से सिर झुकाकर उसकी आज्ञा का पालन करते थे। वह मानो दूसरा इन्द्र था। वह चार समुद्ररूपी चौखण्डी मेखला धारण करने वाली पृथ्वी रूपी नायिका का पालन-पोषण करने वाला दक्षिण नायक था। उसने अपने प्रताप अथवा अनुराग के बल पर सभी सामन्तचक्र को अपनी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

आज्ञा के वशीभूत कर रखा था। वह चक्रवर्ती सम्राटों के सभी लक्षणों से युक्त भगवान् विष्णु के समान अपने हाथों में शंख-चक्र-कमल आदि चिह्न रखता था। भगवान् शिव के समान उसने भी काम (वासना) को जीत लिया था। ब्रह्मा के समान उसने भी राजहंसों (अत्युच्च राजाओं के अभिमान को चूर कर उनके हृदय पर अपना आसन जमा लिया था। वह समुद्र की भाँति लक्ष्मी (सम्पत्ति के उत्पत्तिस्थान, गंगाजी के समान भगीरथ के मार्ग (सदाचार एवं सतत प्रयत्न) का अनुगामी, सूर्य के समान प्रतिदिन अभ्युदय को प्राप्त करने वाले, सुमेरु पर्वत के समान अपने आश्रितों को छाया (सुख-त्राण) प्रदान करने वाले, दिग्गजों के समान निरन्तर दान देने से आर्द्र हाथों वाले, बड़े-बड़े आश्चर्यजनक कर्मों (अजेय शत्रुओं को परास्त करना आदि) को करने वाले, नानाविध यज्ञों के अनुष्ठाता, समस्त शास्त्रों के ज्ञान को प्रतिमूर्त्त करने वाले आदर्श (आइना) स्वरूप, नृत्यसंगीतादि चतुःषष्टिकला के उत्पत्तिस्थान, दया-दाक्षिण्यादि सद्गुणों के वंशपरम्परास्थान, काव्य के अमृतरसों (श्रृंगारादि) के उत्पत्तिस्थान थे। सूर्य (मित्र) के उदय हेतु जैसे उदयाचल है उसी प्रकार वह भी अपने मित्रों के अभ्युदय हेतु उदय पर्वत थे। शत्रुगणों के विनाश के सूचक धूमकेतु के समान थे। वह अनेक प्रकार की विद्वद्गोष्ठियों के प्रवर्त्तक, रसिकजनों के आश्रयदाता, धनुर्धारियों के गर्व को निराकरण करने वाले, साहसिकों में धौरेय (अग्रगण्य), पण्डितों में प्रधान, गरुड जैसे अपनी माता विनता के आनन्द के जनक हैं वैसे ही वह विनत (नम्र) जनों के आनन्द के जनक थे। वेनपुत्र पृथु के समान धनुष के अग्रभाग से कुलपर्वतों के समान शत्रुकुल को हटाने वाले थे।

विशेष—प्रस्तुत वर्णन में महाकवि बाणभट्ट ने राजा शूद्रक का परिचय ब्रह्मा, विष्णु, शिव, कार्तिकेय, इन्द्र, सूर्य, उदयाचल आदि पौराणिक उपमानों के माध्यम से प्रस्तुत करते हुए पूर्णोपमा, श्लेष, समासोक्ति, यमक आदि अनेक अलंकारों का समायोजन कर अपनी नवनवोन्मेषशालिनी बुद्धि का परिचय दिया है।

(२) नाम्नैव यो निर्भिन्नारातिहृदयो विरचितनरसिंह-रूपाडम्बरम्, एकविक्रमाक्रान्तसकलभुवनतलो विक्रमत्रयायासितभुवनत्रयं महासेव वासुदेवम्।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

अतिचिरकाललग्नमतिक्रान्तकुनृपतिसहस्रसम्पर्ककलङ्कमिव क्षालयन्ती यस्य विमले कृपाणधाराजले चिरमुवास राजलक्ष्मीः ।

यश्च मनसि धर्म्मेण, कोपे यमेन, प्रसादे धनदेन, प्रतापे वह्निना, भुजे भुवा, दृशि श्रिया, वाचि सरस्वत्या, मुखे शशिना, बले मरुता, प्रज्ञायां सुरगुरुणा, रूपे मनसिजेन, तेजसि सवित्रा च वसतः सर्वदेवमयस्य प्रकटितविश्वरूपाकृतेरनुकरोति भगवतो नारायणस्य ।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट कादम्बरी कथामुख के नायक राजा शूद्रक के प्रभाव व आन्तरिक गुणों का परिचय देते हुए उन्हें सर्वदेवमय भगवान् विष्णु का अवतार सिद्ध करते हैं ।

व्याख्या (संस्कृत)—यः शूद्रकः निजनामश्रवणमात्रेणैव भयोत्पादनेन अरातीनां=शत्रूणां, हृदयानि विदारितवान् । अनेन तेन विरचितः हिरण्यकशिपुहृदयभेदनाय विहितनरसिंहस्वरूपधारणस्य आडम्बरः । सः एकेन=अद्वितीयेन, विक्रमेण सकलं भुवनतलं=विष्टपं, अधीनीकृतवान् । अनेन विक्रमः =पादन्यासः, तस्य त्रितयं तेन आयासितं=खिन्नीकृतं, भुवनत्रयं=विष्टपं, येन तं तथोक्तं वासुदेवं=श्रीपतिं, जहासेव=हसति स्म एव । भूयान् समयात् कुनृपतिसहस्रसम्पर्केण आत्मनि यत् संयुक्तं कलङ्कं दूषितं प्रापञ्चं तं अस्य शूद्रकस्य निर्मले कृपाणधाराजले प्रक्षालनेन प्रमार्जयन्तीव बहुकालं यावत् सुखेन राजलक्ष्मीः वसतिं चक्रे । किञ्च, यः शूद्रकः हृदये धर्मेण=पुण्येन (वसता इति पदस्य सप्तम्यन्तपदं साकं सर्वत्रान्वयः कार्यः), कोपे=क्रोधोत्पन्ने सति, यमेन=धर्मराजेन इव (तत्क्षणमेव दण्डप्रदानात्), प्रसादे=अनुग्रहे वसता प्रसन्ने सति, मनोरथाधिकसमर्पणात् धनदेन=कुबेरेण, प्रतापे=कोशदण्डजे तेजसि, वह्निना=अग्निना, सकलवैरितापकत्वात्, भुजे=बाहौ, वसता राज्यभारवहनसमर्थत्वात्, भुवा=मेदिन्या, दृशि=लोचने, अवलोकने वसता सानुरागदृष्टिमात्रेण सम्पत्तिसम्भवात् श्रिया, वाचि=वचने, निरन्तरगद्यपद्याद्यनेकप्रबन्धरचनात् सरस्वत्या=भारत्या, मुखे=आनने, वसता चन्द्रेण तदनुकारित्वात्सकलजनानन्दकत्वाच्च, बले=शक्तौ, मरुता=वायुना, अतिबलशालित्वात्, प्रज्ञायां=मतौ, सुरगुरुणा=बृहस्पतिना, अनुपमबुद्धिशालित्वात्, रूपे=सौन्दर्ये, मनसिजेन=अनङ्गेन, मानिनीमानापहरणादित्यर्थः । तेजसि=प्रतापलक्षणे, विपक्षिणां दुर्निरीक्ष्यत्वात्; सविता=सूर्येण; सर्वदेव-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मयस्य, प्रकटितविश्वरूपाकृतेः भगवतो नारायणस्य = महाविष्णोः, अनुकरोति = तत्सादृश्यं प्राप्नोतीत्यर्थः ।

व्याख्या (हिन्दी)—उस शूद्रक ने अपने नाम श्रवण मात्र से ही शत्रुओं के हृदय को विदीर्ण कर दिया था। अपने अद्वितीय पराक्रम से सारी पृथ्वी को अपने अधीन कर लिया था। इसीलिए वह शत्रुवध के लिए नृसिंह रूप का आडम्बर रचते वाले तथा तीन पगों से तीनों लोकों को नापने वाले; वामन रूप धारण करने का कष्ट उठाने वाले भगवान् बासुदेव की हँसी-सी उड़ाया करता था। राज्यलक्ष्मी युगों तक दुष्ट राजाओं की सेवा करने से लगे हुए कलंक को इस राजा के कृपाण की निर्मल धारा में प्रक्षालन करती हुई-सी बहुत दिनों से सुखपूर्वक निवास कर रही थी। उसके मन में धर्म का निवास था, क्रोध में यमराज का, प्रसन्नता में कुबेर का निवास था। प्रताप में अग्नि प्रज्वलित थी, भुजाओं पर पृथ्वी टिकी हुई थी, आँखों में लक्ष्मी हँसती थी, वाणी में सरस्वती बोलती थी, मुख पर चन्द्रमा खेलता था। वह बल में वायु के समान था, उसकी बुद्धि में बृहस्पति का विलास था, सौन्दर्य में कामदेव उतर आया था, तेज में सूर्य चमक रहा था। इस प्रकार वह सभी देवताओं के स्वरूप से युक्त विश्व रूपधारी भगवान् नारायण की प्रतिमूर्त्ति-सा प्रतीत हो रहा था।

विशेष—इस स्थल पर महाकवि बाणभट्ट ने शूद्रक के गुणों को भगवान् वासुदेव (विष्णु) से अधिक बताते हुए उपमान से उपमेय का आधिक्य बताकर व्यतिरेक अलंकार का निरूपण किया है। 'जहासेव' इस पद में क्रियोत्प्रेक्षा है। इसी प्रकार 'क्षालयन्तीव' में भी क्रियोत्प्रेक्षा है। 'कृपाणधाराजल' में निरङ्गरूपक है। 'मनसि' इत्यादि पदों में औपम्यवाचक पदों का अभाव होने से आर्थी उपमा है। भगवान् विष्णु का नृसिंह रूप धारण करना और वामन रूप धारण करना पौराणिकी प्रसिद्धि है।

(३) यस्मिंश्च राजनि जितजगति परिपालयति महीं चित्रकर्म्मसु वर्णसङ्कराः, रतेषु केशग्रहाः, काव्येषु दृढबन्धाः, शास्त्रेषु चिन्ता, स्वप्नेषु विप्रलम्भाः, छत्रेषु कनकदण्डाः, ध्वजेषु प्रकम्पाः, गीतेषु रागविलसितानि, करिषु मदविकाराः, चापेषु गुणच्छेदाः, गवाक्षेषु जालमार्गाः, शशिकृपाणकवचेषु कलङ्काः, रतिकलहेषु दूतसम्प्रेषणानि, सार्य्यक्षेषु शून्यगृहाः न प्रजानामासन् ।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड के माध्यम से महाकवि बाणभट्ट ने महाराज शूद्रक की राज्य-व्यवस्था एवं तत्कालीन सामाजिकी स्थिति का चित्रण किया है।

व्याख्या (संस्कृत)—यस्मिन् महीपतौ शूद्रके जितजगति = निर्जित-संसारे, महीं = भुवं, पालयति = शासति सति, एते विषया एतेषु स्थलेषु विद्यमाना आसन् न प्रजासु इति अग्रिमेण सर्वत्र सम्बन्धः कार्यः। यथा—चित्रकर्मसु = आलेख्यनिर्माणेषु एव, वर्णसङ्कराः—वर्णानां = नीलपीतादीनां, सङ्कराः = परस्परसम्बन्धाः आसन्, न तु जनेषु अनुलोमविलोमेन वा ब्राह्मणादिभ्यः क्षत्रियादीनां तद्वैपरीत्येनोत्पत्तिरूपा वर्णसङ्कराः दुराचरणाद्यभावात्। रतेषु = मैथुनेषु, रतिक्रीडासु एव, केशग्रहाः = सुगमताविधानाय कचाकर्षणानि, न तु जनेषु कलहेषु तदनुपलम्भात्। काव्येषु = कविकर्मसु, दृढ़बन्धाः = समासाधिक्यादिना पादानां प्रगाढसन्निवेशाः, न तु अपराधाभावात् कारागारगृहेषु। शास्त्रेषु = वेदोपबृंहितधर्मशास्त्रेषु एव, चिन्ता = मनोव्यापारः, न तु उदरपोषणादिषु समस्तविषयविद्यमानत्वात्। स्वप्नेषु = स्वप्नदशायाम् एव, विप्रलम्भाः = दृढवस्तुना झटिति तिरोधानात् वञ्चनाः, न तु अन्यकालेषु वियोगस्याजायमानत्वात्। छत्रेषु = आतपत्रेषु, कनकदण्डाः = सुवर्णयष्टयः, न तु जनेषु दण्डेन सुवर्णपरिग्रहः स्वधर्मपालनेन अपराधाभावात्। ध्वजेषु = पताकासु, प्रकम्पाः = अतिशयेन चाञ्चल्यानि, भीतेरसत्त्वात् न तु जनस्वान्तेषु। गीतेषु = गानकलासु, रागाः = वसन्तादि शास्त्रीयाः घनाश्रीप्रभृतयो देशीयाश्च, तेषां विलसितानि = व्यवहाराः, समेषामेव अत्यन्तसदाचरणसम्पन्नत्वात् न जनेषु मात्सर्यादीनां विलसितानि। करिषु = गजेषु, मदः = दानं, तस्य विकाराः = तेजोजनितविकृतयः, न तु लोकेषु मदो रागोऽहङ्कारो वा तस्य विकाराः विचेष्टितानि, सर्वस्मिन् समये आप्तोपदेशामृतपानसक्तमनस्कत्वेन तेषामनुपलम्भत्वात्। चापेषु = धनुःषु, गुणच्छेदाः—गुणस्य = मौर्वीरूपस्य रज्वोः, छेदाः = कर्त्तनानि, न तु गणेषु गुणानां दयादाक्षिण्यादीनां छेदाः विलोपाः तथाविधगुणानां सर्वदोपलम्भत्वात्। गवाक्षेषु=वातायनेषु, जालमार्गाः = वातागमनाय क्षुद्रक्षुद्रपथाः, न तु जनेषु जालमार्गाः = छद्मकल्पनामार्गाः, समेषामेव सत्प्रकृतिकत्वात्। शशिकृपाणकवचेषु—शशी = चन्द्रः, कृपाणम् = असिः, कवचम् = लोहनिर्मितवर्म्मः, एषु एव कलङ्कचिह्नानि, न तु जनाचरणेषु कलङ्काः = कुलमालिन्यादिजनकाः दुराचरणादिदूषितव्यवहाराः, सर्वेषामेव सदाचरणशील-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

त्वात्। रतिकलहेषु = कामविषयकविवादेषु, दूतसम्प्रेषणानि = सञ्चारकगमनानि, न तु युद्धेषु, प्रबलविपक्षिणोऽविद्यमानत्वात्। सार्य्यंक्षेषु—सारयः = क्रीडन्यः, अक्षाः = विभीतकाः, तेषु = गुटिकाक्षेत्रेषु, शून्यगृहाः = गुटिकारहितस्थानानि, न तु ग्रामेषु लोकशून्यसदनानि, केनापि प्रकारेण राजादेयकरजनितबाधाद्यभावात्।

व्याख्या (हिन्दी)—सम्पूर्ण जगत् को जीतकर पृथ्वी का पालन करने वाले जिस शूद्रक के शासनकाल में विपरीत वर्णों के सम्बन्ध चित्रकलादि में ही देखे जाते थे, प्रजावर्ग में वर्णसंकर-दोष का अभाव था। केश ग्रहण करने की क्रिया केवल कामिनियों के साथ रतिक्रीडा में ही सम्पन्न होती थी, जनता में कलहाभाव के कारण केशग्रह नहीं होता था। काव्यों में ही पद-समासादि रूप दृढ बन्ध देखा जाता था, अपराधाभाव के कारण अन्यत्र किसी दृढ बन्ध का अभाव था। राज्य में सम्पन्नता के कारण व्यक्ति को वैषयिक चिन्ता न थी अपितु विभिन्न शास्त्रों के विषय का ही चिन्तन होता था। स्वप्न में ही दशा (दृष्ट वस्तु का लोप होना) पायी जाती थी, वास्तविक जीवन में वियोग का अभाव था। राजछत्रों में ही सुवर्ण के दण्ड लगे होते थे, प्रजा के ऊपर किसी प्रकार का जुर्माना रूप सुवर्णदण्ड नहीं लगाया जाता था। भयाभाव के कारण कम्प की स्थिति केवल पताकाओं में वायुवेग से ही देखी जाती थी। राग (वसन्तादि) व विलास (हाव-भाव) केवल संगीत-गायन में ही देखने को मिलता था, प्रजावर्ग में राग-विलास का अभाव था। हाथियों में मद (दानजल) के विकार थे, प्रजा में मद(गर्व)जनित विकारों का अभाव था। धनुष की डोरी (प्रत्यञ्चा) का ही युद्ध में गुणच्छेद होता था; प्रजाओं में दया-दाक्षिण्यादि गुणों का विच्छेद कभी नहीं होता था। महल के वातायनों में ही जाल (छोटे-छोटे छिद्र) होते थे, प्रजाओं में जाल (दम्भ आचार) का अभाव था। कलङ्क के नाम पर चन्द्रमा में मृग रूप, तलवार में जंग रूप और कवच में मालिन्य रूप कलङ्क ही देखा जाता था, प्रजाओं के चरित्र में किसी प्रकार का कलङ्क देखने को नहीं मिलता था। दूत-सम्प्रेषण कार्य कामक्रीडा में ही सम्पन्न होता था, कलह के अभाव में अन्यत्र दूत-सम्प्रेषण का काम नहीं था तथा घर का सूना होना केवल चौपड़ के खेलों में ही होता था, प्रजा में किसी का घर धनादि से रिक्त नहीं होता था।

विशेष—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाराज शूद्रक की सुदृढ शासन-व्यवस्था

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

के प्रभाव से समाज की समृद्ध स्थिति का विवेचन है। 'वर्णसंकराः' से आरम्भ कर चौदह विशेषणों में श्लेषानुप्राणित शाब्दी परिसंख्या अलंकार है। दोनों के परस्पर अनपेक्ष होने से संसृष्टि अलंकार भी है।

(४) सत्यपि रूपविलासोपहसित-रतिविभ्रमे लावण्यवति विनयवत्यन्वयवति हृदयहारिणि चावरोधजने, स कदाचिदनवरतदोलायमान-रत्नवलयो घर्घरिकास्फालन-प्रकम्प-झणझणायमान-मणिकर्णपूरः स्वयमारब्धमृदङ्गवाद्यः सङ्गीतकप्रसङ्गेन, कदाचिदविरल-विमुक्त-शरासार-शून्यीकृतकाननो मृगयाव्यापारेण, कदाचिदाबद्धविदग्ध-मण्डलः काव्यप्रबन्धरचनेन, कदाचिच्छास्त्रालापेन, कदाचिदाख्यान-काख्यायिकेतिहासपुराणाकर्णनेन, कदाचिदालेख्यविनोदेन, कदाचिद्वीणया, कदाचिद्दर्शनागत-मुनिजन-चरणशुश्रूषया, कदाचिदक्षरच्युत-कमात्राच्युतक-बिन्दुमती-गूढचतुर्थपाद-प्रहेलिका-प्रदानादिभिः, वनितासम्भोगसुख-पराङ्मुखः सुहृत्परिवृतो दिवसमनैषीत्। तथैव च दिवसमेवमारब्ध-विविध-क्रीडा-परिहास-चतुरैः सुहृद्भिरुपेतो निशामनैषीत्।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने महाराज शूद्रक की दिनचर्या का वर्णन किया है।

व्याख्या (संस्कृत)—सुरतसुखस्योपरि विद्वेषमुपपादयितुमन्यविधकार्यासक्तिमुपपादयति—सत्यपीति। रूपविलासोपहसितरतिविभ्रमे—रूपं = सौन्दर्यम्, विलासाः 'धीरा दृष्टिर्गतिः चित्रा विलासे सस्मितं वचः' इति लक्षणलक्षिताः क्रीडाः, तैः उपहसितः = हास्यास्पदीकृतः, रतेः = कामदेवप्रियायाः, विभ्रमः = शृङ्गारादिविलासः, येन सः तस्मिस्तथोक्ते। लावण्यवति = सौन्दर्यातिशयसम्पन्ने, विनयवति—विनयः = वल्लभागमने आसनात् उत्थानादिरूपः, तद्वति = तद्युक्ते, अन्वयवति = सत्कुलप्रसूते, हृदयहारिणि = चित्तस्य आकर्षणविधायिनि, तादृशे अवरोधजने = स्त्रीसमूहे, सत्यपि = विद्यमानेऽपि, सः = राजा शूद्रकः, कदाचित् = जातुचित् समये, सङ्गीतकप्रसङ्गेन = गीतवाद्यादिना, 'दिवसमनैषीत्' इत्यत्र तृतीयान्तपदेनान्वयः, एवमन्यत्र सम्बन्धः योजनीयः। सङ्गीतकं विशिनष्टि—अनवरतदोलायमानरत्नवलयः—अनवरतम् = अजस्रम्, दोलायमानः = दोलावत् सञ्चलितः, वादने हस्तसञ्चलितः, रत्नवलयः = मणि-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

खचितकङ्कणः, यस्य सः तादृशः । पुनः, घर्घरिकास्फालनं—घर्घरिका = वाद्यविशेषः, तस्याः आस्फालनम् = वादनम्, तेन उत्पन्नं यत् प्रकम्पः, तेन झणझणायमानौ मणिकर्णपूरौ यस्य सः तादृशः । स्वयम् = आत्मना, आरब्ध-मृदङ्गवाद्यः = मुरजवादनं व्यापारं येन सः, एतादृशसङ्गीतविद्याप्रयोगेण दिवस-मनैषीत् । एवं कदाचित्, अविरलविमुक्तशरासार-शून्यीकृतकाननः—अविरलं = निरन्तरं, यथा तथा विमुक्ताः = प्रक्षिप्ताः, ये शराः, त एव आसाराः = महावृष्टयः, तैः वाणवर्षणैः शून्यीकृतम् = आखेटपशुभिः रिक्तीकृतम्, काननं = वनप्रदेशम्, येन सः तादृशः, एतादृशेन मृगयाव्यापारेण = आखेटक्रियया, दिवसमनैषीत् । कदाचित्, आबद्धविदग्धमण्डलः—आबद्धं = आरचितम्, विदग्धानां = विद्वद्जनानां, मण्डलम् = समूहः, येन सः तादृशः सन्, काव्य-प्रबन्धरचनेन —काव्यानि = दृश्यश्रव्यानि, तानि प्रबन्धाः = कथाः, तेषां रचनेन = निर्माणेन, दिवसमनैषीत् = नीतवान् । कदाचित् तु, शास्त्रालापेन = वेद-शास्त्राभ्यासेन, दिवसमनैषीत् । कदाचित् आख्यानकाख्यायिकेतिहासपुराणा-कर्णनेन – आख्यानकम् = अमृतमन्थनादिकमितिवृत्तम्, आख्यायिका = गद्य-काव्यविशेषः, इतिहासः = पुरावृत्तम् – रामायणमहाभारतादिकम्, पुराणं = श्रीमद्भागवतादिकम्, तेषाम् आकर्णनेन = श्रवणव्यापारेण, दिवसमनैषीत् । कदाचित्, आलेख्यविनोदेन = चित्रकर्मक्रीडया, कदाचिद्वीणया = कदाचित् वीणावादनया तच्छ्रवणेन वा, कदाचित् दर्शनागतमुनिजनचरणशुश्रूषया—राजानं विलोकनार्थमागता ये मुनिजनाः = तपोधनाः, तेषां पादसेवाकर्मणा, कदाचित्, अक्षरच्युतकमात्राच्युतकबिन्दुमतीगूढचतुर्थपादप्रहेलिकाप्रदानादिभिः—अक्षरच्यु-तकः—अक्षरः = वर्णः, च्युतः = रहितः (लुप्तः), यस्मिंस्तत्, तदेव अक्षर-च्युतकम्; यथा—'कूजन्ति कोकिलाः साले' इत्यत्र रसाले इति वक्तव्ये रश्च्युतः तेन वृक्षे इत्यर्थः, रसाले इत्यस्य आम्रवृक्ष इत्यर्थः, मात्राच्युतकम्—मात्रा = वर्णाऽवयवः, च्युताः = पतिताः, यस्मिन् तत्, तदेत्रं यथा – 'मूलस्थितमधः कुर्वन्पात्रैर्जुष्टो गताऽक्षरैः । विटः सेव्यः कुलीनस्य तिष्ठतः पथिकस्य सः' ॥ अत्र 'विट'पदात् इकारमात्रायां च्युतायां 'वट'रूपस्यार्थस्य प्रतीतिः । बिन्दुमती = पद्याऽक्षरसंख्यया बिन्दुमात्रस्थापनेन तत्तदक्षरोपलब्धिः;

तत्पद्यं यथा—'त्रिनयनचूडारत्नं मित्रं सिन्धोः कुमुद्वतीबन्धुः ।
अयमुदयति घुसृणाऽरुणरमणीवदनोपमश्चन्द्रः' ॥

गूढचतुर्थपादः—गूढः = गुप्तः, चतुर्थः = तूर्यः, पादः = चरणः, यस्मिन् सः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तथोक्तः। आद्ये पादत्रये एव यत्र चतुर्थपादस्याक्षराः गूढाः स गूढचतुर्थपादः। तदुदाहरणं यथा—

'न मज्जति क्वचिद्दोषे, प्रीणाति जगतो मनः।
य एकः स परः श्रीमान्, चिरं जयति सज्जनः'॥

अत्र चतुर्थपादाक्षराः (चिरं जयति सज्जनः) पादत्रये निगूढाः।

प्रहेलिका = श्लेषे सति यत्र विशेष्यस्यानभिधानं सा प्रहेलिका। सा च द्विविधा—शाब्दी आर्थी च। द्वयोरप्युदाहरणं यथा—

'तरुण्यालिङ्गितः कण्ठे नितम्बस्थलमाश्रितः।
गुरूणां सन्निधानेऽपि कः कूजति मुहुर्मुहुः'॥

एतासां प्रदानादिभिः = समर्पणादिभिः, वनितासम्भोगसुखपराङ्मुखः—वनितानां = स्त्रीणां, यः सम्भोगः = रतिक्रियादिरूप उपभोगः, तस्य यत् सुखम् = आनन्दः, तस्मिन् पराङ्मुखः = विमुखः सन्, सुहृत्परिवृतः—सुहृद्भिः = मित्रगणैः, परिवृतः = परिवेष्टितः सन्, दिवसम् = दिनं, अनैषीत् = यापितवान्। यथैव = येन प्रकारेण एव, दिवसम् = दिनं, तथैव = दिवसमिव एव, आरब्धक्रीडापरिहासचतुरैः—आरब्धाः = प्रारब्धाः, ये विविधाः क्रीडाः = परिहासाश्च, तेषु चतुराः = निपुणाः, तैः, सुहृद्भिः = मित्रैः, उपेतः = युक्तः सन्, निशां = रात्रिम्, अनैषीत् = नीतवान्।

व्याख्या (हिन्दी)—वह राजा शूद्रक किसी समय संगीत के प्रसङ्गवश रत्नखचित मणिवलय के दोलनपूर्वक घर्घरी वाद्ययन्त्र के बजाने से, कम्पन से झनझनाते हुए कर्णालङ्कारों से, स्वयं मुरज बजाते हुए, महल में अपने रूप और विलास के द्वारा रति के मन में भी विभ्रम उत्पन्न करने वाली लावण्यवती, विनयवती, हृदयहारिणी स्त्रीजनों के होते हुए भी अपना पूर्ण दिवस बिताया करता था। इसी प्रकार कभी अविरल शरवर्षा द्वारा आखेट-पशुओं से सम्पूर्ण वनप्रदेश को सूना बनाते हुए आखेटक्रीडा द्वारा, कभी काव्य-प्रबन्धादि रचनापटु चतुर जनों को एकत्र कर काव्य-प्रबन्धादि रचना द्वारा, कभी शास्त्रज्ञों विद्वानों के साथ विविध शास्त्रों पर व्याख्यान सुनता हुआ, कभी आख्यानक, आख्यायिका, इतिहास-पुराणादि को सुनाता हुआ, कभी चित्रकला से मनोविनोद करता हुआ, कभी वीणावादन द्वारा, कभी राजदर्शन के लिए आये हुए मुनिजनों की चरणसेवा द्वारा, कभी अक्षरच्युतक, मात्रा-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

च्युतक, बिन्दुमती, गूढचतुर्थपाद, प्रहेलिका आदि सभासदों को पूर्ति हेतु प्रदान करके, स्त्री-उपभोगजन्य सुख से पराङ्मुख रहता हुआ भी अपने सन्मित्रों से घिरा हुआ दिवस को व्यतीत करता था। इसी प्रकार दिवस की ही भाँति विविध क्रीडा और परिहासादि का आरम्भ कर सन्मित्रों के साथ विनोद करता हुआ रात्रि भी व्यतीत करता था।

विशेष—इस गद्यखण्ड में शूद्रक की दृढ़ इच्छाशक्ति और वासना-पराङ्मुखता का दिग्दर्शन कराते हुए उसकी कलाप्रियता, संगीतप्रियता, शास्त्रज्ञता तथा साधुजनभक्ति की सहृदयता का वर्णन किया गया है। इनमें मनोरञ्जन के विविध साधनों क्रीडाओं एवं कलाओं का भी वर्णन किया गया है।

(५) एकदा तु नातिदूरोदिते नव–नलिन–दलसम्पुट–भिदि किञ्चिन्मुक्त–पाटलिम्नि भगवति सहस्रमरीचिमालिनि, राजानमास्थानमण्डपगतमङ्गनाजनविरुद्धेन वामपार्श्वावलम्बिना कौक्षेयकेण सन्निहितविषधरेव चन्दनलता भीषणरमणीयाकृतिः, अविरलचन्दनानुलेपनधवलित–स्तनतटा उन्मज्जदैरावतकुम्भमण्डलेव मन्दाकिनी चूडामणिसंक्रान्तप्रतिबिम्बच्छलेन राजाज्ञेव मूर्तिमती राजभिः शिरोभिरुह्यमाना, शरदिव कलहंसधवलाम्बरा, जामदग्न्यपरशुधारेव वशीकृतसकलराजमण्डला, विन्ध्यवनभूमिरिव वेत्रलतावती, राज्याधिदेवतेव विग्रहिणी, प्रतीहारी समुपसृत्य क्षितितल–निहित–जानु–करकमला सविनयमब्रवीत्।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने मुख्य कथा की अवतारणा हेतु राजदरबार में उपस्थित हुई प्रतीहारी का साङ्गोपाङ्ग स्वरूप चित्रण किया है।

व्याख्या(संस्कृत)—एकदा = एकस्मिन् दिवसे, प्रतीहारी = दौवारिकी, राजानं समुपसृत्य = समीपमागत्य, सविनयं=नम्रतापूर्वकम्, अब्रवीत् = अवोचत् इत्यन्वयः। सम्प्रति सूर्यवर्णनच्छलेन उक्त्यवसरमाह—भगवति=ऐश्वर्यशालिनि, सहस्रमरीचिमालिनि = सूर्ये इत्यर्थः, नातिदूरोदिते—नातिदूरं = नातिविप्रकृष्टं, अल्पकालमात्रमिति, उदिते = उद्गते सति, नवनलिनदलसम्पुटभिदि—नवानि = नूतनानि, यानि नलिनानि = कमलानि, तेषां दलानि =

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

पत्राणि, तेषां सम्पुटाः = मुकुलाः, तान् भिनत्ति = निवारयति, इति नवनलिन-दलसम्पुटभित्, तस्मिन् = नवकमलदलविकासके, किञ्चिन्मुक्तपाटलिनि — किञ्चित् = यथा तथा, मुक्तः = त्यक्तः, पाटलिमा = श्वेतरक्तभावः, येन तस्मिन्प्रति, आस्थानमण्डपगतम् = सभाभवनप्राप्तं, राजानं = भूपालं, शूद्रकम्, अङ्गनाजनविरुद्धेन = स्त्रीजनविरुद्धेन, वामपार्श्वाऽवलम्बिना = दक्षिणेतरभागा-वलम्बनशीलेन, कौक्षेयकेण = खड्गेन, सन्निहितविषधरेव —सन्निहितः = निकटस्थितः, विषधरः = सर्पः, यस्याः सा तादृशी चन्दनलता = श्रीखण्डवल्ली, तामिव, भीषणरमणीयाऽऽकृतिः — भीषणा = भयङ्करी, रमणीया = मनोहरा, आकृतिः = आकारः, यस्याः सा तादृशी, अविरलचन्दनानुलेपन — अविरलं = घनतरं, यत् चन्दनस्य = श्रीखण्डस्य, अनुलेपनं = उद्वर्तनम्, तेन धवलितस्तन-तटा — धवलितं = शुक्लीकृतं, स्तनतटं = कुचप्रान्तम्, यस्याः सा, उन्मज्ज-दैरावतकुम्भमण्डलेव — उन्मज्जत् = उन्मज्जनं कुर्वत्, जलं प्रविशत्, ऐरावतस्य = इन्द्रगजस्य, कुम्भमण्डलं = शिरःस्थमांसपिण्डः, यस्यां सा तादृशी, मन्दाकिनी = शुभ्रजला वियद्गङ्गा, तदिव, चूडामणिसंक्रान्तबिम्बच्छलेन — चूडामणिषु = सन्निहितराजमस्तककिरीटरत्नेषु, संक्रान्तं = पतितं, यत् प्रतिबिम्बं = प्रतीहार्य्याः प्रतिच्छाया, तस्याः छलेन = व्याजेन, राजाज्ञेव — राज्ञः = शूद्रकस्य, आज्ञा = आदेशः, इव, मूर्तिमती = शरीरधारिणी, राजभिः = नृपैः, शिरोभिः = मस्तकैः, ऊह्यमाना = धार्यमाणा, शरदिव = शरदृतु इव, कलहंसधवलाम्बरा — कलहंसैः = कादम्बैः, धवलं = शुभ्रम्, अम्बरं = आकाशं, यस्यां सा, पक्षान्तरे कलहंस इव धवलं = शुभ्रं, अम्बरं = वस्त्रं, यस्याः सा इव, जामदग्न्यपरशुधारेव — जामदग्न्यस्य = परशुरामस्य, परशुः = कुठारः, तस्य धारा = अग्रभागः इव, वशीकृतसकलराजमण्डला — वशीकृतं = स्वाऽधीनीकृतम्, सकलं राजमण्डलं = भूपसमूहं, यया सा, विन्ध्यवनभूमिरिव — विन्ध्याचलकाननस्य, भूमिः = पृथिवी इव, वेत्रलतावती = वेत्रयष्टियुक्ता, राज्याधिदेवतेव — राज्यस्य = राष्ट्रस्य शासनस्य, अधिदेवता = अधिष्ठात्री देवी इव, विग्रहिणी = शरीरधारिणी, प्रतीहारी = द्वारपालिका, समुपसृत्य = समीपमागत्य, क्षितितलनिहितजानुकर-कमला — क्षितितले = भूमौ, निहितं = स्थापितं, जानुकरकमलं = अष्ठीवद्धस्त-पद्मम्, यया सा तादृशी सती, राजानं = भूपं शूद्रकं प्रति, सविनयं = सादरं, नम्रतापूर्वकम्, अब्रवीत् = उक्तवती ।

व्याख्या (हिन्दी)—एक दिन नये कमलपत्रों को विकसित करने वाले,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कुछ-कुछ लाली का त्याग किये हुए भगवान् सूर्य के कुछ दूर आकाश में उदित होने पर प्रातःकाल में सभामण्डप में स्थित राजा के पास स्त्रीजन के विरुद्ध और वामपार्श्व में लटकते हुए तलवार से सर्प की निकटवर्तिनी चन्दनलता के समान भयङ्कर और मनोहर आकृति वाली, चन्दनानुलेप से सफेद स्तन-तटों वाली, मस्तकपिण्ड ऊपर उठाये हुए स्नान करते ऐरावत हाथी से युक्त आकाशगंगा सदृश, शिर के मुकुटरत्नों में पड़े हुए प्रतिबिम्ब के नहाने से अन्य राजाओं द्वारा शिरोधार्य मूर्तिमती राजाज्ञा सदृशी, हंसों से सफेद आकाश वाली शरद् ऋतु के समान हंस के समान सफेद वस्त्र धारण की हुई, परशुराम के फरसा के समान समस्त राजसमूह को अपने वश में करने वाली वेत्रलता से युक्त विन्ध्याटवी के समान वेत्रयष्टि धारण की हुई, शरीरधारिणी राज्य की अधिष्ठात्री देवी के समान द्वारपालिका राजा के समीप पहुँचकर पृथ्वी पर घुटने और करकमल को टेक कर नम्रतापूर्वक निवेदन किया।

विशेष—सम्पूर्ण गद्यखण्ड में प्रतीहारी के वेश-भूषा व प्रभाव वर्णन में पूर्णोपमा, उत्प्रेक्षा और श्लेष तथा रूपक अलंकारों की छटा दर्शनीय है।

(६) अशेषजनभोग्यतामुपनीतयाप्यसाधारणया राजलक्ष्म्या समालिङ्गितम्, अपरिमितपरिवारजनमप्यद्वितीयम्, अनन्त-गज-तुरग-साधनमपि खड्गमात्रसहायम्, एकदेशस्थितमपि व्याप्तभुवनमण्डलम्, आसने स्थितमपि धनुषि निषण्णम्, उत्सादिताशेषद्विषदिन्धनमपि ज्वलत्प्रतापानलम्, आयतलोचनमपि 'सूक्ष्मदर्शनम्–' महादोषमपि सकलगुणाधिष्ठानम्, कुपतिमपि कलत्रवल्लभम्, अविरत-प्रवृत्त-दानमप्यमदम्, अत्यन्तशुद्ध-स्वभावमपि कृष्णचरितम्, अकरमपि हस्तस्थित-सकल-भुवनतलं राजानमद्राक्षीत्।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने मातङ्गकुमारी द्वारा राजा शूद्रक के दर्शन का वर्णन करते हुए राजा शूद्रक के प्रभावशाली व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है।

व्याख्या (संस्कृत)—अशेषजनभोग्यताम्—अशेषाः = समस्ताः, ये जनाः = लोकाः, तेषां भोग्यताम् = उपभोगयोग्यताम्, उपनीतया = प्राप्तया अपि, सर्वसामान्ययाऽपि, तथाऽपि असाधारणया = असामान्यया, एतादृश्या राजलक्ष्म्या = भूपश्रिया, समालिङ्गितदेहम् = समाश्लिष्टशरीरम्, अपरिमितपरिवारजन-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

मप्यद्वितीयम्=असंख्यातपरिजनलोकमपि, अद्वितीयम्=द्वितीयजनरहितम्, अनन्तगजतुरगसाधनमपि—अनन्ता:=असंख्या:, गजा:=हस्तिन:, तुरगा:=अश्वा:, त एव साधनानि=उपकरणानि, यस्य स: तम्, अपि, खड्गमात्रसहायम्—खड्गमात्रम्=करवालमात्रं, सहाय:=सहचर:, यस्य स: तादृशम्, एकदेशस्थितमपि—एकदेश:=एकप्रदेश: (समानमण्डपादिति भाव:), तस्मिन् स्थितम्=निषण्णम् अपि, व्याप्तभुवनमण्डलम्—व्याप्तं=व्याप्तिविषयीकृतम्, भुवनमण्डलम्=पृथ्वीलोकम्, येन तम् तादृशम्, आसने=सिंहासने, स्थितम्=उपविष्टम्, अपि, धनुषि=चापे, निषण्णं=स्थितम् इव, उत्सादिताशेषद्विषदिन्धनमपि—उत्सादितानि=व्यापादितानि, निर्वापितानि, अशेषेण द्विषद:=शत्रव: इव, इन्धनानि=काष्ठानि, येन तं तादृशम्, ज्वलत्प्रतापानलम्—ज्वलन्=दहन्, प्रताप:=तेज: एव, अनल:=अग्नि:, यस्य तम्, आयतलोचनमपि—आयते=विशाले, लोचने=नेत्रे, यस्य तम् अपि, सूक्ष्मदर्शनम्—सूक्ष्मं=अध्यात्मविषयम्, दर्शनं=ज्ञानम्, यस्य तम्, महादोषमपि—महान्तौ=दीर्घौ, दोषौ=बाहू, यस्य तम् अपि, सकलगुणाधिष्ठानम्—सकला:=समस्ता:, ये गुणा:=दयादाक्षिण्यादय:, तेषाम् अधिष्ठानम्=आधारस्थलम्, कुपतिमपि—कु:=पृथ्वी, तस्या: पति:=स्वामी सन्, अपि कलत्रस्य=भार्याया:, वल्लभ:=प्रिय:, तम्, अविरतप्रवृत्तदानमप्यमदम्—अविरतं=निरन्तरम्, यथा तथा प्रवृत्तं, दानं=वितरणम्, यस्य तं तथापि, अमदं=गर्वरहितम्, अत्यन्तशुद्धस्वभावमपि कृष्णचरितम्—अत्यन्तं=सातिशयं, शुद्ध:=निर्मल:, स्वभाव:=प्रकृति:, यस्य तम्, तथाऽपि, कृष्णं=मलिनं, श्यामम्, चरितम्=चरित्रम्, इति विरोधाभास:, परिहारस्तु कृष्ण:=वासुदेव:, तस्य चरितमिव चरितं=आचार:, यस्य स: तम्। अकरं=हस्तरहितम्, अविद्यमान: करो यस्य तम् अपि, हस्तस्थितभुवनतलं—हस्ते=करे, स्थितं=विद्यमानं, भुवनतलं=भूमण्डलम्, यस्य स: तम्, अत्रापि विरोध:; तत्परिहारस्तु—अकरम्=अविद्यमान:, कर:=अन्यस्मै दीयमानो भाग:, यस्य स: राजमण्डलाऽऽधिपतित्वादिति, अत्र विरोधाभासोऽलङ्कार:। तादृशं राजानं=भूपालं शूद्रकम्, अद्राक्षीत्=दृष्टवती।

व्याख्या (हिन्दी)—समस्त मनुष्यों के उपभोग का विषय होने पर भी असामान्य राजलक्ष्मी से आलिङ्गित शरीर वाले, असंख्य परिजनों के रहने पर भी अद्वितीय-सादृश्यरहित, असंख्य हाथी-घोड़े आदि साधनों के होने पर भी खड्गमात्र की सहायता लेने वाले, एक स्थान में रहकर भी भुवनमण्डल

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

को व्याप्त करने वाले, सिंहासन में बैठकर भी धनुष पर विद्यमान (धनुषमात्र का सहारा लेने वाले), समस्त शत्रुरूप इन्धन (लकड़ी) को जलाकर नष्ट करने पर भी जलते हुए प्रताप रूप अग्नि वाले, विशाल नेत्रों वाले होकर भी सूक्ष्मदर्शन (अध्यात्म विषयक ज्ञान) वाले, महादोष (दीर्घबाहुयुक्त) होकर भी सम्पूर्ण गुणों के आधार, कुपति (कुत्सित स्वामी, परिहार—पृथ्वी के स्वामी) होकर भी, पत्नियों के प्यारे, निरन्तर दान (मदजल, परिहार–वितरण) करने पर भी अमद (मदजल रहित, परिहार–गर्वरहित), अतिशय शुद्ध स्वभाव वाले होकर भी कृष्णचरित (विरोध—मलिनचरित, परिहार–कृष्ण=वासुदेव के समान चरित्र वाले), अकर=कर रहित (विरोध–हाथ रहित, परिहार—सर्वस्वतन्त्र होने से किसी दूसरे राजा को देय भाग रहित) होते हुए भी सम्पूर्ण भूतल को अपने हाथ में (अपने शासन में) रखने वाले ऐसे राजा शूद्रक को देखा ।

विशेष––सम्पूर्ण गद्यखण्ड में श्लेषानुप्राणित विरोधाभास अलङ्कार की छटा दर्शनीय है । कहीं-कहीं परम्परित रूपक का भी दर्शन होता है । राजा शूद्रक के प्रताप, समृद्धि और उदारता का विरोधाभास अलंकार द्वारा सुन्दर चित्र उपस्थित किया गया है ।

(७) शरदमिव विकसित-पुण्डरीक-लोचनाम्, प्रावृषमिव घन-केशजालाम्, मलयमेखलामिव चन्दनपल्लवावतंसाम्, नक्षत्रमालामिव चित्रश्रवणा-भरण-भूषिताम्, श्रियमिव हस्तस्थित-कमलशोभाम्, मूर्च्छामिव मनोहारिणीम्, अरण्यभूमिमिव रूपसम्पन्नाम्, दिव्ययोषितमिवाकुलीनाम्, निद्रामिव लोचनग्राहिणीम्, अरण्यकमलिनीमिव मातङ्गकुलदूषिताम्, अमूर्त्तामिव स्पर्शवर्जिताम्, आलेख्यगतामिव दर्शनमात्रफलाम्, मधुमासकुसुम-समृद्धिमिव अजातिम्, अनङ्ग-कुसुम-चापलेखामिव मुष्टिग्राह्यमध्याम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम्, अचिरोपरूढयौवनाम्, अतिशयरूपाकृतिम्, अनिमिष-लोचनो ददर्श ।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में बाणभट्ट ने महाराज शूद्रक के द्वारा वह मातङ्गकुमारी किस प्रकार देखी गयी, इसका विस्तृत वर्णन किया है ।

व्याख्या (संस्कृत)—शरदम्=घनाऽत्ययम् इव, विकसितपुण्डरीकलोचनाम्—विकसितानि=प्रफुल्लानि, पुण्डरीकानि=श्वेतकमलानि एव,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

लोचनानि = नेत्राणि, यस्याः सा ताम्, प्रावृषमिव = वर्षाकालम् इव, घन-केशजालाम्—घनाः = मेघाः एव, केशजालानि = शिरोरुहसमूहाः, यस्याः सा ताम, मलयमेखलामिव—मलयस्य = दाक्षिणात्यपर्वतविशेषस्य, मेखलाम् = मध्यभागम्, इव, चन्दनपल्लवावतंसाम्—चन्दनपल्लवाः = श्रीखण्डकिसलयानि एव, अवतंसः = भूषणं, यस्याः सा ताम्, नक्षत्रमालामिव = तारकापंक्तिः इव, चित्रश्रवणाभरणभूषिताम्—चित्रश्रवणे = चित्राश्रवणनक्षत्रे एव, आभरणे = भूषणे, ताभ्यां भूषिताम् = अलङ्कृताम् (नानाविधकुण्डलादिकर्णालङ्कारैः अलङ्कृताम्), श्रियमिव = लक्ष्मीम् इव, हस्तस्थितकमलशोभाम्—हस्तस्थिता = करस्थिता, कमलेन = पद्मेन, शोभा = कान्तिः, यस्याः सा ताम्, मूर्च्छामिव = मोहमिव, मनोहारिणीम् = चैतन्यलोपकारिणीम् (सौन्दर्येण मनोहराम्), अरण्यभूमिमिव = वनभुवम् इव, अक्षतरूपसम्पन्नाम्—अक्षतं = केनाप्यसम्भुक्तं, यद् रूपं = लावण्यं, तेन सम्पन्नाम् (काननपक्षे अक्षतरुभिः = रुद्राक्षवृक्षैः यद्वा विभीतकवृक्षैः, उपसम्पन्नां = संयुक्ताम्), दिव्ययोषितामिवाकुलीनाम्—दिव्या = स्वर्गलोकसम्बन्धिनी, या योषित् = स्त्री, तामिव, अकुलीनाम् = अन्त्यज-त्वान्नीचकुलोत्पन्नाम् (पक्षे—कौ = पृथिव्यां, लीना = स्थिता, या न भवति सा अकुलीना तामिव, देवयोनीनां पृथ्वीतले स्पर्शो न भवतीति पौराणिकम्), निद्रामिव = प्रमीलामिव, लोचनग्राहिणीम् = सौन्दर्यातिशयेन कामुकानां नेत्रा-कर्षिणीम् (निद्रापक्षे – अविसङ्कोचविधानेन निमेषोन्मेषावरोधिनीम्), अरण्य-कमलिनीमिव = वनपद्मिनीमिव, मातङ्गकुलदूषिताम्—मातङ्गनामकचाण्डाला-न्वयेन तत्कुलोत्पन्नत्वेन, दूषिताम् = निन्दिताम् (पक्षे—मातङ्गकुलेन = हस्ति-यूथेन, दूषितां = विमथिताम्), अमूर्त्तामिव = अशरीरिणीमिव, स्पर्शवर्जिताम् = शरीरस्पर्शवर्जिताम्, आलेख्यगतामिव = चित्रस्थितां पुत्रिकामिव, दर्शन-मात्रफलाम्—चाण्डालत्वेन सम्भोगाभावात् केवलावलोकनमेव, फलं = प्रयोजनं, यस्याः सा ताम् (पक्षे—आकृत्यभावेन तत्संश्लेषाद्यसम्भवात् तद्दर्शनमात्र-फलम्), मधुमासकुसुमसमृद्धिमिव—मधुमासस्य = वसन्तसमयस्य, कुसुम-समृद्धि = पुष्पसम्पत्तिमिव, अजातिम्—न विद्यते जातिः = मन्वादिपरिगणित-ब्राह्मणत्वादिः, यस्यां सा ताम् (पक्षे न विद्यते जातिः = मालती, यस्यां सा ताम्—वसन्ते मालतीपुष्पाभावात्), अनङ्गकुसुमचापलेखामिव—अनङ्गस्य = कन्दर्पस्य, कुसुमचापस्य = पुष्पधनुषः; या लेखा = लता, तामिव, मुष्टिग्राह्य-मध्याम्—मुष्टिना = सम्पीडिताङ्गुलिना, ग्राह्यः = ग्रहीतुं शक्यः; मध्यः

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

=कटिप्रदेशः, यस्याः सा ताम्, यक्षाधिपलक्ष्मीमिवालकोद्भासिनीम्—यक्षाधिपस्य=गुह्यकेश्वरस्य कुवेरस्य, लक्ष्मीः=सम्पत्, तामिव अलकैः=चूर्णकुन्तलैः, उद्भासते=शोभते, इत्येवं शीला या सा ताम् (पक्षे—अलकानामिकायां पुर्याम् उद्भासते=शोभते, या सा ताम्), अचिरोपरूढयौवनाम्—अचिरं=शीघ्रम्, उपारूढं=उपगतं, यौवनम्=तारुण्यं, यस्याः सा ताम्, अतिशयरूपाकृतिम्=अतिशयरूपं लावण्यम्, यस्याः सा एवम्भूता आकृतिः=स्वरूपं, यस्याः सा ताम्, अनिमिषलोचनः—निमेषोन्मेषवर्जिते लोचने=नेत्रे, यस्य एवम्भूतः राजा शूद्रकः, ददर्श=अवलोकयामास।

व्याख्या (हिन्दी)—वह चाण्डालकन्या अपने बड़ी-बड़ी विकसित श्वेत कमल के समान प्रफुल्लित नयनों के कारण साक्षात् शरद् ऋतु के समान, घने काले बादलों के समान घने केशजाल से आवृत वर्षा ऋतु के समान, चन्दनपल्लव के आभूषणों से सजी चन्दनवन से ढँकी मलयाचलमेखला के समान, चित्रा-श्रवण आदि तारासमूह से अलंकृत नक्षत्रमाला की तरह विविध कर्णाभूषण धारण किये हुए, लक्ष्मी की भाँति हस्तस्थित कमल से शोभायमान, अपने रूप से दर्शकों के मन को मूर्च्छित करती हुई साक्षात् मूर्च्छा के समान, अभुक्त सौन्दर्य से भरी-पूरी किसी भी व्यक्ति द्वारा अगम्य रुद्राक्ष-वनभूमि के समान, दिव्यलोक की सुन्दरियों के समान अकुलीन (स्वर्गीय—अथवा कुलीन लोगों के उपभोग के अयोग्य), नींद के समान दर्शकों के नेत्रों को ग्रहण कर लेने वाली, हस्तिसमूह द्वारा मर्दित वनकमलिनी की भाँति मातङ्ग कुल में जन्म लेने से दूषित, निराकार की मूर्ति की भाँति स्पर्श शून्य, चित्रगत की भाँति केवल दर्शनयोग्या, जातीपुष्प (मालती) रहित वदान्त कुसुमसमृद्धि के समान जातिरहित, कामदेव के धनुष की पुष्पलता के समान मुष्टिग्राह्य कटिदेश वाली, अलकापुरी में शोभायमान कुबेर की राजलक्ष्मी के समान अलकों (चूर्णकुन्तलों) से शोभायमान, शीघ्र ही नवयौवन प्राप्त अतिशय रूप और आकृति वाली थी। इस प्रकार अतिशय रूप-सौन्दर्यसम्पन्न उस कन्या को राजा शूद्रक ने अपलक नेत्रों से देखा।

विशेष—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने अङ्ग-प्रत्यङ्ग वर्णन में अपनी कविप्रतिभा को पूर्णोपमा और श्लेषोपमा द्वारा निखार दिया है। अनेक पौराणिक एवं शास्त्रीय मान्यताओं को भी उपमान रूप में सजीव कर दिया है।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

(८) अस्ति पूर्वापर-जलनिधि-वेलावनलग्ना मध्यदेशालङ्कारभूता मेखलेव भुवः, वनकरिकुल-मदजल-सेक-संवर्द्धितैरतिविकच-धवल-कुसुमनिकरमत्युच्चतया तारा-गणमिव शिखरदेशलग्नमुद्वहद्भिः पादपै-रुपशोभिता, मदकल-कुररकुल-दश्यमान-मरिचपल्लवा, करिकलभ-करमृदित-तमालकिसलयामोदिनी मधुमदोपरक्त-केरली-कपोल-च्छविना सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तक-रस-रञ्जितेनेव पल्लवचयेन सञ्छादिता।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने कथा का सूत्र अपने हाथों से वैशम्पायन शुक को सौंपते हुए सर्वप्रथम उसके मुख से जन्मस्थली विन्ध्याटवी का चित्ताकर्षक वर्णन कराया है। यथा—

व्याख्या (संस्कृत)—अस्ति इति पदस्य दूरस्थेन विन्ध्याटवी नामेति कर्तृपदेन सह सम्बन्धः। इह प्रथमान्तपदानि विन्ध्याटवीविशेषणानि बोध्यानि। पूर्वापरजलनिधिवेलावनलग्ना—पूर्वश्चापरश्च पूर्वापरौ = प्राच्यप्रतीच्यदिग्वर्तिनौ, यौ जलनिधी = समुद्रौ, तयोः यद्वेलावनं = तटविपिनं, तावत्पर्यन्तम् अवलग्ना = सम्बद्धा, मध्यदेशाऽलङ्कारभूता—मध्यदेशस्य = ('हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्ये यत्प्राग्विनशनादपि। प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः'॥ इति मनु-लक्षितस्य) मध्यवर्तिस्थानस्य, अलङ्कारभूता = अनेकप्रकारवृक्षलतासिद्धा-श्रमादिपूर्णत्वेन भूषणस्वरूपा, भुवः = मेदिन्याः, मेखला = रशना इव ('स्त्री-कट्यां मेखला काञ्ची सप्तकी रशना तथा' इत्यमरः), वनकरिकुलमदजल-सेकसंवर्द्धितैः—वने = अरण्ये, ये करिणः = हस्तिनः, तेषां यानि कुलानि = यूथानि, तेषां मदजलस्य = दानवारिणः, सेकेन = सिञ्चनेन, संवर्द्धितैः = वृद्धिमापादितैः, अतिविकचधवलकुसुमनिकरमत्युच्चतया—अतिविकचानि = अतिशयविकसितानि, धवलानि = शुक्लानि, यानि कुसुमानि = पुष्पाणि, तेषां निकरं = समूहम्, अतः अत्युच्चतया = अतिशयोन्नतत्वेन, तारागणमिव शिखर-देशलग्नमुद्वहद्भिः पादपैरुपशोभिता—तारागणं = नक्षत्रसमूहः, तमिव शिखर-देशलग्नम् = शृङ्गप्रदेशस्थितम्, उद्वहद्भिः = धारयद्भिः, पादपैः = वृक्षैः, उप-शोभिताः = शोभां प्रापिताः, मदकलकुररकुलदश्यमानमरीचपल्लवा—मदेन = मत्तभावेन, कलाः = मनोहराः, ये कुरराः = उत्क्रोशाः, मत्स्यनाशनाः, तेषां कुलं = समूहः, तेन दश्यमानानि = भक्ष्यमाणानि, मरीचपल्लवानि = कोल-किसलयानि, यस्यां सा ('मरीचं कोलकं कृष्णभूषणं धर्मपत्तनम्' इत्यमरः), करिकलभकरमृदिततमालकिसलयामोदिनी—करिणां = हस्तिनां, ये कलभाः =

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

शावकाः, तेषां कराः = शुण्डादण्डाः, तैः मृदितानि = सञ्चूर्णितानि, यानि तमालकिसलयानि = तापिच्छपल्लवानि, तैः आमोदिनी = सौरभयुक्ता, मधुमदोपरक्तकेरलीकपोलछविना—मधुः = मद्यं ('मधु मद्यं पुष्परसे' इत्यमरः), तस्य यो मदः = मत्तता, तेन उपरक्तः = अरुणः, यः केरली = केरलदेशोद्भवा नारी, तस्याः कपोलं = गण्डस्थलं, तस्येव छविः = कान्तिः, यस्याः सा, सञ्चरद्वनदेवताचरणालक्तकरसरञ्जितेनेव—सञ्चरन्त्यः = सञ्चरणं कुर्वन्त्यः, याः वनदेवता = काननदेव्यः, तासां चरणेषु = पादेषु, योऽलक्तकरसः = लाक्षाद्रवः, तेन रञ्जितेन = रक्तीकृतेन, इव पल्लवचयेन = किसलयसमूहेन, सञ्छादिता = आच्छादिता ।

व्याख्या (हिन्दी)—पूर्व और पश्चिम समुद्र की तीरभूमि के वनों से सम्बद्ध, मध्यदेश की शोभा को बढ़ाने वाली आभूषणरूपा, पृथ्वी की मेखला (करधनी) की तरह प्रतीत होने वाली, विन्ध्याटवी (विन्ध्य पर्वत की वनभूमि) है (इस पद का पीछे तक सम्बन्ध जुड़ा हुआ है); जो जंगली हाथियों के मदजल से ही सींच कर बढ़ाये गये अनेक प्रकार के वृक्षों से सुशोभित थी, जिनकी चोटियों पर खिले हुए श्वेत पुष्पों के समूह ऊँचाई के कारण तारागण के समान प्रतीत हो रहे थे। वहाँ कहीं सुन्दर बगुलों की मत वाली टोलियाँ के पत्ते नोच-नोच कर खाती थीं, कहीं हाथियों के बच्चों की सूँडों से मसले गये तमाल के पत्तों से मधुर सुगन्ध निकलती थी, कहीं मदिरा के नशे से लाल हुए केरल की स्त्रियों के कपोलों की भाँति लाल-लाल पल्लव छाये हुए थे जो वन में घूमने वाली वनदेवियों के पैरों की महावर से रंगे हुए-से प्रतीत होते थे।

विशेष—इस गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने शुक वैशम्पायन के मुख से विन्ध्यक्षेत्र की वनभूमि का आँखों देखा विवरण आलंकारिक संयोजना के साथ प्रस्तुत किया है। इसमें जात्युत्प्रेक्षा, क्रियोत्प्रेक्षा और लुप्तोपमा अलंकारों की छटा द्रष्टव्य है।

(९) प्रेताधिपनगरीव सदासन्निहितमृत्यु-भीषणा महिषाधिष्ठिता च, समरोद्यतपताकिनीव बाणासनारोपितशिलीमुखा विमुक्त-सिंहनादा च कात्यायनीव प्रचलितखड्गभीषणा रक्तचन्दनालङ्कृता च, कर्णीसुतकथेव सन्निहित-विपुलाचला शशोपगता च कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव प्रनृत्तनीलकण्ठा पल्लवारुणा च, अमृतमथनवेलेव श्रीद्रुमोपशोभिता

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

वारुणी-परिगता च, प्रावृडिव घनश्यामला अनेकशतह्रदालङ्कृता च, चन्द्रमूर्त्तिरिव सततमृक्षसार्थानुगता हरिणाध्यासिता च राज्यस्थितिरिव चमरमृग-बालव्यजनोपशोभिता समदगजघटा-परिपालिता च, गिरि-तनयेव स्थाणुसङ्गता मृगपतिसेविता च ।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि वाणभट्ट ने श्लेषानुप्राणित उपमा के आश्रय से विन्ध्य-वनभूमि की रमणीयता के साथ ही भयावहता का निरूपण किया है । यथा—

व्याख्या (संस्कृत)—प्रेताधिपनगरी इव—प्रेताधिपस्य = यमराजस्य, नगरी = यमपुरी इव, सदासन्निहितमृत्युभीषणा — सदा = सर्वदा, सन्निहितः = निकटस्थः, यो मृत्युः = मरणम्, तेन भीषणा = भयोत्पादिनी, महिषाधिष्ठिता— महिषेण = प्रेताधिपवाहनेन लुलायेन वा, अधिष्ठिता = कृतस्थितिः ('लुलायो महिषो वाहद्विषत्कासरसैरिभाः' इत्यमरः), च सा विन्ध्याटवी नाम इत्यस्य विशेषणम्, एवं परत्रापि । समरोद्यतपताकिनीव — समर = युद्धे, उद्यता = तत्परा, पताकिनी = ध्वजवाहिनी सेना इव, वाणासनारोपितशिलीमुखा — बाणानां यद् आसनं = धनुषः, तेषु = कार्मुकेषु, आरोपिताः = स्थापिताः, शिलीमुखाः = बाणाः, यया सा; विन्ध्याटवीपक्षे — वाणासु = नीलझिण्टीषु, असनेषु = सर्जकेषु, आरोपिताः = स्थापिताः, शिलीमुखाः = भ्रमराः, यस्यां सा । विमुक्तसिंहनादा च—विमुक्तः = त्यक्तः, सिंहनादः = सिंहस्य इव शब्दः-क्ष्वेडा, यया सा; पक्षे – विमुक्तः = त्यक्तः, सिंहैः = केसरिभिः, नादः = गर्जनध्वनिः, यस्यां सा । कात्यायनी इव = दुर्गा इव, प्रचलितखड्गभीषणा— प्रचलितः = सञ्चरितः, यः खड्गः = करवालः, तेन भीषणा = भयङ्करी, रक्त-चन्दनाऽलङ्कृता च—रक्तं=रुधिरम् एव, चन्दनं = श्रीखण्डद्रवः, तेन अलङ्कृता = भूषिता च; पक्षे—प्रचलिताः = सञ्चरिताः, ये खड्गाः = गण्डकाः, तैः भीषणा, रक्तचन्दनाऽलङ्कृता च—रक्तचन्दनैः = पत्राङ्गैः, अलङ्कृता = भूषिता च । कर्णीसुतकथेव सन्निहितविपुलाचला — कर्णीसुतस्य = चौर्यकला-प्रवर्त्तकस्य, कथा = उदन्तः इव, सन्निहितौ = समीपस्थितौ, विपुलाऽचलौ = विपुलाऽचलनामकौ सखायौ, यस्यां सा, शशोपगता च – शशेन = शशनामाम-मन्त्रिमुख्येन, उपगता = संयुक्ता च (पक्षे —सन्निहितविपुलाचला – सन्निहिताः = निकटवर्तिनः, विपुलाः = महान्तः, अचलाः = पर्वताः, यस्यां सा), कल्पान्तप्रदोषसन्ध्येव – कल्पान्तस्य = युगान्तस्य, यः प्रदोषः = रजनीमुखम्,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

तस्य सन्ध्या = सायंवेला, सा इव, प्रनृत्तनीलकण्ठा — प्रनृत्त: = कृतनृत्य:, नीलकण्ठ: = महादेव:, यस्यां सा, पल्लवाऽरुणा — पल्लवं = किसलयम् इव, अरुणा = रक्तवर्णा च (पक्षे—प्रनृत्ता: नीलकण्ठा: = मयूरा:, यस्यां सा पल्लवै: अरुणा च), अमृतमथनवेलेव—अमृताय = पीयूषाय, यत् मथनं = समुद्रविलोडनम्, तस्य वेला = समय: इव, श्रीद्रुमोपशोभिता — श्री: = लक्ष्मी:, द्रुम: = कल्पवृक्ष:, ताभ्याम् उपशोभिता = शोभासम्पन्ना, वारुणीपरिगता—वारुण्या = मदिरया, परिगता = सहिता च (पक्षे — श्रीद्रुमोपशोभिता—श्रीद्रुमै: = लक्ष्मीवृक्षै:, विल्ववृक्षै:, उपशोभिता = शोभासम्पन्ना, वारुणीपरिगता = पश्चिमदिक्प्राप्ता च), प्रावृडिव = वर्षर्तु: इव, घनश्यामला—घनै: = मेघै:, श्यामला = कृष्णवर्णा, अनेकशतह्रदाऽलंकृता—अनेका: शतह्रदा: = विद्युत:, ताभि: अलंकृता = भूषिता (पक्षे–अनेकशतानि = बहुशतानि, ये ह्रदा: = अगाधजला:, जलाशया:, तै: अलंकृता = भूषिता च), चन्द्रमूर्तिरिव—इन्दुदेह: इव, सततं = निरन्तरम्, ऋक्षसार्थानुगता—ऋक्षाणां = नक्षत्राणां, सार्थ: = समूह:, तेन अनुगता = अनुसृता, हरिणाऽध्यासिता—हरिणेन = मृगचिह्नेन, अध्यासिता = आश्रिता च (पक्षे—ऋक्षसार्थाऽनुगता—ऋक्षेण = भल्लूकेन सार्धेन, अनुगता = अनुसृता, हरिणाऽध्यासिता—हरिणै: = मृगै:, अध्यासिता = आश्रिता च), राज्यस्थितिरिव = राज्यमर्यादा इव, चमरमृगबालव्यजनोपशोभिता—चमरमृगाणां = चमरहरिणानां, बालानां = शिरोरुहाणां, व्यजनानि = चामराणि; तै: उपशोभिता = शोभायमाना, समदगजघटापरिपालिता च—समदा = मदसहिता, या गजघटा = हस्तिसमूह:, तया परिपालिता = संरक्षिता च (पक्षे—चमरमृगै: = चमरहरिणै:, तेषां बालै: = शिरोरुहै:, व्यजनै: = व्यजनप्रकृतिभिस्तालादिवृक्षै:, उपशोभिता, समदै: = मदजलभरितै:, गजै: = हस्तिभि:; परिपालिता = संरक्षिता च), गिरितनयेव = गिरितनया पार्वती इव, स्थाणुसङ्गता—स्थाणुना = शिवेन, सङ्गता = सहिता, मृगपतिसेविता—मृगपतिना = सिंहेन, सेविता = आश्रिता च (पक्षे — स्थाणुभि: = शाखापत्त्ररहिताभि: तरुभि:, सङ्गता = सहिता, मृगपतिभि: = सिंहै:, सेविता = आश्रिता च ।

व्याख्या (हिन्दी)—वह विन्ध्याटवी प्रेताधिपति यमराज की पुरी के समान सदा रहने वालों के लिए मृत्यु से भयंकर, महिष (यमराज के वाहन) (पक्ष में—जंगली भैंसों) से अधिष्ठित है । जैसे युद्ध में सेना वाणासन (धनुष) पर बाण चढ़ाकर सिंहनाद (विजय-गर्जना) करती है उसी प्रकार यह विन्ध्याटवी

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

भी बाण और असन (सर्ज) के वृक्षों पर निवास करने वाले शिलीमुखों (भ्रमरों) वाली तथा सिंह की गर्जना से पूरित है। युद्ध में खड्ग (तलवार) चलाती हुई रक्त से भीषण आकृति वाली कात्यायनी दुर्गा की भाँति यह विन्ध्याटवी खड्गों (गैंडों) से भयंकर तथा रक्तचन्दन के वृक्षों से अलंकृत है। कर्णीसुत कथा में जैसे विपुल और अचल नामक मित्र तथा शश नामक प्रधानमन्त्री का उल्लेख है वैसे ही इस विन्ध्याटवी में विपुल और अचल नाम के पर्वत शशों (खरगोशों) से युक्त है। कल्प के अन्त (प्रलय) की सन्ध्या में नृत्य करते हुए नीलकण्ठ (शिव) के समान यह भी नीलकण्ठों (पक्षी) से युक्त और पल्लवों से लाल वर्ण वाली है। अमृतमथन वेला की भाँति यह भी श्रीद्रुम (वेल के वृक्ष) से शोभित वारुणी (पश्चिम दिशा) वाली है। वर्षा ऋतु जैसे घन (मेघ) से श्याम वर्ण और अनेक शतह्रदाओं (बिजलियों) से अलंकृत है, वैसे ही यह विन्ध्याटवी भी घने वृक्षों की छाया से श्याम वर्ण और सैकडों ह्रदों (गहरे जलाशयों) से पूर्ण है। अनेक ऋक्षों (नक्षत्रों) से अनुसृत और हरिण (मृगचिह्न) से लाञ्छित चन्द्रमूर्ति की भाँति यह भी अनेक ऋक्षों (भालुओं) और हरिणों (मृगों) से आश्रित है। जैसे राज-मर्यादा चमरमृग के बालों से निर्मित चमर से सुशोभित और मदयुक्त हाथियों से परिपालित है उसी भाँति यह विन्ध्याटवी भी चमरमृगों से, उनके रोओं से तथा व्यजन (पंखा) निर्माण योग्य ताड़वृक्षों से शोभायमान है तथा मदयुक्त हाथियों के झुण्ड से परिपालित है। जैसे शैलपुत्री (पार्वती) सदा स्थाणु (शिव) के साथ रहती हुई अपने वाहन सिंह द्वारा सेवित हैं उसी प्रकार यह विन्ध्याटवी भी शाखा और पत्र-रहित ठूंठ वृक्षों युक्त और सिंहों के द्वारा सेवित है।

विशेष—प्रस्तुत गद्यखण्ड में अनेक पौराणिक उपमानों को श्लेष द्वारा प्रस्तुत करते हुए पूर्णोपमा अलंकार का गुम्फन किया है।

(१०) दुर्योधन इवोपलक्षित-शकुनिपक्षपातः, नलिननाभ इव वनमालोपगूढः, नवजलधरव्यूह इव नभसि दर्शितोन्नतिः, अखिलभुवन-तलावलोकनप्रासाद इव वनदेवतानाम्, अधिपतिरिव दण्डकारण्यस्य, नायक इव सर्ववनस्पतीनाम्, सखेव विन्ध्यस्य, शाखाबाहुभिरुपगुह्येव विन्ध्याटवीमवस्थितो महान् जीर्णः शाल्मलीवृक्षः।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट अपने प्रकृति एवं भौगोलिक वर्णन-क्रम में शुक के जन्मस्थल शाल्मली वृक्ष का आलंकारिक परिचय प्रस्तुत करते हुए कहते हैं—

व्याख्या—(संस्कृत)—दुर्योधन इव=धृतराष्ट्रज्येष्ठपुत्रः इव, उपलक्षित-शकुनिपक्षपातः—उपलक्षितः=दर्शितः, शकुनौ=तदाख्ये स्वमातुले, पक्षपातः =आसक्तिः, यस्य स तादृशः, शाल्मलीतरुपक्षे—उपलक्षितः=दृष्टः, शकुनीनां =पक्षिणां, पक्षाणां=छन्दानां, पातः=पतनम्, यस्मिन्सः तादृशः, नलिननाभः =कृष्णः पद्मनाभः इव, वनमालोपगूढः—वनमालया=वनपुष्पमालया, उपगूढः=आलिङ्गितः, वृक्षपक्षे—वनमालया=अरण्यपंक्त्या, उपगूढः= आच्छादितः, नवजलधरव्यूहः इव—नवाः=नूतनाः, ये जलधराः=मेघाः, तेषां व्यूहः=समूहः, तदिव, नभसि=श्रावणे, दर्शितोन्नतिः—दर्शिता=प्रकाशिता, उन्नतिः=उच्छ्रायः, येन सः; वृक्षपक्षे—नभसि=आकाशे, दर्शितोन्नतिः, अखिलभुवनतलावलोकनप्रासाद इव वनदेवतानाम्—वनदेवतानां=विपिनाऽधि-देवीनाम्, अखिलं=समस्तम्, यत् भुवनतलं=लोकतलम्, तस्य अवलोकनं =निरीक्षणं, तदर्थं विनिर्मितं यत् प्रासादः=देवगृहम्, तदिव, दण्डकारण्यस्य =दण्डकाख्यस्य वनस्य, अधिपतिः=स्वामी इव, सर्ववनस्पतीनाम्—सर्वेषां= सकलानां, वनस्पतीनां=पुष्परहितानां फलमात्रयुक्तानां वृक्षाणाम्, नायक इव=अध्यक्ष इव, विन्ध्यस्य=दक्षिणपर्वतस्य, सखेव=मित्र इव, शाखा-बाहुभिरुपगुह्येव—शाखा एव बाहवः=भुजाः, तैः उपगुह्य=आलिङ्ग्य इव, विन्ध्याटवीम्, अवस्थितः=विद्यमानः, महान्=विशालः, जीर्णः= पुराणः, शाल्मलीवृक्षः=स्थिरायुतरुः, अस्तीति शेषः ('पिच्छिला पूरणी मोचा स्थिरायुः शाल्मलीर्द्वयोः' इत्यमरः)।

व्याख्या (हिन्दी)—वह शाल्मली वृक्ष, जिस प्रकार दुर्योधन अपने मामा शकुनि के प्रति पक्षपात करता देखा जाता था वैसे ही विभिन्न पक्षियों के पक्षपात (पंखपतन) से युक्त देखा जाता है। जिस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण सदा वनपुष्पमाला से अलंकृत दीख पड़ते हैं उसी प्रकार वह शाल्मली वृक्ष भी सदा वनमाला (अरण्यपंक्ति) से अलंकृत है। जैसे श्रावण मास में मेघों की उन्नति दीख पड़ती है वैसे ही वह शाल्मली वृक्ष भी घना और आकाश में उन्नत दीख पड़ता है। वह समस्त भुवनतल को देखने के लिए बने वनदेवताओं के अत्युच्च प्रासाद के समान है। वह मानो दण्ड-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कारण्य का स्वामी एवं समस्त वनस्पतियों का नायक है। वह मानों विन्ध्य पर्वत का मित्र है जो अपने शाखारूपी भुजाओं से विन्ध्याटवी को आलिङ्गित किये हुए है। ऐसा एक विशाल पुराना शाल्मली वृक्ष उस विन्ध्याटवी में स्थित है।

विशेष—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट ने उपमा, उत्प्रेक्षा और श्लेष की झड़ी लगा दी है। पद-पद पर अलंकार-प्रयोग होते हुए भी भाषा में सरलता, स्वाभाविकता एवं सौन्दर्यानुभूति अव्यवहित है।

(११) निदाघदिवसमिव सतताविर्भूत-मृगतृष्णम्, विद्याधरमिव मानसवेगम्, पराशरमिव योजनगन्धानुसारिणम्, घटोत्कचमिव भीम-रूपधारिणम्, अचलराजकन्यका-केशपाशमिव नीलकण्ठ-चन्द्रकाभरणम्, हिरण्याक्ष-दानवमिव महावराह-दंष्ट्राविभिन्न-वक्षःस्थलम्, अतिरागिण-मिव कृत-बहु-बन्दी-परिग्रहम्, पिशिताशनमिव रक्तलुब्धकम्, गीत-कलाविन्यासमिव निषादानुगतम्, अम्बिका-त्रिशूलमिव महिष-रुधि-रार्द्रकायम्, अभिनवयौवनमपि क्षपित-बहुवयसम, कृत-सारमेय-संग्रह-मपि फलमूलाशनम्, कृष्णमप्यसुदर्शनम, स्वच्छन्दचारमपि दुर्गैकशरणम्, क्षितिभृत्पादानुवर्त्तिनमपि राजसेवानभिज्ञम्, अपत्यमिव विन्ध्याचलस्य, अंशकाऽवतारमिव कृतान्तस्य, सहोदरमिव पापस्य, सारमिव कलि-कालस्य भीषणमपि महासत्त्वतया गभीरमिवोपलक्ष्यमाणम्, अनभि-भवनीयाकृतिम्, मातङ्गनामानं शबरसेनापतिमपश्यम्।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में महाकवि बाणभट्ट शुक के मुख से शबर-सेनापति के शारीरिक सौष्ठव का वर्णन कर रहे हैं।

व्याख्या (संस्कृत)—निदाघदिवसम् = ग्रीष्मदिवसम् इव, सतताविर्भूत-मृगतृष्णम्—सततं = निरन्तरम्, आविर्भूता = प्रादुर्भूता, मृगतृष्णा = मरीचिका, सूर्यरश्मिषु सलिलभ्रमः, यस्य तम्; पक्षे—सततं आविर्भूता, मृगेषु = हरिणेषु, तृष्णा = हननाभिलाषः, यस्य तम्, विद्याधरमिव = देवयोनिविशेषम् इव, मानसवेगम्—मानेन = अहङ्कारेण, सवेगम् = वेगसहितम्, तीव्रगतिसहितम्, अथवा मानसस्य = मनसः इव, वेगः = जवः, यस्य तम्, पराशरमिव = व्यासजनक-मृषिविशेषमिव, योजनगन्धाऽनुसारिणम्—योजनगन्धा = धीवरकुमारी सत्यवती, ताम् अनुसरति = अनुरुणद्धि, तच्छीलम्; पक्षे—योजनात् = क्रोशचतुष्टयात्,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

गन्धम् = आखेटपश्वामोदम्, अनुसरतीति तच्छीलम्, घटोत्कचमिव = हिडिम्बा-सुतं भीमसेनपुत्रम् इव, भीमरूपधारिणम् — भीमस्य = भीमसेनस्य, रूपं धारयति = तमनुहरति, तच्छीलम् (पुत्रः पितुः सादृश्यं प्राप्नोति इति भावः); पक्षे — भीमं = भयङ्करम्, यत् रूपम् = आकारम्, तद्धारणशीलम्, अचलराजकन्यका — अचलराजस्य = पर्वतराजस्य हिमालयस्य, कन्यका = कुमारी पार्वती, तस्या केशपाशमिव = कचकलापमिव, नीलकण्ठचन्द्रकाभरणम् — नीलकण्ठस्य = शिवस्य, चन्द्रकः = इन्दुः, स एव आभरणं यस्य तम्; पक्षे — नीलकण्ठस्य = मयूरस्य, चन्द्रकः = मेचकः, स एव आभरणं यस्य तम्, हिरण्याक्षदानवमिव — हिरण्याक्षः = हिरण्यकशिपुसोदरः, स चाऽसौ दानवः = दनुपुत्रः, तम् इव; महावराहदंष्ट्राविभिन्नवक्षःस्थलम् — महावराहस्य = आदिवराहस्य, श्रीविष्णोस्तृतीयावतारस्य, दंष्ट्राभिः = विशालदशनैः, विभिन्नं = विदारितम्, वक्षःस्थलम् यस्य तम्; पक्षे — महावराहाणाम् = विशालवनशूकराणाम्, दंष्ट्राभिः = विशालदशनैः, विभिन्नं = विदारितम्, वक्षःस्थलम्, यस्य तम्, अतिरागिणमिव = अतिशयविषयाऽभिलाषिणमिव, कृतबहुबन्दीपरिग्रहम् — कृतः = विहितः; बहुबन्दीनाम् = प्रचुरनिरुद्धस्त्रीजनानाम्, परिग्रहः = स्वीकारः, येन तम्; पक्षे — कृतः, बहूनां = प्रचुराणां, बन्दिनाम् = स्तुतिपाठकानाम्, परिग्रहो येन तम्; पिशिताशनमिव — पिशितं = मांसम्, अशनं = भक्षणम्, यस्य तम् = मांसभक्षकम् इव, रक्तलुब्धकम् — रक्ते = रुधिरे, लुब्धकम् = लोलुपम्; पक्षे — रक्ताः = अनुरक्ताः, लुब्धकाः = व्याधाः, यस्मिन् तम्, गीतकलाविन्यासमिव = गानशिल्पविशेषस्थितिम् इव, निषादाऽनुगतम् — निषादेन = षड्जादिस्वरान्यतमेन, अनुगतम् = अनुसृतम्; पक्षे — निषादैः = मातङ्गैः (चाण्डालैः धीवरैः वा), अनुगतम्; अम्बिकात्रिशूलमिव — अम्बिकायाः = गौर्याः दुर्गादेव्याः, यत् त्रिशूलम् = शस्त्रविशेषम्, तत् इव, महिषरुधिरार्द्रकायम् — महिषस्य = एतन्नामकस्य असुरस्य, रुधिरं = रक्तम्, तेन आर्द्रः = क्लिन्नः, कायः = शरीरं, यस्य तम्; पक्षे — महिषाणां = सैरिभानां, रुधिरेण आर्द्रकायम्, अभिनवयौवनमपि — अभिनवं = नूतनं, यौवनं = तारुण्यं, यस्य तं तादृशमपि, क्षपितबहुवयसं — क्षपितानि = क्षयीकृतानि, व्यतीतानि, बहूनि वयांसि = बाल्ययौवनाद्यवस्थाः, येन तं तादृशम्, कृतसारमेयसंग्रहमपि — कृतः = विहितः, साराणां = घनानां, मेयानां = परिमातुं योग्यानां, शस्यानाम् = अन्नादीनां च, संग्रहः = एकत्रीकरणं, येन तं तादृशमपि, फलमूलाशनम् — फलमूलान्येव अशनं = भक्षणं, यस्य तं तादृशम्; विरोध-

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

परिहारपक्षे—कृतः सारमेयाणां=शुनां, संग्रहो येन तं तादृशमिति, कृष्णमप्यसुदर्शनम्—कृष्णं=विष्णुम् अपि, असुदर्शनम्=अविद्यमानं सुदर्शनं चक्रम्, यस्य तं तादृशम्; अत्रापि विरोधपरिहारपक्षे—कृष्णं=श्यामवर्णम्, अत एव असुदर्शनम्=सुन्दरदर्शनरहितम्, भयङ्करमिति भावः, स्वच्छन्दचारमपि—स्वच्छन्देन=स्वेच्छया, चारः=सञ्चरणम्, गमनम्, यस्य तं तादृशमपि, दुर्गैकशरणम्—दुर्गं=दुर्गमस्थानं गिर्यादिकम् एव, एकमात्रं शरणं=रक्षणस्थानम्, यस्य तं तादृशम्; अत्रापि विरोधपरिहारस्तु—दुर्गा=गौरी एव, एकं=मुख्यं, शरणं=रक्षित्री, आराध्या, यस्य तं तादृशम्, क्षितिभृत्पादानुवर्तिनमपि—क्षितिं=पृथिवीं, बिभर्त्ति=पुष्णाति, इति क्षितिभृत्=राजा, तत्पादौ अनुवर्तते=अनुसरति, तच्छील इति, तं तादृशमपि, तथाविधोऽपि, राजसेवानभिज्ञम्—राजसेवायां=नृपपरिचर्यायां, अनभिज्ञम्=अज्ञातारम्; अत्रापि विरोधः, परिहारपक्षे—क्षितिं=पृथिवीं, धारयति इति क्षितिभृत्=पर्वतः, तस्य पादाः=प्रत्यन्तपर्वताः, तान् अनुवर्तते तच्छीलः तम् अत एव राजसेवाऽनभिज्ञम्, अपत्यमिव=सन्तानमिव, विन्ध्याचलस्य=एतदाख्यस्य पर्वतस्य, अंशकावतारमिव=एकभागावतारम् इव, कृतान्तस्य=यमराजस्य, पापस्य=कलुषस्य, सहोदरमिव=सोदरमिव, जीवानां तीव्रयातनाविधायित्वात्, कलिकालस्य सारमिव=कलियुगस्य स्थिरांशतम् इव, भीषणं=भयानकम् अपि, महासत्त्वतया=उदात्तस्वभावत्वेन प्रबलोत्साहतया, गभीरमिव=अस्फुटाशयमिव, उपलक्ष्यमानम्=परिदृश्यमानम्, अनभिभवनीयाकृतिम्—अभिभवितुं=तिरस्कर्तुम्, अशक्या=अशक्तिविषया, आकृतिः=आकारः, यस्य तं तादृशम्, मातङ्गनामानं=मातङ्गसंज्ञकम्, शबरसेनापतिम्=शबरसैन्याऽध्यक्षम्, अपश्यम्=व्यालोकयम् ।

व्याख्या (हिन्दी)—ग्रीष्म के दिन की भाँति निरन्तर मृगतृष्णा (मृगों को मारने की लिप्सा) को प्रकट करने वाले, मानस में वेग वाले विद्याधरों के समान अभिमानयुक्त वेग वाले, योजनगन्धा सत्यवती का अनुसरण करने वाले पराशर ऋषि के समान योजन पर्यन्त से आखेट-पशु की गन्ध का अनुसरण करने वाले, अपने पिता भीम की आकृति का अनुसरण करने वाले घटोत्कच (हिडिम्बापुत्र) के समान भीम (भयंकर) रूप को धारण करने वाले, पार्वती के केशजाल को अलंकृत करने वाले महादेव के चन्द्ररूप आभरण के समान नीलकण्ठ (मयूर) के चन्द्रक (पंख) के आभरण से अलंकृत,

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

हिरण्याक्ष दानव के समान महावराह के विकराल दाढ से विदीर्ण वक्षःस्थल वाले, अतिरागी विषयी पुरुष जैसे बहुत-सी वन्दी बनायी गई स्त्रियों का संग्रह करता है वैसे ही बहुत-से बन्दिजनों (चारणों) से घिरे हुए, निषाद (स्वर-विशेष) से अनुगत गायन-विद्या की भाँति निषादों (व्याधों) से अनुसरण किये जाते हुए, महिषासुर के रुधिर से आर्द्र भगवती दुर्गा के त्रिशूल की भाँति जंगली भैंसों के रुधिर से आर्द्र शरीर वाले, नवयौवन वाला होकर भी वहुत वयस् (उम्र) का क्षय करने वाले (विरोध-परिहार–बहुत-से वयस (पक्षियों) का क्षय (संहार) करने वाले), बहुत-से सारमेय (धन-धान्य) का संग्रह करके भी फलमूल मात्र अशन (भोजन) करने वाले (विरोध-परिहार—वहुत-से सारमेयों (जंगली भैंसों) का शिकार करके भी फलमूलाशनी), कृष्ण (वासुदेव सदृश श्यामवर्ण) होते हुए भी असुदर्शन (सुदर्शन चक्र रहित), (विरोध-परिहार—असुदर्शन–सुन्दर दर्शन रहित भयंकर आकृति वाले), स्वच्छन्दता से सञ्चरण करने वाला (निर्भय विहरणशील) होकर भी दुर्ग (किला) का मात्र आश्रय ग्रहण करने वाले (विरोध-परिहार—केवल देवी दुर्गा की भक्ति करने वाले), राजा के चरणानुवर्ती होकर भी राजसेवा में अनभिज्ञ (विरोध-परिहार—क्षितिभृत् = पर्वत के पाद (प्रत्यन्त पर्वत) का अनुवर्ती होने से राजसेवा से अनभिज्ञ), विन्ध्याचल पर्वत के पुत्र के समान (अत्यन्त कठोर शरीर वाला), जीवों का संहार करने में यमराज के अंशावतार के समान, निरन्तर अधर्म का उत्पादन करने से कलियुग के सारतत्त्व के समान, पाप के सोदर भाई के समान, भीषण (भयकंर) होते हुए भी महासत्त्व (अत्यन्त प्रतापी) होने से गम्भीर जैसा दीख पड़ने वाले, किसी भी प्रकार तिरस्कृत न किये जाने योग्य आकृति वाले, मातङ्ग नामक शवरसेनापति को मैंने देखा। उसका नाम तो पीछे सुन लिया।

विशेष—प्रस्तुत गद्यखण्ड में शुक ने शबरसेनापति को जैसा देखा उसका वर्णन विभिन्न उपमाओं, उत्प्रेक्षाओं, श्लेष, विरोधाभास आदि अलंकारों के सहयोग से क़िया है।

(१२) यत्र च मलिनता हविर्धूमेषु न चरितेषु, मुखरागः शुकेषु न कोपेषु, तीक्ष्णता कुशाग्रेषु न स्वभावेषु, चञ्चलता कदलीदलेषु न मनःसु, चक्षूरागः कोकिलेषु न परकलत्रेषु, कण्ठग्रहः कमण्डलुषु न सुरतेषु, मेखलाबन्धो व्रतेषु नेर्ष्याकलहेषु, स्तनस्पर्शो होमधेनुषु न

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

कामिनीषु, पक्षपातः कृकवाकुषु न विद्याविवादेषु, भ्रान्तिरनलप्रदक्षिणासु न शास्त्रेषु, वसुसङ्कीर्त्तनं दिव्यकथासु न तृष्णासु, गणना रुद्राक्षवलयेषु न शरीरेषु, मुनि-बाल-नाशः क्रतु-दीक्षया न मृत्युना, रामानुरागो रामायणेन न यौवनेन, मुखभङ्गविकारो जरया न धनाभिमानेन।

प्रसङ्ग—प्रस्तुत गद्यखण्ड में शुक शूद्रक की सभा में जाबालि मुनि के आश्रम की विशेषताओं का परिचय देते हुए कहता है—

व्याख्या (संस्कृत)—यत्र = यस्मिन् आश्रमे, मलिनता = मालिन्यं; चरितपक्षे—पापकालुष्यं, हविर्धूमेषु = चरुपुरोडाशादियज्ञधूमेषु, न चरितेषु = जनानां आचारेषु (लोकव्यवहारेषु नाऽधर्माचरणमिति भावः), मुखरागः—मुखे = वदने, रागः = लौहित्यम्, शुकेषु = कीरेषु, कोपेषु = क्रोधेषु, न, मुखरागः = क्रोधजनितमुखमारुण्यम्, तीक्ष्णता = निशितता, कुशाऽग्रेषु = दर्भमूलेषु, जनानां स्वभावेषु = प्रकृतिषु, न, तीक्ष्णता = क्रूरता, चञ्चलता = चपलता, कदलीदलेषु = रम्भापत्त्रेषु एव, न मनःसु = जनानां चित्तेषु चञ्चलता न, आश्रमे सर्वेषां मनसि स्थिरताऽस्तीति भावः, चक्षूरागः—चक्षुषोः = नेत्रयोः, रागः = लौहित्यम्, कोकिलेषु = पिकेषु एव, परकलत्रेषु = परभार्यासु, चक्षूरागः = नयनाऽनुरागः, नो वर्तते, कण्ठग्रहः—कण्ठे = ऊर्ध्वभागे, ग्रहः = ग्रहणम्, कमण्डलुषु = कुण्डीषु एव, न, सुरतेषु = मैथुनेषु, कण्ठग्रहः = कण्ठालिङ्गनं, न = नास्तीति भावः, तापसानां = जितेन्द्रियत्वात्, मेखलाबन्धः—मेखलायाः = मौञ्ज्यादेः, बन्धः = बन्धनम्, व्रतेषु = उपनयनादिषु एव, न, ईर्ष्याकलहेषु—ईर्ष्यया = परसंसर्गजनितया अक्षान्त्या, कलहेषु = विग्रहेषु, मेखलाबन्धः = रसनया बन्धः, न = नास्ति, स्तनस्पर्शः = कुचामर्शनं, होमधेनुषु = हवनार्थकनवप्रसूतासु गोषु, दोहनप्रसङ्गे एव, न कामिनीषु = रमणीषु रमणप्रसङ्गे स्तनस्पर्शः न, पक्षपातः—पक्षाणां = पतत्त्राणां, पातः = पतनम्, कृकवाकुषु = कुक्कुटेषु एव, विद्याविवादेषु = वेदादिशास्त्रार्थेषु, न पक्षपातः = पक्षद्वये एकपक्षतरासक्तिः, भ्रान्तिः = भ्रमणम्, अनलप्रदक्षिणासु = यज्ञाग्निप्रदक्षिणासु, शास्त्रेषु = वेदादिशास्त्रेषु, भ्रान्तिः = मिथ्याज्ञानम्, निर्भ्रान्तज्ञानसम्पन्नत्वात् न, वसुसङ्कीर्तनम्—वसूनां = ध्रुवादिअष्टवसुदेवानाम्, सङ्कीर्तनम् = वर्णनम्, दिव्यकथासु एव श्रूयते, तृष्णासु = विषयाणां स्पृहासु, वसुसङ्कीर्तनम् = धनप्रशंसनम्, न = नास्ति, गणना = संख्याकरणम्, रुद्राक्षवलयेषु = रुद्राक्षसमूहेषु, शरीरेषु =

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

देहेषु, शरीरादिपरिग्रहविशेषेषु, गणना = आदरः, न, तपस्विनां देहगेहादिविषयेषु ममत्वाभावात्, मुनिबालनाशः = तपस्विकेशध्वंसः = मुण्डनम्, क्रतुदीक्षया = यज्ञनियमेन, मृत्युना = मरणेन हेतुना, बालनाशः = शिशुनाशः, न। रामानुरागः—रामे = दाशरथौ, अनुरागः = भक्तिः, रामायणेन = रामचरित्रवर्णनात्मकग्रन्थेन, यौवनेन = तारुण्येन हेतुना, रामायाम् = स्त्रियां, अनुरागः = प्रणयः, न। मुखभङ्गविकारः—मुखे = वदने, भङ्गविकारः = भेदविकृतिः, बलिरूपः, जरया = वार्द्धक्येन, धनाभिमानेन = द्रव्यकोषादिदर्पेण, मुखभङ्गविकारः नास्ति इति।

व्याख्या (हिन्दी)—जिस आश्रम में मलिनता हविधूम में ही देखी जाती थी, व्यक्तियों (तपस्वियों) के चरित्र में पापाचरण (कालुष्य) का अभाव था। जहाँ तोते की चोंच में ही मुखराग देखा जाता था, शान्त स्वभाव ऋषियों के मुख पर क्रोधजन्य राग (लालिमा) का अभाव था। तीक्ष्णता कुशा के नोंक में ही विद्यमान थी, मुनिजनों के स्वभाव में तीक्ष्णता (क्रूरता) नहीं थी। चञ्चलता केले के पत्ते में ही थी, चित्त स्थिर होने के कारण मन में चपलता का अभाव था। कोयल के नेत्रों में ही नेत्रराग था, परस्त्रीदर्शनजन्य नेत्रराग का जहाँ अभाव था। कमण्डलु को ही गले से पकड़ा जाता था, अन्यत्र स्त्रीप्रसङ्गजन्य कण्ठग्रह का अभाव था। उपनयन आदि संस्कारों में ही मेखलाबन्ध (मौञ्जीबन्धन) होता था, ईर्ष्या-कलह आदि जन्य मेखलाबन्ध का अभाव था। होमगायों को दूहने के प्रसङ्ग में ही स्तनस्पर्श होता था, रमणियों में नहीं। पक्षपात (पंखों का गिरना) मुर्गों में ही होता था, विद्याविवादों में कोई पक्षपात नहीं होता था। अग्नि-परिक्रमा में ही भ्रान्ति (भ्रमण कार्य) होता था, शास्त्रों में भ्रम (मिथ्या ज्ञान) नहीं था। दिव्यकथाओं में ही वसुओं का कीर्तन (उल्लेख) होता था, बसु (धन) का गुणगान तृष्णा के लिए नहीं होता था। गणना रुद्राक्षमाला पर ही होती थी, शरीरों में गणना (आदर) नहीं था। मुनिबालनाश (क्षौरकर्म) यज्ञदीक्षा में ही था, मृत्यु से मुनिबालनाश (शिशुमृत्यु) नहीं था। रामायण कथा के द्वारा राम (दाशरथी राम) में अनुराग था, स्त्रियों के प्रति रागानुराग (ललना-प्रेम) नहीं था। चेहरे पर झुर्रियों से विकार बुढ़ापे के कारण था, धन के अभिमान से मुखभङ्ग विकार नहीं था।

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri

Rekha

"શાસ્ત્રાભિજ્ઞો: સમોધુરન્ધ: પાંડુચરિતોગી.તીરવાદે"

"ક્રોતવગુણયુગ્મધીરેણવપુ પ્રતીરવાદચાર્યઆરાધ્યમ્"
૩૮પદ્દા। વિદ્વાનોપયુ ગો॥ કેટલતો૨૩૦ વાર:॥

Kirtikant Sharma Collection, Najafgarh